ओ३म्
ओ३म् विश्वानि देव सवितर् दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव ॥
मङ्गलम्
ओ३म् विश्वानि देव सवितर् दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव ॥
लेखक—भीमसेन दीवान

प्रकाशक
शान्ता दीवान
शान्ता कुञ्ज
न्यू कालोनी गुड़गाँव

प्रथम संस्करण १०००
१९७७ वि० सं० २०३४

मूल्य २ रु० लागत मात्र

मुद्रक
सैनी प्रिण्टर्स
पहाड़ी धीरज, देहली-११०००६
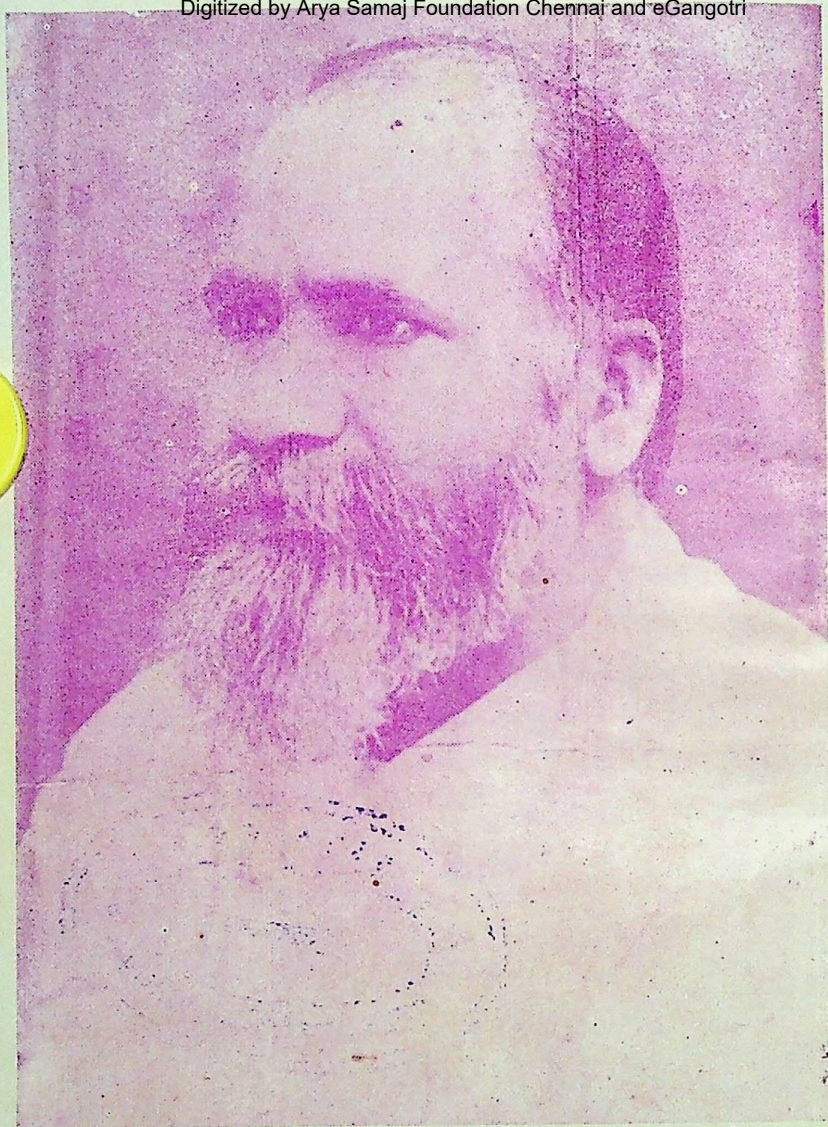
स्वर्गीय महात्मा हर भजन लाल जी

समर्पण

मुझे स्वयं पूरी तरह याद नहीं कि किसी माननीय सज्जन ने पचास वर्ष पूर्व आध्यात्मिक विद्या का क्या प्रसाद दिया था १६२८, की बात है जब मेरे पूज्य पिता जी ने अपने एक सच्चे सखा को मुझे वैदिक धर्म के ग्रन्थ पढ़ाने समझाने के लिए स्वर्गीय पं० हर भजन लाल के हवाले किया था विशेषता यह कि मुझे, गुरु कुटिया में नहीं जाना था पर उन्हें हमारे यहाँ रहकर मेरी प्रात: से सायं तक देख भाल करनी थी अपने साथ व्यायाम, मिल करके भोजन, मित्र सहायक हितैषी की रूप रेखा में जीवन निर्माण कराना था पचास वर्ष पश्चात, डाले हुए वह संस्कार, उपज रहे हैं तथा उनका अंकुर अब फूट रहा है. उनके चरणों में सत्यार्थ प्रकाश ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, न्याय वैशेषिक सांख्य आदि शास्त्र उपनिषद इत्यादि पढ़ने का अवसर प्राप्त किया। उनका सादा जीवन, तर्क, अपनी कमाई से प्राप्त सत्य ज्ञान, भक्ति भण्डार व कल्याण मार्ग मेरे पथ प्रदर्शक बनते गए परिणामत : मैं आज अनुभव कर सकता हूं कि किसी का प्रयास व्यर्थ नहीं जाता परिश्रम व आशीर्वाद समय पाकर मार्ग लेता है, इन चंद शब्दों के साथ पूर्ण श्रद्धा सहित एक ही मंत्र के विचार गुरु चरणों में समर्पित करता हूं भगवान उनकी आतमा को किए उपकारों के लिए सदगति प्रदान करें

विनीत भीमसैन दीवान

शान्ता कुञ्ज न्यू कालोनी गुड़गाँवा
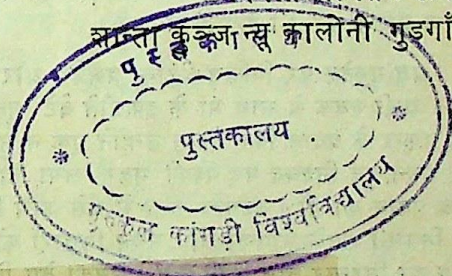
गुरुदेव परिचय

चन्द्रवती सेठी शास्त्री

मुझे पूर्ण विश्वास है कि अनेक नये तथा पुराने पाठक मेरे पूज्य गुरुदेव के नाम और काम से अवश्य परिचित होंगे। यद्यपि वे वहुत अधिक दीर्घ जीवन का वरदान लेकर इस संसार में नहीं आये थे तो भी अपने स्वल्प जीवन में उन्होंने जो कुछ किया यह चिरस्मरणीय वना रहेगा।

मेरे पूज्य गुरुजी का शुभ नाम श्री हरभजनलालजी बानप्रस्थी था वे हमारी पवित्र जन्मभूमि जामपुर (डेरागाजी खां) की एक अद्भुत विभूति तथा निधि थे। उनका जन्म एक साधारण मध्यवर्गीय माता पिता के घर हुआ शिक्षा मात्र इतनी उपलब्ध थी कि एक साधारण इलैक्ट्रीशियन की नौकरी प्राप्त कर सके। उनका विवाह एक साधारण ग्रामीण तथा अनपढ़ अपने गाँव की कन्या हरदेवी से हुआ। सौभाग्य से उन्हें अपनी पत्नी को शिक्षित बनाने की अन्त: प्रेरणा हुई और वे पति के साथ २ एक योग्य शिक्षक तथा मास्टर बन गये। परिणाम स्वरूप गृहस्थ के वासनामय आकर्षणों का मोह त्याग कर पत्नी को फिरोजपुर के स्कूल वोर्डिंग में रखकर शिक्षा दीक्षा प्रारम्भ किया। पत्नी प्रतिभाशालिनी सिद्ध हुई। शीघ्र ही आवश्यक शिक्षा प्राप्त करके वे एक सफल नर्स बनीं। दुर्भाग्य वश गर्भवती हुई और स्वयं एक मढ़ दाई द्वारा प्रसवकाल में काल कवलित हो गईं और साथ-साथ कुल का दीपक बालक का भी देहान्त हो गया।

अब गुरुदेव पर विचित्र वैराग्य प्रभुप्रेम और समाज सेवा की लगन पैदा हुई। अभी युवक थे साथ मां के इकलौते वेटे पुनर्विवाह के लिए मां रोई, सब प्रकार के प्रयत्न किए किन्तु उन्होंने एक न सुनी। अन्त में नौकरी छोड़ कर अपने दृढ़ निश्चय पर पक्की मुहर लगा दी। प्रभु ने उन्हें विलक्षण बुद्धि पदान की थी। वक्तृत्व कला में जैसे जन्म सिद्ध पारंगत थे। हम जामपुर निवासी उनके भाषणों और उच्च विचारों को सुनकर अपने कर्णरन्ध्र और हृदय को निरन्तर तृप्त करने लगे। उनका वेष दिनचर्या, खानपान असाधारण हो गया। जब दाढ़ी मूंछ वढ़ा ली तो ऐसा लगता था कि दूसरे स्वामी श्रद्धानन्द का पृथिवी पर अवतरण हुआ है।

ऋषिदयानन्द कृत ग्रन्थों के प्रति उनकी अनन्य-अटूट श्रद्धा तथा आस्था थी। जहाँ स्वयं उनके प्रतिदिन रात समर्पित थे वहां अध्यापन कार्य द्वारा

ऋषिकृत ग्रन्थों का खूब प्रचार तथा प्रसार किया और अनेक ऋषि भक्त आर्य शिष्य शिष्याओं की सृष्टि की। मैं भी उन सौभाग्यशाली शिष्य शिष्याओं में से एक हूं। न केवल वे मेरे एक गुरु थे प्रत्युत वात्सल्य द्वारा पितृस्वरूप धारणा करके मेरी तन मन धन से सेवा की। हमारे गांव में मात्र प्राइमरी स्कूल तक शिक्षा क्रम सीमित था। उन्होंने मुझे शास्त्रज्ञान के साथ २ पंजाब यूनीवर्सिटी की हिन्दी प्रभाकर और संस्कृत में शास्त्री तक पढ़ने की पवित्र प्रेरणा प्रदान करके मेरे भविष्य को समुज्वल बनाया। मैं जो कुछ हूं सब उनकी कृपा का फल है। अतः मैं आजीवन उनकी कृतज्ञ तथा अभारी रहूंगी।

इसके अतिरिक्त उनके ऐसे-ऐसे शिष्यों की संख्या भी कम नहीं जो अभी समाज सेवा में संलग्न है जैसे श्री दिवान भीम सेन जी जो एक अच्छे लेखक तथा कई एक समाज संस्थाओं के प्रधान हैं। उनकी माता वीरा देवी को शिक्षित होने की प्रेरणा भी उन्होंने ही प्रदान की थी वे हिसार आर्यसमाज की आजीवन प्रधान रहीं। श्री पं० गणेशदत्त वानप्रस्थी वड़े योग्य शिष्य सिद्ध हुए जो वर्षों जामपुर समाज के अधिकारी रहे और वर्तमान में वर्षों से देहली में समाज सेवा वैदिक धर्म का प्रचार प्रसार कर रहे हैं। उन्होंने अपनी बहिन के एक होनहार सुपुत्र को तैयार किया जो अभी देहरादून समाज के प्रधान हैं।

अध्यापन कार्य के साथ २ डेरागाजी खां जिले प्रायः सभी समाजों में समय २ पर वैदिक धर्म का प्रचार तथा प्रसार कर के प्रसिद्धि प्राप्त की। बाद में बम्बई आदि बड़े २ नगरों में अपनी आकर्षक कथाओं और उपदेशों द्वारा जनता को कृतार्थ किया। वैदिक धर्म के प्रति उनकी लगन और आस्था को शब्दों द्वारा व्यक्त करना असम्भव है। अन्त में मैं श्री कबीर के दोहे द्वारा अपनी गुरु भक्ति की पराकाष्ठा का परिचय देकर इसे समाप्त करती हूं। कबीरजी ने एक जगह कहा है—

"गुरु गोविन्द दोउ खड़े किसके लागु पांय।
बलिहारी वा गुरु के जिस गोविन्द दियों दिखाय॥

सचमुच प्रभु की ओर मुड़ने उससे जुड़ने उसकी राह पर चलने की यदि कहीं एक मात्र प्रेरणा मुझे मिली तो यह श्रेय अपने गुरुदेव को दे सकती हूं। अब वह हमारे बीच में नहीं हैं पर उनके उपदेश शुद्ध शुभ प्रेरणा सदा किसी न किसी अंश में विद्यमान रहती है।

उनका कृपा पूर्ण वरदान चिरस्मरणीय रहेगा कभी भुलाया नहीं जा सकता। मैं उनके प्रति नत मस्तक हूं और जन्म २ तक अभारी रहूंगी।

श्रद्धांजलि

स्वर्गीय महात्मा हर भजन लाल जी की चढ़ती जवानी में एक मात्र सन्तान उत्पन्न हुई उसी प्रसव में उनकी धर्म पत्नी का देहान्त हो गया कुछ दिन पश्चात बालक भी चलता बना आप माता पिता के एक ही सुपुत्र थे-माता पिता व सम्बन्धियों ने बड़ा आग्रह किया कि वह दूसरा विवाह करलें परन्तु वह अपने निर्णय पर अटल रहे और वैदिक धर्म की सेवा का व्रत ले लिया ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों कर भली प्रकार मनन किया-स्वाध्याय व विद्या दान उनका नित्य नियम बन गया-इसी लौ में दाजल जिला डेरा गाजी खां में आपने एक गुरुकुल खोला ताकि आने वाली सन्तति का चरित्र निर्माण हो सके, उन्होंने श्री मति चन्द्रवती सेठी को निज पुत्री धारकर तथा श्री भीमसैन को अत्यन्त प्रीति पूर्वक धर्म शिक्षा से माला माल कर दिया-मुझे भी उन के धर्म उपदेशों से बहुत लाभ हुआ-जिसके कारण मैं भी समाज सेवा में जुट गया आप ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त थे उनकी लेखनी के प्रमाण वह बात बात में पेश कर देते थे-उन्होंने सारी आयु अध्यापक व वानप्रस्थी के रूप में एक वास्तविक नमूना बन के दिखाया उनको मेरा नसस्कार हो

गणेशदत्त वानप्रस्थी

निवेदन

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रन्तन्न आ सुव ॥ यजु० अ० ३० ॥

अर्थ

हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्य युक्त (देव) शुद्धस्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को (परासुव) दूर कर दीजिए। (यत्) जो (भद्रम्) कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं। (तत्) वह सब हम को (आ सुव) प्राप्त कीजिये ।१।

सर्व आर्य पद्धति, स्तुति, प्रार्थना, उपासना, यज्ञ अग्निहोत्रादि के प्रारम्भ में इस उपास्य मंत्र का पाठ करने की विधि है शब्द स्वयं ही नोट कर रहे हैं कि अपनी तुच्छता हीनता दीनता को प्रभु प्रताप से हटाकर भगवान के समस्त शुभ गुणों की ग्राहकी ही पहली प्रार्थना मानी गई है। प्रार्थना मंत्रों में इसे मंत्र का पहला पहला होना, सब यज्ञों का, प्रारम्भ सत्कार स्वयं ही शुभ भावना का प्रतीक है कि हम निर्दोष हों ताकि सर्व-कल्याण के सत्पात्र बनें। यही इच्छा यही संकल्प यही मार्ग जीवन भरका मुख्य उद्देश्य है जिसकी परख हम अगले पृष्ठों में करने का शुभ ध्येय बनाते हैं। भगवान की कृपा से इस शुभ संदेश के अमृत को इन मंत्रों में ढूंढ लेने का सौभाग्य लें ताकि विश्व भर के दुःखों क्लेषों से निवृत होने का पूरा व्रत हो सके तथा हम सब कल्याण मार्ग के पथिक बन सकें।

: १ :

पहली भेंट

एक सज्जन एक सन्त के पास अपना कष्ट लेकर गये कि उनको गुस्सा आ जाता है। उनका मन अशान्त रहता है। उनको हिंसा करने की इच्छा बनी रहती है इसलिए वह प्रार्थना करता रहा कि उसे इन दुर्गुणों से मुक्ति प्राप्त करने का रास्ता बताया जाए। सन्त महाशय ने कल के रोज जब वह उसके द्वार पर भिक्षा लेने आयेगा इन दुर्गुणों से मुक्त होने की विधि बता देने का प्रण दिया। अगले रोज उस सज्जन ने उस सन्त के लिए जिसने कुछ विधि बता देने और भिक्षा लेने आना था उसके लिए अच्छी अच्छी स्वादिष्ट वस्तुएँ तैयार करवायीं। विशेष रूप से जब उसे भिक्षा के अतिरिक्त मानसिक जीवन के स्वास्थ्य के लिए भी कुछ प्राप्त करना था। सन्त जी पधारे तो आते ही भिक्षा का बर्तन द्वार की दलहीज पर रख दिया वह सज्जन परिश्रम और प्रेम से तैयार की गई वस्तुएँ वर्तन में डाल देना ही चाहता था पर वह रुक गया और कहने लगा कि बर्तन में तो गोबर रोड़े और कूड़ा भरा पड़ा है उसे पहले साफ तो किया जाए ताकि स्वादिष्ट वस्तुओं का ज़ायका नष्ट न हो जाय। सन्त महाशय ने पहले तो कह दिया कि कोई बात नहीं भिक्षा की वस्तुएँ भिक्षा के पात्र में डाल ही दी जाएं परन्तु सज्जन के दोबारा जोर देने पर बर्तन को साफ कर देना ही उचित माना गया। पात्र शुद्ध करके चीजें

ड़लवा कर ज्योंहि सन्त चलने लगे तब सज्जन नें कल के
की याद दिलाई जिसके द्वारा उसे कुछ बताया जाना था
सन्त जी बोले कि बात राज को तो बता दी है शेष बच
गया है अर्थात् कुछ प्राप्त करने से पहले शुद्ध हो जाना अत्यन्त
श्यक है यही मार्ग जीवन में सुधार और शान्ति प्राप्त करने के
प्रत्यन्त आवश्यक है। सन्त ने सज्जन को सलाह दी कि अपने दुर्गु
को दूर करना और उसके स्थान पर शान्तिको प्राप्तकरना ही जीवनक
गुप्त मन्त्र है। मन्दिर में, प्रार्थना में, सभा में, प्रत्येक साफ कपड़े पहन
कर बैठना पसन्द करता है परन्तु मन्दिर प्रार्थना और सभा का आर्शी-
वादवहाँ बैठने वाले को इसलिए प्राप्त नहीं होता क्योंकि हम बाहर की
सफाई करके तो बैठते है परन्तु अन्दर की सफाई की ओर कम ध्यान
दे पाते हैं। उल्लास सुख-साधनों पर नहीं उत्कृष्ट दृष्टिकोण पर
निर्भर है आन्तरिक पवित्रता में इतना सौन्दर्य और मिठास भरा पड़ा
है कि उसके दर्शन पाने, करने तथा रसास्वादन करने पर ही मिलता
है। सच पूछा जाय प्रगति के आधार उत्कृष्ट विचार ही हैं जिनके
पनपने का क्षेत्र केवल उत्कृष्ट विचार ही है। मानव विचारों का
पुतला है हर एक वो है जो उसके विचार हैं। किसी ने जीवन को
भार देखा, किसी ने एक वरदान देखा। अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक
स्वीट् अपने प्रत्येक जन्म-दिन पर काले और भद्दे कपड़े पहन कर शोक
मनाया करते थे पर इसके विपरित कवि मिल्टन ऐसे अवसर पर
भगवान का धन्यवाद कहा करते जिसके कारण जीवन का वरदान
प्राप्त हुआ।

नैपोलियन बोनापार्ट अपने अन्तिम दिनों में कहा करते "अफ-
सोस है मैंने जीवन का एक भी सप्ताह सुख शान्ति पूर्वक नहीं
बिताया।" सिकन्दर महान अपने अन्तिम दिनों में पश्चात्ताप करता
ही मरा। यदि कोई नहाये बिना अच्छे कपड़े पहन ले हम उसे ना
समझ कहते है जिसका अर्थ है कि स्नान करके अच्छे कपड़े पहनना
सबको प्रिय है परन्तु यह दलील कि अन्दर की मैल निकालें बिना

में बैठ सकते हैं अकल और दलील से बाहर की बात
हमको बे महारे विचारों का चक्कर पड़ता है न जाने रात
में हम कहाँ कहाँ घूम आते है क्या क्या बे मतलब की बातें
अन्दर उठती हैं ऐसी बातें भी जिनकी हमारी बाहरी संसार
दिन भर के जीवन से, कोई सम्बन्ध नहीं होता मस्तिष्क पट
नजर आ जाती है जो कि हमारे लिए नींद खुलते ही एक विस्मय
का कारण बनता है। उठते ही विचारों की, प्रोग्रामों की मुलाकातें
की भरी ट्रेन दिमागी पटरी से गुजर जाती है। रेलगाड़ी की तरह
गति विधि का रूप लेती है विसल, चेतावनी और ऐलान दिये बिना
सिग्नल के भी इस माराधाड़ी उथल पुथल को संभाले बिना हम निज
कार्य काज में चल पड़ते है विशेष तौर पर उस गाड़ी को कहीं ठिकाने
लगाये बिना, कोई स्थान दिये बिना, केवल जिसकी वजह से हमारा
दिन भर का प्रोग्राम एक विस्मित और उलझा हुआ बन जाता
है। स्वयं नहीं मालूम होता कि अमुक विचार क्यों आया, कहाँ
जाना चाहता है कहाँ से निकला और कहाँ ले जाने का निश्चय किया
है। आश्चर्य की बात यह है कि बाहर निकलते वक्त हम सिर के
बालों को सर्वदा कंघा करके बाहर निकलते है कहीं प्रातः बाहर
निकलना पड़े घर की देवी भी कहती है अपने बालों को तो ठीक
कर लो कहीं बुरे न लगें परन्तु हम प्रातः बाहर निकलने से पहले
अन्दर के उलझे बालों को संवारा नहीं करते, तरतीब नहीं दिया
करते, इसलिए हम अन्दर की रोशनी भी खोते है और बाहर के
प्रकाश से भी खोये से रहते हैं। देवियाँ मांग भरती बालों को
तरतीब देकर दरम्यान से खाली नाली देकर इधर-उधर के बालों
को संभाल लेती हैं। शारीरिक रूप से भी नियम संभाल का है
मध्य की लकीर मांग की भी खाली रखी जाती है ताकि वह
सुन्दरता दिखाये जाने में हम सुयोग्य लगें, क्योंकि खाली स्थान पर
सिंदूर भरा जाता है जो काले बालों के मध्य रोचक लगता है और

देवी की शिष्टता को दोबाला करने में हाथ बंटाता है इसी तरह क्या हम अपने विचारों की दुनियाँ को तरकीब और संभाल देकर खाली होकर भगवान के पुण्य प्रताप के सिंदूर लगवाने के लिए तैयार हो निकलते हैं।

खला बनती नहीं बिगड़े दिलो दिमाग की, इसलिए भरे जाने की व्यवस्था भी बनती नहीं। हम नींद से उठ बैठे नींद से जाग जाने पर भी बहुत से लोग सोये से रहते हैं सोना भी तो दो तरह का है एक विस्तर पर लेट कर दूसरा वास्तविकता से बेसुधी-समझ से बाहर, असलियत से दूर, हस्ती से बेखबर, वजूद से भागे हुए, नजर आ रहे खतरे से गैर जानबदार। इसे सोया हुआ न कहा जाय तो क्या कहा जाय इसके विरुद्ध यह भी अनुभव की बात है कि उठते ही भगवान का धन्यवाद कहते हुए कि उसने उठा बिठाया है य; अपने से सम्बोधित हो जाना कि अब मैं उठ बैठा हूं, जाग गया हूं, गुरु ने रात भर के उच्चके, काले चोर, बिखरी तरंगों, अपवित्र विषय से साथ ही दूर हो जाने के लिए। क्योंक अब मैं बाहोशोहवास से जगा हुआ के पालन उत्तम परिणाम का कारण बनता है। अपने से इतना सम्बो ना ही था। नये दिन का सन्देश, उत्साह तथा आशीर्वाद का सत्पात्र होना ना प्रेम देता, मैं कुछ हासिल होने का नगमा गाने लगा हूं इसी अभ्यास नों का प्रेम बढ़ दिन खोलना, नया व्रत लेना, नया आयाम बनाना एक स्व कि कुत्ते को कहीं जीवन का रास्ता बनता है। संसार में हम जीते हैं भगवा ही करना पड़ा। कुत्ते नेकर पर अपना काम अपना नाम सन्मुख रख कर। र जब वह आश्रम में के दरबार में जाना उस महान अध्यात्म शक्ति से सं साधक कुत्ते को दुतकार जाना एक और गलत बात बनती जा रही है संसार खिर तंग आकर साधक ढ़, अर्थपूर्ण, सत्नियमों के आधार पर। प्रकृति त गुरु बोले हमारे विचार र चलती है। भगवान ने दुनिया का साज लगा र बीतता है। जिनको हम बड़ा सके नियम बना दिये हैं जिसके द्वारा प्रकृति र उपासना के समय भी प्रकट ही है अब मानव बैठता है उसकी शरण में

खाऊँ तो मैं गन्दगी और बने मेरा स्वास्थ्य ! ऐसा व्यवहार उससे
मखौल करना है और अपने को धोखा देना है भगवान की शरण में
बैठने वाले उससे उसका पन, दिव्यता, अध्यात्मिकता, प्रगति, पवित्रता
सरलता और नेक नीयति, जो उसके खालिस अपने गुण है मांगने
के लिये हम बैठे हैं। डाक्टर ह्यम ने सविता का अर्थ ही यही लिया
है कि उससे दिव्यता मिल सकती है। माँगने के लिए हम बैठें प्रार्थना
करें ताकि प्रबन्धक का प्रवन्ध भी खराब न हो मांगने वाले का हाथ
भी व्यर्थ में न उठे शक्ति का भी नाश न हो। प्राकृति कनियमों में बंध
कर हम आधिभौतिक जीवन प्राप्त कर सकें और आध्यात्मिकता के
के लिए उसके दर के भिखारी हो सकें। तब प्रार्थना नाम की अवस्था
में जाना उच्च व्यवहार होगा। यदि भगवान अपनें प्राकृतिक नियमों
के विरोध में हमारी प्रार्थनाएं स्वीकार कर ले तो उसका प्रवन्ध बिगड़
जायेगा इसके अतिरिक्त प्रत्येक अपनी बात अपने तरीकों से मनवाने
का जिज्ञासु हो जायेगा जो कि एक नई उलझन पैदा कर देगी। यह
नि चार कि उससे आध्यत्मिकता, जो खालिस से खालिस सोना है
कर यह सोना किसी और द्वार से प्राप्त हो ही नहीं सकता
अन्दर विचार में ले आने की बात है उससे उसके ढंग, उसके रंग हम
करते, इ में बैठ कर प्राप्त कर सकते हैं। उसके उसी जैसे, उसके ही
प्रकाश से ज उसके नगमों में सुरतान मिला कर बैठ पायें ताकि
तरतीब देक सके, सभा जम सके और रोचक प्रोग्राम मिल सके
को संभाल लेत संसार भर का भार ले बैठता है, संसार के बोझ
मध्य की लकीर रखता है भार से, प्रकृति के उभार से, वो भक्त
सुन्दरता दिखाये ज सिर ऊँचा करके नहीं बैठ सकता ऐसे जिज्ञासु
सिंदूर भरा जाता है झुकी रहती है, नजर अपने आपमें नीची होती है
जो उससे उसे ही लेने बैठता हैं उसकी कम
ी हड्डी सीधी होती है वह ठीक अर्थों
रह सकती है। इसलिए भगवान को सच्चे

दिल से याद करने वाले सिर ऊंचा कमर सीधी बहोशोहवास उसके दरबार के दरबारी बनने का सौभाग्य लेते हैं। आरम्भ में इस मन्त्र को पहली पोजीशन कि हम शुद्ध होकर, उत्सुक होकर, सत्यता के ग्राहक होकर उसके यहाँ जाने का रास्ता अख्यतार करें। खाली होना सीखें ताकि वहां से भरे भरे आये यही रूपरेखा मुझे व्याख्या रूप में प्रस्तुत करनी उचित लगो है विशेषतौर जब कोई भी ढेरी पर बैठना पसन्द नहीं करता स्वच्छ स्थान पर बैठना मनुष्य तो मनुष्य पशु के भी चुनाव की विशेषता है। प्रायः सब सात्विक वृत्ति वाल चाहते हैं कि उन्हें ईश्वर प्राप्ति हो जाये परन्तु ईश्वर प्राप्ति भी तो एक बड़ी भारी साधना है जिसका लाभ अनुपम और अद्वितीय है। परढंग से ही इसमें सफलता प्राप्त हो सकती है। जैसा कि एक गृहस्थ साधक गुरु के पास पहुंचा ईश्वर प्राप्ति में अपनी बाधा का वर्णन किया क्योंकि उसे ध्यान के समय, अभ्यास के समय; दिन भर की गतिविधियों का जजाल सताया करता था। गुरु ने साधक को दस दिन अपने यहां आश्रम में रहने के लिए कहा साथ ही एक कुत्ता भी पालने की अनुमति दी। पहले तो साधक कुत्ते के पालन की साधना से घबराया परन्तु उसे आज्ञा का पालन करना ही था। साधक उस कुत्ते को बड़े प्यार से खिलाता पिलाता अपना प्रेम देता, एक रस्सी गले में डाल घूमने घामने लेजाता जब दोनों का प्रेम बढ़ गया, इतने में गुरु ने साधक को दूसरा आदेश दिया कि कुत्ते को कहीं बाहर जाकर छोड़ दिया जाय। साधक को ऐसा ही करना पड़ा। कुत्ते को दूर जाकर छोड़ा भी, रस्सी भी खोल दी, पर जब वह आश्रम में पहुंचा थोड़े समय में कुत्ता भी पहुंच गया। साधक कुत्ते को दुतकार देता पर कुत्ता फिर वही पहुंच जाता। आखिर तंग आकर साधक ने गुरु से स्थिति का वर्णन किया जिस पर गुरु बोले हमारे विचार रूपी कुत्ते जिनके मध्य हमारादि न भर बीतता है। जिनको हम बड़ा प्यार दिखाते हैं वही पैदा हुआ प्यार उपासना के समय भी प्रकट

होता है। अर्थात् जो विचार और भाव हमें सचमुच प्राप्त करने हैं उनका दिन भर स्मरण रखा जाय उन्हीं के मध्य सब कार्य निभाये जायें जो एक सच्ची साधना है। हम भगवान को बिठाने के लिए स्थान बनाते नहीं। अतः इस जीवन साधना के अभाव में उपासना भी सार्थक नहीं बनती। विचारों की भीड़ में शान्ति खो जाती है प्रभु प्रसाद का तो पहला नियम अहम से निवृत्ति, शून्य की अवस्था, पवित्रता की तीव्रता हमारी सफलता का प्रतीक बनती है।

———

: २ :

दूसरी भेंट

महाराज कृष्ण से अर्जुन ने पूछा था हे कृष्ण हमारे न चाहते हुए भी क्या चीज है जो मनुष्य को जबरदस्ती पाप की ओर ले जाती है ? इस प्रश्न का उत्तर हमारे अभीष्ट मन्त्र के पहले शब्द के पहले शब्द में कह ही डाला गया है कि विषय मन को अपनें आप चिपटे रहते हैं जिससे मन काले पर काला होता जाता है। हम जो कुछ देखते हैं, सुनते हैं, शायद हम देखने और सुनने पर अपने आप को फारिग समझ लेते हैं लेकिन देखी और सुनी जीवन की छाप हमारे जीवन की कहानी बन जाती है वहाँ अपनी लंका बना डालने की सामग्री तैयार हो जाती है और हम भंवरों में फंसते हुए चले जाते हैं। जिज्ञासु लोग इस बात के साक्षी हैं कई बार जाने अनजाने में नींद में, जागते में, ऐसे विचार उठ खड़े होते हैं जिनका सम्बन्ध हमें ढूंढने में नहीं आता। यही अन्दर के अहंकार, विचार वातावरण अन्तः करण के खेल कूद आसानी से न समझ में आ सकने वाला गोरख धंधा आज के विज्ञान का विषय बन रहा है। दृश्य का अदृश्य में, अदृश्य का दृश्य में बदल जाना हमारे विश्व का एक चमत्कार हो रहा है। इन विषयों को खोजना उससे हृदय प्लेट को साफ कर लेना प्रार्थना मन्त्र का, पहले मन्त्र द्वारा मुख्य उद्देश्य है। यह मन्त्र "असतो मा सद्गमय" का एक राग है जिसकी गहराई में उतरना, शक्ति को

पाना और प्राप्ति की एक रीति है। जरा ध्यान से देखा जाय तो सूक्ष्म ही सारे स्थूल जगत की आधार शिला है किसी संस्कार को पकड़ लेना बहुत सरल है मन की प्लेट इतनी नाजुक है कि न जानते हुए, न चाहते हुये भी वहाँ लकीर पड़ जाती है जिसके असर में आ जाना बहुत सहज होता है। सूक्ष्म संसार किस तरह चलता है उसे सूक्ष्म आंख वाले देख पाते हैं। मनुष्य की मूल सत्ता कितनी छोटी है इसका ध्यान यूं भी वर्णन किया जा सकता है कि जो शुक्राणु डिम्ब के साथ भ्रूण का रूप लेता है वह मूल में एक क्यूबिक मिलिमीटर का दस लाखवां भाग होता है। परन्तु बढ़ के यह क्या रूप धारण करता है वह हम सब के सामने मौजूद है। फिर एक नया वरदान, प्रथा, भगवान की निर्माण योजना यह कि इतने छोटे पन से शुरू होते ही ट्रोको बलास्ट (Trocoblast) नाम झिल्ली से मल त्याग की की परिक्रमा शुरू होती है। मल त्याग होता जाता है और निर्माण की शकलें बढ़ती चली जाती हैं अजब माया है इस काया की यही राज है असली जीवन का, आदिभौतिक जीवन और आध्यात्मिक जगत का, साफ होते जाओ और तैयार होते जाओ। यही राग है इस मन्त्र का यही रंग है प्रगति का। फिर एक से एक अद्भुत एवं आकर्षक दृश्य एक के बाद एक पर एक उभरते चले जाते हैं उनका मूल्यांकन करते करते यह निष्कर्ष करना पड़ता है कि कण कण में उपयोगिता, विलक्षणता, समर्थता एवं सुन्दरता के अनन्य भंडार भरते चले जाते हैं। निर्जीव मिट्टी में भी जिवाणु की एक अलग दुनियां बनी पड़ी है। रेत का एक कण असंख्य प्रकार की हलचलों से अपना केन्द्र बना रहा है तुच्छतम परमाणु के भीतर उसका एक निजी सौर मंडल अपनी विशेषता रखता हैं अणु का मध्यवर्ती नाभिक एक समर्थ सूर्य है। यह सूक्ष्म से स्थूल के रूप रूपान्तर हमारे जीवन यापन में बड़ा महत्व रखते हैं। भ्रूण के गर्भ में प्रवेश करने के बीसवें रोज से हृदय काम करना शुरू करता है जिसका मुख्य कार्य खून को साफ करना है और साथ ही साथ अपनी चाल को कायम रखने के

लिए शुद्ध रक्त भी चाहिये उसे भी स्वयं तैयार करते जाना है भगवान की इस अद्वितीय रचना में मानव हैरान पे हैरान होता चला जा रहा है यही राग है इस मन्त्र का, यही राग है प्रकृति का और महानता को प्राप्त करने का, साधना कहाँ की कहाँ पहुंचा देती है इसमें विस्मय नहीं परन्तु हमारे लिए एक बड़े सौभाग्य की बात है हमें वेद और सत् शास्त्रों में अनेक स्थान पर कहा गया है कि मानव प्रतिदिन प्रात: एक सौ आठ बार गायत्री का जाप करे, हमने अनेक महात्माओं के नाम के आगे एक सौ आठ की संख्या भी लगी देखी है अर्थात् एक सौ आठ ही उनका पदक और पदवी कहलाती है। श्री आर एन जोशी ने अभी अपने एक लेख Scientific and philosophical of human existence" में बताया है कि सूर्य की मध्य रेखा आठ लाख चौसठ हजार मील है और पृथ्वी का equater एक सौ आठ गुणा छोटा है। ऐसी पृथवी सूर्य का चक्कर काटती है, सूर्य की उपासना में परिक्रमा लेती है जिस का अर्थ यह हुआ कि पृथ्वी की तरह छोटे हम महान सूर्य के इर्द गिर्द एक सौ आठ बार चिन्तन करके गायत्री मां के फलस्वरूप एक सौ आठ नाम का पदक और पदवी प्राप्त कर सकते हैं। यह छोटे से महान होने की सुन्दर रूप रेखा अपने दिलो दिमाग में बैठाने की आवश्यकता रखती है लघु से महान होने का एक आदर्श प्रतीक बतला देने का यह सर्वोत्तम पाठ है जिसका यह अर्थ भी हो सकता है कि पृथ्वी की भांति अंधकार पूर्ण हम महान सूर्य देवता की परिक्रमा, दर्शन, विचार व ध्यान से स्वयं भी चमक सकते हैं। बात हो रही थी सूक्ष्म से स्थूल होने की और भगवान की अनुपम नियम की व्याख्या की। अब इस वर्णन की और भी सुन्दर व्याख्या का आनन्द लेना अधिक भी प्रिय लगता है। अब विज्ञान ने यह भी कह डाला है कि चेतना गर्भ में एक बीज कोश में आने से लेकर पूरा बालक बनने तक समस्त योनियों की पुनरावृत्ति होती है अर्थात् इस प्रकार जीव के ८४ लाख योनियों के भ्रमण करने का

भारतीय मत भी पुष्ट होता है। प्रतिदिन सैकिंड से कुछ कम समय में ही प्रत्येक भ्रूण की आकृति बदल जाती है। स्त्री के ओमय में (प्रजनन कोष में) प्रविष्ट होने के बाद पुरुष का स्पर्ण (बीजकोष) एक से दो, दो से चार, चार से आठ, आठ से सोलह इत्यादि इत्यादि के क्रम से कोषों में विभाजित होता जाता है इस प्रकार शरीर बनता जाता है। गर्भ धारण की नौ माह १० दिन की अवधि में लगभग दो करोड़ इक्तालिस लाख बियानवे हजार सैकिण्ड होते हैं। तीन सैकिंड से कुछ कम में सूक्ष्म से स्थूल आकृति परिवर्तन होने के क्रम से अस्सी लाख साठ हजार छ सौ छयासठ से अधिक ही आकृतियाँ बदली होते है यानि लगभग ८४ लाख। भगवान की लीला बड़ी ही अवर्णनीय है। काश कि हम केवल इस सुन्दर वर्णन की गाथा वाले भी बन जाते तो कम से कम हम वरेणीय व वर्णन करता के नाते में पिरोये जा सकते। बात चली थी विषयों से चिमटे होने की एवं मन्त्र के पहले शब्द को व्याख्या की जिसके कारण जिसके सनिध्य में परम विशुद्ध देवों के देव के आत्म प्रसाद से हम निखरने की बात सोच रहे थे। विषय तो विषय हुए छोटी छोटी भूलें ही कहाँ क्या काम कर देती है यह बात भी यदि समझ में बैठ जाय तो और सौभाग्य बन जाये। श्री जार्ज मूलर निर्देशक अन्तरिक्ष यान नासा (अमेरिका) के दफ्तर में एक चित्र लग रहा है जिस पर – (माईनस) का एक छोटा सा रूप डाल दिया गया है। इतना बड़ा चित्र और उस पर नफी की छोटी सी रेखा समझ नहीं आई। पर अब आंख ज्यादा खोली तो नीचे लिखे शब्द "छोटी से छोटी भूल बड़ी से बड़ी हानि का कारण होती है।" अधिक विस्मय का कारण बनी फिर जब ज्यादा छान बीन की तो मालूम हुआ कि उन्नीस सौ बासठ में अमेरिका में शुक्र ग्रह की जाँच पड़ताल के लिए जो यान अन्तरिक्ष में छोड़ा गया था जिस यान पर करोड़ों डालर व्यय हुये थे वे यान कई दिनों की गतिविधि के बाद लापता हो गया। यद्यपि अनेक साधन जुटाए गये पर यान तब का

गुम और लापता है। जब और छान बीन हुई तो मालूम यह हुआ कि गति, मार्ग, दिशा के हिसाब किताब में एक—की संख्या को हिसाब में लिया जाना चूक गया था। अर्थात् जिसका मूल्य करोड़ों डालर पड़ा लोगों की आशाओं पर पानी फिरा और वैज्ञानिकों के स्वप्न ही रह गये। यह उदाहरण नहीं वास्तविकता है। यह कह देने को भी कि हमारी भूलें हमारे पाप हमें कहाँ से कहाँ पहुंचा देते है कितने से कितना मूल्य देना पड़ जाता है कितने ध्येय की दूरी बन जाती है। केवल इसी लिए शुरू से कहा था कि हम लघु, महान विश्व के पति की उपासना में अपने मल त्याग का क्रम बनायें ताकि स्वच्छ से स्वच्छ होते हुए शुद्ध का दर्शन कर सकें। माताओं से पूछ लो कपड़े धोने का ढंग। एक मां बारह वर्षीय लड़की को कपड़ा धोना सिखा रही थी बालिका साबुन ले बेठी मैले कपड़ों पर लगाने लगी। मां ने रोका—बेटी पहले कपड़ों को पानी से निकालो मैल निकल जाये फिर साबुन लगेगा और कपड़ा सुथरा हो जायेगा। हम को भी यह नीति जीवन भर में अपनानी है ताकि हम "परासुव" से तन्नासुव हो सकें। विशेष तौर पर उनके लिए जिनको विष-यानी – विषय चिपटे पड़े हैं। भगवान ने बड़ा उपकार किया जो मानव पैदा कर दिया और उस मानव पर भी बड़ा उपकार किया जिसे मानवता का जज़बा अत्ता किया। साफ किये जाने और बढ़ते चले जाने की रफतार का यह रूप कि एक महीने के अन्दर शुक्राणु पहली अवस्था से पचास गुणा वजन वाला अर्थात् आठ हजार गुना वजन ले लेता है तो क्या इसी तरह हम आध्यात्मिक जगत वाले भिन्न भिन्न पापों संस्कारों से घिरे हुए मैले हुए गतिविधियों से अपने भीतर की शोध द्वारा प्रगति के सत्पात्र नहीं हो सकते। किसी के कहने से शायद कोई फर्क नजर न आये परन्तु आजमा कर देख लेने से जीवन रोज रोशन हो जाये इससे बढ़ कर जादू क्या होगा। मैं अपने भीतर से पाप हटाऊँ, मैं जाग चुका हूं, एक कीमी-याई नुस्खा की आजमाइश कर लेना है। क्या ही अच्छा हो यदि

ऐसा सौभाग्य हमें मिल जाय। मन की शान्ति अपनी उपज है जो किसी गैर की काश्त से नहीं बनती गैर की कोशिश से प्रकाश में नहीं आती। नहाना अपना काम है, साफ होना अपना गुण है पवित्रता अपना रुत्बा है, शील अपना रंग है जो बनाये बनता है। बात समझाने के लिए की गयी है कि एक अनपढ़ देवी अपने घर का बड़ा अच्छा प्रबन्ध चलाती थी जिसकी सेवा बाल बच्चों की पतिदेव की सारा दिन व्यस्त रह कर सब के सुख अराम में व्यस्त रहती परन्तु भाग्य की यह बात, उसके पति हर समय अपने भाग्य को कोसते रहते। इस अवस्था से वह देवी निराश अवश्य थी परन्तु अपने कर्त्तव्य पालन में कोई कमी न रखती। कहा जाता हैं देवता उसके इस व्यवहार से बड़े प्रभावित हुए। उसे वरदान देने के लिए एक देवता आ पहुंचे उसकी सराहना की और उसे कुछ मांग लेने का अनुरोध किया। जिसके एवज में उस देवी ने अपने पतिदेव को मानसिक व्यवस्था, प्रगति, शुद्धदृष्टिकोण और भाग्य को कोसने की बुरी आदत से छुटकारा देने की प्रार्थना की। इस पर देवता बोले कि यह वरदान तो वह नहीं दे सकते। क्योंकि यह अवस्था प्राप्त होती है अपने अभ्यास से। मन की शान्ति मिल सकती है अपने परिश्रम से अपनी पवित्रता से और चित को श्रेष्ठ मार्ग पर लगाने स। सो यह भेद की बाद हम व्यसनों से पाक हों, दोषों की जगह पर नेकी को मकाम दें, भली प्रकार समझ लेने को तरकीब है। हमारे आये रोज के व्यवहार का भी यही तकाजा है कि बर्तन खाली ही भरा जा सकता है खला में ही वायु रह सकती है। खाली होना ही हासिल करना है। श्वास प्रश्वास पर ही चलता है। उषा संध्या साथ साथ चलती है सोना, जागना, एक दूसरे के पीछे पीछे चलता है वायु गर्म होती जाती है हटती जाती है ताजा हलकी हवा उसको जगह लेती जाती है पर हम अपने अन्दर ही एक एक ज्वालामुखी खडा करते जा रहे हैं। जहां पापों की आग सुलगती जा रही है ढेरी पे ढेरी बनती जा रही है। हम अपनी ही ढेरी पर बैठ कर एक ही

धमाके से उड़ा दिये जायेगें। तट से बंधा होना और सागर में प्रवेश करना जैसे असम्भव है ऐसे ही अपने संस्कारों में गर्क साफ सुथरे न होना और भगवत् प्राप्ति की इच्छा रखना एक ऐसा खेल चलाया जा रहा है जो चल नहीं सकेगा। हम इस तरह केवल अपनी शक्तियों का नाश करना देखते जा रहे हैं। यदि हमको महर्षि के इस प्यारे मन्त्र की वास्तविकता को अपनाना हो तो विषयों से साफ होकर वास्तविकता की प्राप्ति के सत्पात्र बनना होगा पर वे जिन्हें अपनी प्रगति देखनी है। हम सोचते हैं कि हमारा ध्यान कब लगेगा जबकि हम ध्यान प्राप्त करने के मूड में ही नहीं होते। जहां सूक्ष्म शुक्राणु से बनता है विशालशरीर सूक्ष्मपरमाणु से बनता है विशाल संसार, और छोटी सी भूलसे करोड़ों की हानि हो सकती है वहाँ अत्यन्त छोटे से अपवित्र विचारही बड़े नाश और वड़ी हत्या का कारण बन सकते हैं। इस दलील से भी इन मल विचारों कोसाफ करते रहना अत्यन्त आवश्यक है आत्म चेतना का परिष्कार व्यक्ति में ईश्वर का अवतरण कहा जा सकता है उसमें पुण्य प्रयोजनों को अपनाने की ही नहीं दुष्प्रवृत्रि उन्मूलन-की भी उमंग समानरूप से भाग लेती है। कुसंस्कारों को काट फैकना आत्मिक पुरुषार्थों में सर्वोपरी माना गया है। कुसंस्कार कितने प्रबल होते है उनकी दुरुहना को महाभारत की एक उक्ति बताया गया है। "जनामि धर्मं न च में प्रवृत्ति"—जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्ति" अर्थात् धर्म का स्वरूप मालूम तो है, पर उससे प्रवृत्ति ही नहीं होती। इसी प्रकार अधर्म के दुष्परिणाम भी विदित हैं। पर उनसे छूटना भी बन नहीं पड़ता। यह अपनी तशखीश, अपने रोग, अपनी अवस्था की जानकारी, हमारे समझने व मानने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

———

: ३ :

तीसरी भेंट

कड़ाके की ठंड से घरती के जीव सिकुड़ने लगे। जंगली जानवरों की खुराक का मसला बन गया। लोग सर्दी से सुविधा पाने के लिए लकड़ी की तलाश में निकले। सबके शरीर अकड़ रहे थे, कोई जल नजर नहीं आ रहा था (समझाने की बात) पेड़ों से यह दृश्य देखा न गया। जड़ होने के कारण वह पूछ भी क्या सकते थे। परन्तु यह विचार करके कि इस सृष्टि में हर वस्तु अपना स्थान रखती है वृक्षों ने अपने सारे पत्ते झड़ दिये। रोंगने वालों ने भी उनमें शरण ली। लोगों ने उनको जलाकर आग सेंकी-बचा खुचा माल खाद के काम आया इतने में गिरगिट महाशय अपनी विल से बाहर निकले और वृक्षों को उलाहना दिया। क्या जान उन्होंने अपने को नंगा कर दिया है अपनी शोभा गवां कर प्राप्त हुआ क्या ? वृक्ष बेचारे चुप। कुछ काल पश्चात् वसंत आया। सारे के सारे वृक्ष नयी फसल से सुशोभित हुए। नई कोपलों ने उन्हें सुन्दरता बक्शी। अपने को नया करने के प्रोगाम से, पिछले को त्याग करने के सदभाव से, वृक्षों को फल भी नसीब हुए। गिरगिट महाशय फिर एक दिन जब दौरे पर निकले तो वृक्षों की इस नीति की सराहना की कि अपने को साफ करके, नये पन की राह, सचमुच दाद देने की है। बात वही आ गई जहाँ हम चल रहे थे। माताएं जिन बालकों के मुंह हाथ नहीं धोतीं,

मैलापन उनको कालापन देता है। हवा में चल रहा जंगदार विषय अच्छी भली धातु को भी काला कर देता है। शरीर, जल-वायु हमारे ही कारण दोषपूर्ण होते हैं। इसी तरह आत्मा और मन की प्रतिदिन पवित्रता से परासुव का नियम भी आवश्यक ठहरा। ताकि हमारा जीवन प्रगति की तरफ चल सके। मोटरें, ट्रेनें, मैशनोरी भी इसी नियम को मानती है। पिस्टन अन्दर खला पैदा करता है। बाहर की तरफ से आकर नई शक्ति पैदा होकर उस खला को भर देती है। इसी अन्दर बाहर की चाल के कारण गति बनती है। इंजन चलते हैं। मशिनरी शक्ल में आती है और हमारे सारे कारोबार चल निकलते हैं। नया मकान किराये पर अथवा अपना बनाया जाय उसकी भी सफाई सबसे पहले की जाती है। जिसके बाद रिहायश की योग्यता बन सकती है सारे महक्मों में महकमा सफाई अत्यन्त अहम और लाभदायक माना गया है। संस्थाएं बना दी गई हैं, कमेटियाँ बना दीं। क्योंकि यह प्रोग्राम सफाई होना अत्यन्त आवश्यक है। यह हमारे जीवन का बहुत बड़ा पहलू बन जाता है। परन्तु उस हमारे छिपे संसार में यह महक्मा सफाई खारिज अज़वक्त और खारिज अज़ख्याल हो रहा है। यह दलील समझ में नहीं आ रही। गंदम की फसल तैयार होकर कटती है। दानों को जौ से अलग, भूसा से अलग किया जाता है। इस पर भी संतोष नहीं, गदंम को छाज से साफ किया जाता है। इससे भी चुपी नहीं। थाली में दानें डालकर उनमें से काले रंग के छोटे २ दानें भी चुन लिये जाते हैं। इस पर भी शान्ति नहीं (गो आजकल नहीं) मगर पिछले दिनों में ऊखल, मूसल से गंदम को कूटा जाता था। कूटने वाले को (मोहला) कहते थे (खास प्रकार की बनावट के मुंह वाला-मुंह भी थोड़ा सा बाहर निकला हुआ) एक ऐसी तरकीब का मालिक होता था जो इस ढंग से ताजे गदंम में से ऐसा तत्व पृथक-पृथक कर लेता था, जो मानवीय शरीर के लिए हानिप्रद होता है। अब विज्ञान भी हमारे ऊखल- मूसल की गतिविधि से सहमत

होकर यह कह रहा है कि उस तत्व का पृथक कर देना स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होता है तो इसमें तो सन्देह नहीं कि इस त्याग गति-विधि से हमारा अन्न तैयार होता है जिसका सारा तात्पर्य सफाई गन्दगी से पृथकता, और नकरात्मक चीज से मुक्ति का नियम बनता है पर यह सब हुआ बाहर के शरीर के लिए। पर भीतर की propriety मैला पर मैला रख लेने की रीति भी योग्य नहीं। सन्तुलन में भी, नियम में भी, इसलिए भी "परासुव" का तरीका बहुत आवश्यक है। पुराने दिनों में जब हम स्कूलों और पाठशालाओं में जाते थे तो अध्यापक सबसे पहले क्लास में घूमकर सभी बालकों की तख्ती और स्लेट की जाँच करते थे यह देखने हेतु कि दोनों वस्तुएं सफाई और लिखाई के योग्य लाई गई हैं कि नहीं। जिनकी तख्ती स्लेट मैली होती थी उसे सजा का पात्र माना जाता था। सफाई का नियम हर व्यवस्था में, हर स्थान में और हर एक को स्वीकृत हुआ। परन्तु शोक है तो इस बात का अपने भीतर इस परासुव के यज्ञ को भुला बैठे। भीतर की मैल बढ़ती गई और हम मुर्दा हराम और ऊपर लेप वाले बनते गये। जड़ ने भी सफाई का नियम मान लिया। और रिवाज ने भी अनुसरण किया। रिवायत ने भी अमल किया। हमारे आए दिन के जीवन ने भी इस ढंग की हिमायत की परन्तु सब बाहर की जिंदगी के लिए। पर जहां से जीवन बनता है, स्थिरता लेता है, स्थाई होता है वहां यह नियम नहीं चलेगा ऐसा हमारा अनुकरण जड़ पकड़ता गया। इसलिए हम प्यारे पिता के चरणों से दूर होते चले गये। हम आर्य कहलाये जरूर, पर आर्यों के ब्रैंड बन गये, दर्जे हो गये, कोई आर्य किसी दाम का और कोई आर्य किसी दाम का। ऊपर की बात बतलाए अनुसार भगवान भी हमसे इतनी ही मांग रखते हैं कि उसकी पाठशाला में हृदय की तख्ती और स्लेट भी साफ करके लाया करें। यही उनकी कक्षा की एक ही शर्त है और एक ही विधान है। शेष लिखाई भी वह खुद करता है। हाथ पकड़ कर लिखना भी सिखाता है और विषय भी देता है पर

शोचनीय बात यह है कि हम अपनी स्लेट साफ करके उसकी पाठशाला में नहीं जाना चाहते। तख्ती को साफ करने का अर्थ अपना संकल्प अपना विचार और अपनी तैयारी व उत्सुकता का एक प्रमाण देना है कि हम मैल से दूर हों और कुछ सीख लेने के जिज्ञासु हों।" "इमं मे वरुण श्रुधि हवमद्या च मृडया त्वामवस्युराचके" वालेमन्त्र में भी अवस्यु शब्द का भी यही अर्थ है कि हमारी इच्छा उससे शिक्षा लेने की हो। स्वामी दयानन्द ने ज्योंहि विचार कर लिया कि पत्थर की मूर्ति में ब्रह्मांड बनाने की ताकत नहीं होती फिर उनके लिए एक नया संसार बन गया जहां वह बढ़ते ही बढ़ते गये। सतपात्र होने से आर्शीवद, बड़ों का, बुजर्गों का मिल जाता है और वह संकल्प पूरा होकर रहता है। कहते हैं कि एक दिन महाराजा प्रताप का ड्रामा खेला जा रहा था। ड्रामा बहुत शानदार था। महाराणा के स्वतंत्रता के युद्ध की झलक उसके दुःख दर्द की परीक्षा के पार्ट खेले जा रहे थे, महाराणा को लड़की की रोटी का बिल्ली से उठाया जाना, दयनीय अवस्था, शत्रु के जुल्मोसितम, अपने लोगों की दगा, इत्यादि-इत्यादि। आखिर महाराणा हारकर मरने के करीब होते हैं। अपने देश को सम्बोधन करके प्रार्थना करते हैं "भगवान मेरे देश को स्वतन्त्र करना मैंने कोशिश बड़ी की, कष्ट भी सहे परन्तु अपने देश को स्वतन्त्र कराये बिना मैं इस जन्म से चल रहा हूं, हे प्रभु इस प्यारे देश की आपको लाज है।" दृश्य बहुत दर्दमंदाना था, आंसू ला देने वाला था, महाराणा का वक्त आखिरी था, कष्ट यद्यपि झेले जा चुके थे, मगर निपट लेने की गवाही में कष्ट भी ताज़ा हो रहे थे, जुदाई का वक्त बहुत अफसोसनाक हो रहा था। विशेषकर महाराणा का पार्ट प्रस्तुत करने वाले नवयुवक के हृदय बीधने वाले शब्द व अदायगी। विशेष तौर पर नेक आत्मा साफ शुद्ध आत्मा को भी प्रकार ऐसी जैसे खुद महाराणा आकर अपनी दर्द भरी कहानी कह रहे हों। इस ड्रामा में सरदार भगतसिंह के पिता अपने सच्चे मित्र

महता साहिब के साथ बैठ रहे थे जहां जनता महाराणा की जुदाई पर आंसू बहा रही थी वहां सरदार किशनसिंह सरदार भगतसिंह के पिता भी रो रहे थे। आखिर उनसे रहा न गया और अपने मित्र से पूछने लगे कि महाराणा का पात्र अदा करने वाला कौन नौजवान है जिसके हर शब्द पर बिजली टूट २ कर पड़ रही है। महता साहब ने कहा कि रे मित्र महाराणा का पार्ट पेश करने वाला तुम्हारा ही नेक नाम सुपुत्र सरदार भगतसिंह तो है। इस पर सरदार किशन सिंह बोले, काश सरदार भगत सिंह भी अपने देश की स्वतन्त्रता के युद्ध में यही शब्द कहता हुआ देश के लिए कुर्बान होने का मान प्राप्त कर सके. जिस तरह महाराणा को यह दिन देखने नसीब हुए मेरे लड़के की भी ऐसी परीक्षा हो जाए। समय ने शहादत दी। शुद्ध पवित्र स्लेट का मालिक भगतसिंह भी अवस्यु होने का भी पद प्राप्त कर सका पिता की प्रार्थना काम आई। बेटे ने बाप के विचारों की तरजमानी की। जाम ए जिन्दगी से आन्तरिकता पेश कर दी क्योंकि वह सच्चे दिल से देश माता के पुजारी थे। हालात ने भी ऐसी तरतीब ली कि जो वह परमपिता की सच्ची पूजा के अधिकारी बने, वे सत्पात्र थे, इसलिए वातावरण ऐसा बनता गया कि उनके चरित्र ने एक मशाल जलाकर रख दी। यह सचमुच दरुस्त है कि सत्पात्र को वायुमण्डल ऐसा ही मिल जाता है। उसका जीवन ऐसा उभार लेता है कि सद्-भावना सिदकदिली उसके पांव चूमती है। विचारों की बड़ी महिमा है। न तो आंधी न तूफान न कोई बम्ब, न कोई विस्फोट इतनी शक्ति रखता है जितना विचार। विचार अपने सेलाब आप बनाते हैं। विचार पैदा हुए नहीं कि वातावरण बदला नहीं, विचार बड़े शक्तिशाली हैं, हम प्रातः यही विचार बना लें कि हमने सविता देव के आशीर्वाद से साफ होना है, निश्पाप होना है निर्दोष होना है। ज्योंहि अमृत का यह टैप (टूंटी) खुलेगी अमृत भी निकल पड़ेगा। कहते हैं कि सक्खर (सिंध) में एक हेंम कल्याणी नाम का नवयुवक

था। बचपन में ही वो अपने गले में रस्सी डालकर प्रायः यह कहा करता था कि भगतसिंह इसी तरह फांसी पर चढ़े होंगे। उनके मां बाप हैरान होते, भाई बहिन हंस पड़ते। पर बालक की यह नकल उसके लिए भविष्यवाणी कर रही थी १६४२ में एक दिन सखर से एक ब्रिटिश रेजोमेंट ने रात को ट्रेन से गुजरना था। हेमकल्याणी उस ट्रेन को नष्ट करने हेतु अपने दो मित्रों के साथ रेलवे लाइन की फिशप्लेट उतारते हुए पकड़े गये। साथी तो भाग गये, परन्तु हेम-कल्याणी ने अदालत से फांसी की सजा पायी। परन्तु तिथि व गिनती यह बतलाती है कि जिस दिन हेमकल्याणी को फाँसी का हुक्म मिला और जिस दिन उसको फांसी मिली उन दिनों में उसका वजन चार पौंड बढ़ गया था। क्योंकि उसको प्रसन्नता थी देश के खातिर कुर्बान हो जाने की। यह मोती पिरोने लायक उदाहरण, यह बतलाने के लिए कि सत्पात्र अपना हक पाता है। उसकी सुनी जाती है। भगवान उसके जीवन में शुभ कार्य का सौभाग्य देते हैं। कहा तो इतना भी गया है कि एक बहुत पुरानी पुस्तक है जिसमें यह लिखा है कि सच्चे जिज्ञासु को गुरु की आवश्यकता नहीं होती उनको स्वयं ही रास्ता तरतीब सत्प्रेरणा मिलती है उत्साह मिलता है और प्रगति उनके पाँव छूती है। खुशकिस्मती उस पर साया रखती है और सच्ची आरजू लानें की बुलन्द परवाजी ऊँचे विचार और दिव्यता की शोभा यात्रा उनको प्राप्त होती है। स्वभाव उनका सादा, प्राकृतिक और साधुमयी हो जाता है। चरित्र निर्माण एक महान कार्य है जो अपने विचारों को बदलना एक बड़ी साधना कहलाता है। समय हमारे दृष्टिकोण का प्रमाण है। खुले आकाश में आये बिना खुला मैदान नजर नहीं आता आकाश की विशालता ही मानव के विशाल भविष्य का एक गवाह बनता है। नरसिंह हरि एक भक्त कवि गाया करते थे। "नीरख गगन माह। "खुले आकाश को तो देखो" वो भक्त थे। वो जहां खुले आकाश का इशारा देते थे वहाँ अन्दर के

आकाश का रहस्य जानते थे जो दोनों आकाशों को देख ले वो कितना खुशनशीब होता होगा। इसीलिए हमें अपनी रक्षा का व्रत लेना चाहिए। जिज्ञासा बननी चाहिए। उत्सुकता बनानी चाहिए। सत्पात्रता का सत्पात्र होना चाहिए। अपने को समझाने का सौभाग्य लेना चाहिए। ताकि हम उस परम पिता के अनुभव का सम्मान ले पायें। जब हम कह सकेंगे कि भगवान हम तुम्हारी स्तुति करते हैं और तू हमें सुखी कर दे।

———

: ४ :

चौथी भेंट

एक नगरी है जो कि बिल्कुल दृढ़ है अभेद्य है जहाँ पहुंच जाने पर किसी शत्रु का हम पर आक्रमण नहीं हो सकता। वहां पहुंचने के लिए अपने नाम का विमान आप ही उड़ाना पड़ता है और 'तृम्ण' की आत्मबल को रक्षा करनी होती है। बात चल रही थी, "छोड़ते जाओ, लेते जाओ" "हटते जाओ चलते जाओ" और यह पाठ पढ़ा देने के लिए मानव शरीर को साक्षी, अपने अत्यन्त समीपता में देकर परमपिता ने एक अनुपम गुरुपाठ पेशकर दिया है क्योंकि समीपता में ही शिक्षा का साधन अच्छा रहता है ताकि मानव को शिक्षा लेने में देर न लगे, पाठ पढ़ने और समझने में विलम्ब न बने। अब जरा भगवान के अपने शरीर में खेले गये खेल देखने की कोशिश करते हैं। बात सार की यही है कि शक्ति प्राप्त करने और विषाक्तता निकालने के अनुपात बढ़ते जायें तो उससे आरोग्य वृद्धि में अत्यधिक लाभ मिलेगा।

शरीर में उत्पन्न दूषित कार्बनडाई आक्साइड को बाहर निकालना और शुद्ध वायु आक्सिजन को शरीर पोषन के लिए उपलब्ध कराना यह दुहरा उत्तरदायित्व फेफड़ों को निबाहना पड़ता है। फेफड़ों में आंख से भी दीख पड़ने वाली बहुत पतली वायुनलिकाएं

बहती हैं। इन ४० नलिकाओं के मिलने से एक वायुकोष एयरसैक बनता है। यही सघन होकर फेफड़े का रूप लेते हैं। इनकी संख्या प्रायः १६०० होती है। इन्हें श्वास विभाग के सफाई कर्मचारी भी कहा जाता है इन वायु कोष्ठों की लचक भी अद्‌भुत है। इन्हें पूरी तरह फूलने का अवसर मिले तो वे समूचे शरीर से ५५ गुणा विस्तार में फैल सकते हैं, जब हम सांस लेते हैं तब उसे हमारे भीतर बैठे पहरेदारों की लम्बी कतार को अपना परिचय देना पड़ता है मानवीय हृदय सिकुड़ता और फूलता है यदि सिकुड़ कर साफ न हो तो फैल नहीं सकता। हृदय का मुख्य काम शरीर भ्रमण द्वारा अपवित्र खून को प्राप्त करना और आक्सिजन द्वारा पवित्र खून को रगों के द्वारा शरीर को सप्लाई करना है। भ्रूण के गर्भ में बीसवें २० दिन से हृदय यह कर्तव्य आरम्भ करता है और साठ साल की आयु तक सवा दो अरब बार धड़क जाता है। पवित्र खून का यह हृदय १/६ हार्सपावर की शक्ति का काम देता है। जिस पर हमारा जीवन उछलता कूदता है साफ होते जाओ, रास्ता लेते जाओ का नारा, जयकार हमारे यहाँ इतनी जबरदस्त है कि लाखों लाल बिंदू–'सैल्स' १२० दिन का कारोबार समाप्त करके नष्ट होकर नये सैल्स पैदा होते जाते है जो हमारी जिंदगानी बनाते जाते और बढ़ाते जाते हैं। ये कोष्ठ हमें हर सातवें साल नया जीवन देते हैं। यह लाल सैल्स (प्रत्येक) दिल से चलकर शरीर के तमाम अंगों में से गुजर कर ७५ हजार ट्रिप लगा लेते हैं आक्सिजन लेते जाते हैं। और जीवन निर्माण का पुण्यकार्य निभाते जाते हैं। आंख गन्दगी निकालती जाती है अपना प्रकाश बढ़ाती जाती है इसमें जीव जन्तु को मार डालने का विष आंसू नामी चीज से पैदा होता जाता है। यह आंसू 'लाइमोजीम' कहलाते है। जिसमें मुकाबला की अजीब ताकत होती है यहाँ तक कि एक गैलन पानी में एक आंसू डाल दें तो अच्छा खासा कीटाणु नाशक मसाला बन जाता है।

देवियाँ को मासिक धर्म होता है उसे सिर्फ अपवित्र रक्त को शरीर से बाहर निकलने का साधन न माना जाये परन्तु उसकी तह में गर्भ धारण की लीला, सन्तान की उत्पत्ति की मशीनरी, तैयार होती है, शक्ति बनती जाती है, सबसे उच्च कोटि के धर्म सन्तान उत्पत्ति की बुनियाद भरती जाती है। नाक से गंदगी निकलती है शुद्ध वायु को अन्दर लेने का रास्ता साफ होता है। गरजे कि हर हाल में बुराई को छोड़ना और अच्छाई को पैदा करने का वातावरण बनता है पर ये मानव जिसे छोड़ने और प्राप्त करने का वरदान मिला वह परासुव और तन्नासुव की हदबंदो में बंधने को तैयार नहीं। जिस प्रकार फेफड़े सांस को साफ करते हैं उसी प्रकार चार इंच लम्बा २.५ इंच चौड़ा और २ इंच मोटा गुर्दा जल अंश की सफाई अपने जिम्मे लेता है। उसमें दस लाख से भी अधिक नलिकाएँ होती हैं यदि इनको लम्बी कतार में रखा जाये तो ११० कि० मीटर लम्बी डोरी बन जायेगी। एक घन्टे में गुर्दे इतना पानी छांटते हैं जिसका वजन शरीर के भार से दुगना होता है गुर्दा सारे दिन में ४२ गैलन पानी छान जाते हैं ये गुर्दे छलनी का काम अत्यन्त क्षमता से करते है रक्त में क्षारीय एवं अम्लीय न बढ़ जायें इसका भी ध्यान उन्हें करना होता है यह हमारे आंकड़े व जिम्मेदारियां पूरी ध्यान में लाई जाएँ तो विश्वास जम सकेगा कि भगवान का हमारी खातिर लेखा जोखा कितना अमूल्य है।

डा० बेनेट एक सुप्रसिद्ध अमरीकन वैज्ञानिक तथा लेखक ने अपनी पुस्तक Old age its cause and prevention में लिखा है कि प्रकृति ने मनुष्य शरीर की संचालन प्रक्रिया इस प्रकार रखी है कि शरीर का प्रत्येक कोश (सैल) अस्सी ८० दिन पुराना होकर मैल के रूप में उसी प्रकार बाहर निकल जाता है जिस प्रकार समुद्री लहरों में निरन्तर ज्वार भाटे से समुद्र की गन्दगी तट पर जमा होती रहती है। कोष की यह प्रक्रिया आयु बढ़ने के साथ क्षीण होती रहती है जिसका नाम वृद्धावस्था है। यह तो मानव मानता नहीं

परन्तु शुद्ध और पवित्र विचारों वाले लेखक और वैज्ञानिक विचार शक्ति के बारे में अकल्पनीय चर्चाएं कर रहे हैं। डा० मार्डन ने अपनी पुस्तक 'An Iron Will' में इतना तक कह डाला है कि मनुष्य अपने विचार नये कर ले चरित्र को ऊँचा उठा ले तो अपना शरीर भी बदल सकता है। भगवान ने मानव का दिल तो बना दिया परन्तु दिल की धड़कन सिकुड़ना और फैलना एक ऐसी कला दी जिसके कारण रक्त संचार भी होता है और जीवन में समस्तक्रिया-कलाप भी चलते हैं। यह रक्त प्रवाह नदी नाले जैसा नहीं चलता परन्तु पम्पिग स्टेशन जैसी क्षमता रखता है। पम्प में झटका मारने की क्रिया होती है उससे गति मिलती है संकुचन प्रकुंचन से झटका लगता है और उसके दबाव से रक्त नीचे जाता और ऊपर आता है। हृदय की धड़कन रक्त की परिभ्रमण में काम आने वाली गति की व्यवस्था करती है। कोई यन्त्र लगातार काम करने से गर्म हो हो जाता है। श्रम के साथ विश्राम भी आवश्यक है, श्रम में शक्ति का व्यय होता है। विश्राम उसको फिर से जुटा देता है। भगवान की लीला का क्या कहना। मैल निकालते जाना पवित्रता लेते जाना। कितना महान वरदान है। एक धड़कन एक मिनट के ७२वें भाग में, एक सैकिंड के ५।६ भाग में सम्पन्न होती है। इस अल्प विधि में ही असंख्य विद्युत तरंगें इस संस्थान से प्रवाहित होती हैं, आवश्यकता के अनुकूल हृदय की गति में भी फर्क पड़ता है। शरीर हर एक का अपना २, हृदय अपना २, व्यवस्था अपनी-अपनी, और धड़कन अपनी-अपनी, हृदय एक होते हुए भी उसके मध्य भाग में एक मांसपेशी उसे दो भागों में बांट देती है। इस कल कारखाने से हमारी धड़कन और रक्त प्रवाह का नियम बनता है। तीन वर्ष के बच्चे का एक मिनट में एक सौ बार और मनुष्य का ७२ बार दिल धड़क जाता है जबकि नवजात शिशु के हृदय की प्रगति आवश्यकता के अनुरूप उन दिनों एक मिनट में एक सौ चालीस बार धड़कती है। चूहे का हृदय ५०० बार, चिड़िया का २५० बार, मुर्गी का २०० बार,

खरगोश का ६५ बार, घोड़े का ५० बार हाथी का ४० बार एक मिनट में हृदय धड़कता है। जिस अङ्ग प्रत्यङ्ग को देखें यह सारी नियमावली अत्यन्त रोचक व विस्मय पूर्ण पेश होती जाती है। भ्रूण के शरीर से मल भी बनता है उसे बाहर निकलना आवश्यक भी होता है। जिस झिल्ली का वर्णन पहली भेंट में किया गया है वह अपने आप मल को बाहर लाती जाती है और माता के रक्त में धकेलती जाती है उसकी सफाई माता के रक्त को अपने निज की सफाई के साथ २ करनी पड़ती है। उपलब्धि की तरह परित्याग का सिद्धान्त अपनाया जाना कितना आवश्यक है इन सबसे जीव की सृजनात्मक गति का अद्भुत परिचय मिलता है निर्माण का संकल्प जब कार्य रूप में परणित होने के लिए आतुर हो उठे तो सहयोग साधन और परिस्थितियां उसके अनुकूल होती चली जाती हैं। भ्रूण के कलोल हृदयंगम करने की आवश्यकता इसलिए भी है कि बुद्धिमान कहलाने वाले लोग दोनों हाथों से अनावश्यक धन संग्रह में जुटते हैं और स्व इच्छा अनुसार त्याग के समय कंजूसी दिखाते हैं जिसके परिणाम स्वरूप भार का संग्रह विषाकता जीवन की नाव को बीच मझदार में डुबा देने का कारण बनता है। यद्यपि बच्चा बच्चा है माता के समुन्नत शरीर में उसका क्या ही अनुपात है परन्तु शक्ति सम्पन्न भगवान की कृपा यह कि आरम्भ से इतना सम्पन्न कि बच्चों का रक्त अपना स्वतन्त्र होता है। संकटों से जूझने में वह रत रहता है और साथ-२ जीवन निर्माण में बड़ी कुशलता लेता है जिसका वर्णन ऊपर की इस बात से भी सन्मुख आ सका है कि हर तीन सैकिन्ड की तबदीली हमारे अन्दर ही अन्दर कितनी लाख योनियों की सृष्टि बना जाती है। सारे शरीर के अन्दर हमारा सर्वस्व हमारा खून कहाँ से कहां घूम आता है। सच पूछो तो सारे मनुष्य का अनुभव शरीर का अनुभव है। सारे योगी का अनुभव सूक्ष्म शरीर का अनुभव हैं, सारे परम योगी का अनुभव परमात्मा का अनुभव है। लगभग दो लाख स्वेद ग्रन्थियां शरीर के हानिकारक

पदार्थों को पसीने के रूप में निकालती रहती है। मुट्ठी के बराबर हमारे दो गुर्दे रक्त का अनावश्यक एवं गन्दगी भर जल छांट-छांट कर अलग करते और बाहर निकालते रहते हैं। बायीं ओर का गुर्दा थोड़ा ऊपर और दायीं ओर का थोड़ा नीचे ताकि इनके कार्य कलाप में कोई कठिनाई ही न हो पाये। आवश्यक नमक यदि शरीर में रुक जाय तो सूजन शुरू हो जाती है। प्रतिदिन दो लीटर मूत्र बनाकर गुर्दे नमक, फास्फेट, सल्फेट पोटेशियम, कैल्शियम, मग्नेशियम, लोहा, क्रिएटाइनिन, यूरिया, अमोनिया, यूरिक एसिड, नाइट्रोजन आदि की अनावश्यक मात्रा शरीर के बाहर धकेलते रहते हैं। मूत्र सामन्यतः हल्का पीला होता है। दोनों गुर्दों में परस्पर सहयोग का क्या कहना। एक खराब हो जाए तो दूसरा उसका भार संचय संभाल कर पूरी तरह दायित्व का निर्वाह करता है शोक है तो यही है कि ऐन अपने पड़ोस में अपितु अपने में जीवन को process में लेने देने की सौदागिरी, मंडी इतनी व्वस्त बन रही है परन्तु हम अज्ञानी इस राज़ भरी व्यवस्था से अपरिचित ही चले आते हैं। हमारे ही भीतर नसनाड़ियों का बिछा जाल लगभग १२००० मील लम्बा है।

इन थोड़े से पृष्ठों में अपने यहाँ का व्यापार जितना कुछ समझ में आया, रखने का प्रयास किया है खास तौर पर जबकि मैं कोई डाक्टर तो हूं नहीं। हर वक्त यह गाड़ी हमारी चली जा रही है पर यह नहीं मालूम कि गाड़ी चल रही है, एक ही स्थान पर, हमारी अज्ञानता यह कि वे चली ही कैसे जा रही है। यह नहीं मालूम कि कहां चली जा रही है ? कहाँ रुक रही है ? और हम कहाँ के यात्री कितना व्यापार कितनी सौदागरी के स्वामी हैं। २४ घण्टे में हमारा रक्त इत्यादि ६००० मील सफर तै करता है। सफर इतना लम्बा इसपर भी सुल्झा हुआ, नियंत्रित भी प्राणरूप इतने बड़े मानव जीवन की शोभा का अन्दाज श्री जय प्रकाश नारायण के उभरे रोग से अधिक विचार में यूं आता है कि जब उनके गुर्दे काम करने से रह गए तब उन्हें

डायालिसिस द्वारा यातना का शिकार होकर जीवन संग्राम में कमर कसनी रहती है इस प्रयोग से सारे शरीर का सारा खून एक नली के द्वारा कृत्रिम गुर्दा यंत्र में ले जाया जाता है जहां साफ करके दूसरी नली द्वारा फिर शरीर में प्रविष्ट किया जाता है यह सफाई का प्रोग्राम हर तीसरे दिन किया जाता है इस गति विधि के लिए लाखों की मशीन व सावधानता बर्ती जाती है। नमूना साक्षात् दृष्टि में आ गया है जिसके मुकाबले में परम परोपकारी पिता की सावधानता कुशलता व निर्विघन कार्य क्रम की कल्पना हमारे सूझ बूझ के लिए सामग्री प्रस्तुत करती है गुर्दों की कार्य क्षमता की विलक्षणता विचारणीय है गुर्दों की बीमारी से त्रस्त रोगी के जीवन में एक ऐसा समय भी आता है जब वह जिंदगी व मौत के बीच लटक रहा होता है जब गुर्दे सफाई का काम १५% से कम करने में असमर्थ हो जाते हैं तब शरीर में दूषित पदार्थ एकत्र होता जाता है जैसे जैसे इस गंदे माल की मात्रा बढ़ती जाती है रक्त शुद्ध करने की क्षमता घटती जाती है जीवन के दिन भी कम होते चले जाते हैं इधर मूत्र द्वारा गंदा माल निकाला जाता है उधर रक्त कणों के उत्पादन को नियंत्रित करने में इनका हाथ चलता है दोनों गुर्दों में २० लाख मूत्र इकाइयां हैं जो यदि धीरे धीरे नष्ट होने लग पड़ें तो शरीर दुर्व्यवस्थित हो जाता है। विस्तार पूर्वक इस विषय को छेड़ने से डाक्टरी छंटने लगेगी हम तो अपना पाठ पढ़लेना उचित जानकर फिर पुराना राग अलाप सकते हैं कि शरीर में सफाई शरीर की स्थिति का वास्तविक कारण है एवं आत्मा के लिए भी शुद्धि आत्मा के अमर पद का हेतु है।

एक दिन एक साधु रात रहे नदी पर नहाने चला गया। थोड़े फासले पर एक व्यक्ति नाव चला रहा था जो साधु को सम्बोधन करके बोला-महाराज मेरी नाव नहीं चल रही यद्यपि पतवार भी लगा रहा हूं साधू ने दृष्टि मारी और उससे कहा भाई तुमने नाव को खूंटी से जो बांध रखा है उसे खोला नहीं नाव चलेगी क्योंकर

चाहे पतवार भी मारते रहो। ठीक इसी तरह हम जीवन के पतवार मार रहे हैं परन्तु कोई अपवित्रता में ठसे हमारे विचार जिन खूंटों से बंधे हैं उनसे नाव रुकी हुई है जीवन धारा आगे चल ही नहीं रही। जो सोचने का विषय बन जाता है यदि हमने अपने से न्याय करना ही है।

———

: ५ :

पांचवीं भेंट

शरीर एक है परन्तु सूक्ष्म, शरीर अनेक हैं हम देख रहे हैं बहुत बल्ब जल रहे हैं परन्तु उनमें बिजली की करेंट तो एक है और सूक्ष्म है। हमारा अनुभव भिन्न भिन्न शरीरों की आड़ में स्थूल शरीर तक रुक जाता है। यही अनुभव है जो जीवन के सारे अंधकार का कारण है, पेचीदा है समस्या है। लगता ऐसा है जैसे हमारे अन्दर लोग वास करते हों। कई बार हम चाहते हैं क्या, हो जाता है क्या। इसी-लिए महाराज कृष्ण को अर्जुन ने कहा था—न चाहते हुए भी हमें पाप लपेट लेते हैं। कई बार हत्यारों ने स्वयं माना है कि वे नहीं चाहते थे फलां को मारना, पर वह मार ही बैठे। हजार बार हम निर्णय लेते है कि ऐसा नहीं करेगें परन्तु ऐसा हो ही जाता है। शाम को हम निर्णय लेकर सोते है कि प्रातः काल इतने बजे उठ जायेंगे। परन्तु उठते समय एक लहर ऐसी गुजर जाती है जिसके कारण हम सोये ही रहते हैं और फिर जब प्रातः नींद से जाग पड़ते हैं तो पछताना होता है कि हम सोए क्यों रहे। विद्वान कहते है कि हमारे बहुत चित्त हैं इसलिए हमें सरलता नहीं बन पाती। हमारे अन्दर कई आवाजें चलती है एक आवाज कुछ कहती है दूसरी कुछ। क्रोध कर बैठने के बाद हमें विचार आता है क्रोध हो क्यों गया। इसका अर्थ यूं समझ आता है कि हमारे अन्दर अनेक अध्याय अपनी तसवीर

पेश किए जाते हैं और हम विना रोक थाम के इन स्वतन्त्र चित्रों में उलझे रहते हैं। रात्रि के स्वप्नों की दुनियाँ को समझने वाले विचित्र रूप-रेखा वना रहे हैं। स्वप्न अपनी स्मृति छोड़ जाते है सारे छाप की लकीर भी हमारे यहां मौजूद रहती है। कुरेदने वाले समझ सकते हैं कि हमारा मन कितने बोझों से लद रहा है जब तलक इस यन्त्र को सरल शुद्ध हल्का नहीं किया जायेगा, मांजा नहीं जायेगा, हमारी यात्रा असफल और भयानक वनती चली जायेगी। हम अपने नाव के खूंटों की रस्सी के इधर उधर घूमते देखे जायेंगे जिस आत्मा ने प्रजापति तक पहुंचता है जिसका इतना विशाल अन्तरिक्ष, जिसका इतना ओजस्वी सूर्य चन्द्रमा, पृथ्वी, सागर और पाताल है उस देवों के देव तक पहुंचने के लिए एक निर्णात्मक चाल चलनी होगी।

सप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग इत्यादि पत्रिकाओं में आये रोज मानसिक रोगों की भिन्न से भिन्न कहानियाँ बतलायी जा रही हैं जिससे रोमांचित होना पड़ता है। जिनका वास्तविक कारण अपने अन्दर के मल विकार करार पाते हैं। दिन भर की जीवन चर्या रात को स्वप्नों का शिकार बनाती है। जो मन हमारे संस्कारों का एक भरा २ सागर है। जब तक इनका नियन्त्रण नहीं होगा इस सागर में नाव सुभीता से चल नहीं सकेगी। जब शरीर का मैल बाहर न निकले तो बुखार, सूजन का कारण बनता है। इसी तरह से यदि हमारा अपवित्र विचार साफ नहीं होता वह हमारे अन्दर भी बुखार और सूजन पैदा होगा। हमें बड़े ध्यान पूर्वक देखना है कि कौन विचार कहाँ से आया। क्यूं आया कैसे आया। जब भगवद् प्राप्ति भी एक निश्चय से होती है उसके पाने का रास्ता भी एक निश्चित ढंग से पकड़ना पड़ेगा। केवल सात्विक, निर्लेप होकर ही उसकी दिव्यता का प्रसाद अपनी तप और तपस्या से प्राप्त करना होगा। सतत प्रयत्न से अपने आप को उज्जवल वनाकर निष्पाप होकर नम्र श्रद्धालु और वरदान के आशीर्वाद का सत्पात्र होना होगा। यदि दुःख न होता तो शायद मनुष्य भगवान के नजदीक न जाता।

दुःख दूर करा लेने की इच्छा हमें उसके पूजारी बना लेने का हेतु बना लेती है जितनी बारीकी से देखा जाय यही प्रमाण मिलेगा कि पवित्र को पवित्रता से प्राप्त किया जाता है। सरल को सरलता से ही पाया जाता है। निर्दोष और दोष रहित हो जाना एक बड़ी नियामत है—यह एक बड़ी भारी परीक्षा है, साधना है जो ढंग से बढ़ती जाकर ढंग से काम आयेगी। इसको एक कथा द्वारा अधिक प्रकाश से देखा जा सकता है।

एक सन्त के पास एक बार एक जिज्ञासु गया, मन की शान्ति प्राप्ति के लिए। दो तीन मास उस सन्त के पास जिज्ञासु रह गया पर शान्ति न मिली। निराश होकर वो एक रोज अपनेगुरु के आश्रम से चले जाने की आज्ञा लेने गया। परन्तु सन्त ने उसे एक सराय के मालिक के यहां दो तीन दिन रह कर उसके रंग ढंग समझने की राय दी। जिज्ञासु भी मान गया। वो उस गांव की सराय के मालिक के यहां रहने लगा। उसको दिनचर्या ध्यानपूर्वक देखता रहा। सराय का मालिक हर अतिथि की पूरी देख-भाल करता, खाना खिलाता, बिस्तर लगाता, उसके वर्तन साफ करता। अतिथि की सवारी ऊँट तथा घोड़े की भी देखभाल कर देता। इस तरह अपना कर्त्तव्य निभा देने पर जब अतिथि चला जाता तो न उसे याद करता और न ही उसके प्रति किसी प्रकार की मोहमाया रखता। ऐसा विस्तार पूर्वक व्यवहार उसका देखकर तीन रोज के बाद जिज्ञासु फिर अपने गुरु के पास आया और सराय के मालिक का सारा कर्त्तव्य-पालन कह डाला, फिर भी सन्त ने कहा कि क्या सराय के मालिक का जो सबसे पहला काम उठते ही करने का था उसे भी देखा। जिस पर जिज्ञासु ने कहा कि वे काम वो नहीं देख पाया इसलिए उसे फिर वहाँ जाना पड़ा और जाकर उसने यह देखा कि उठते ही सराय का मालिक रात को धोये बर्तन दोबारा झाड़ पोंछ करके अपने किचन का काम चालू करता था जब उसके बारे में उस मालिक से कहा कि वो जब रात को वर्तन धोकर रख देता

है फिर प्रातःकाल उन्हीं वर्तनों को दोबारा झाड़ पोंछ क्यों करता है, जिस पर उस मालिक ने यह वतलाया कि रात भर रखे हुये बर्तनों पर जो रात में धूल चढ़ जाती है उसे भी तो साफ किया जाना आवश्यक है यही शब्द थे जिसे जिज्ञासु ने पकड़ लिए कि यहाँ भी रात को हमारे मन पर अनेक प्रकार की धूलि चढ़ जाती है उसे प्रातःकाल साफ कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। क्या यह ठीक नहीं कि हम खुद व हमारे घर वाले स्वयं सुबह सवेरे अपने मकान के दरवाजे और खिड़कियों के शीशे साफ करते हैं जबकि पिछली रात साफ अवस्था में ही उन्हें छोड़ा था। इसी प्रकार साधक लोग भी अपने आप को स्वच्छ करने के लिए रात भर के अशुद्ध अपवित्र उलझे और बिखरे विचारों को ठिकाने लगा लेने के लिए परासुव के सच्चे पुजारी बनें। ताकि सत्त प्रयास का यह नियम ये अभ्यास हमारे पवित्र जीवन में एक क्रम बन जाये। वेद के एक मंत्र द्वारा :—

पवमानस्य ते वयं पवित्रं अभ्युन्दतः।
सखित्वं आ वृणीमहे ।।

यह कहा गया है कि जब मनोविकारों का सूखा और गीला मैल निकल जाता है तभी तुम्हारे हृदय में पवित्र रस का स्पन्दन होना आरम्भ होता है और फिर हम में दिनों दिन सात्विक रस भरता जाता है। हे सोम ! हम तुझसे इसी सात्विक सुख की भिक्षा माँगते हैं हे जगत् को पवित्र करने वाले ! जिस सख्य के हो जाने से तुम्हारी पवित्र कारक धारा मनुष्य के हृदय को सदा माधुर्य से रसमय बनाये रखती है उसी सखित्व को बनाये रखने की भिक्षा हमें प्रदान करो।"

ध्यान से देखा जाय नाना प्रकार के अन्तःकरण की तरंगें मानव को जोकों की तरह चूसती रहती हैं। उनसे बचने के लिए अपने यहां महान स्तोत्र को विराजमान करना, साक्षात् करना, उसकी ल

में सम्मिलित हो जाना, परम शान्त सुखी तथा आनन्दित होने का रहस्य है। एक और वेद मन्त्र द्वारा भगवान को जो स्वभाव से ही शत्रु रहित और सनातन है उसका बन्धुत्व पाने की इच्छा की गयी है। भगवान को 'जनुषा' शब्द से सम्बोधित किया है जिसका यह अर्थ नहीं कि उसका कभी जन्म होता है वह तो सनातन है। सनातन रूप से ही वे शत्रु-रहित और बन्धु रहित है पर सनातन होते हुए भी वे हमारे बन्धुत्व को चाहते हैं और इस बन्धुत्व को वे युद्ध द्वारा भी चाहते हैं जिसका अर्थ यह है कि हम साँसारिक व्यवहार, निजी अनुभव और खेलकूद से भली प्रकार परिचित हो जायें और पक्का यकीन कर लें कि परमेश्वर के बिना हमारा कोई सहायक उद्धारक तथा कल्याणकारी नहीं है।

ऐसी साधना सतत प्रयास के पश्चात् जब भक्त में पूरी धारणा बन जाती है तब वह यह कह देने का सौभाग्य ले लेता है कि "हे भगवान अब मैं तेरे बन्धुत्व पाने के समर में ही कमर कसे खड़ा हुआ अपने को पाता हूं जितनी बार मरूँगा इसी समर की युद्ध-भूमि में मरूँगा और अन्त में तेरे बन्धुत्व को पाकर ही दम लूंगा। यह मेरी इच्छा है यही मेरी तुमसे प्रेममय वन्दना है। यह है वास्तविकता या रूप अपने पवित्र हो जाने का, उसके प्रसाद के सत्पात्र हो जाने का, तथा जीवन को प्रगतिशील बना लेने का।

———

: ६ :

छठी भेंट

हिन्दुस्तान टाइम्स के १२-३-७५ के अनुसार 'कैरो Cairo में एक तोता खोया गया दो महीने के बाद वो मिल पाया जबकि वह एक भीड़ में अपने मालिक का नाम 'जनरल जुसद्दीन' बुलाता.बुलाता फिर रहा था। वह तो पशु था, उसे रट लगाना आता था, परन्तु पहचान खोये हुए स्वामी को तलाश कर लेना मुश्किल हो रहा था हम भी अपने वेद मन्त्रों के रट के आदी हो गये हैं मन्त्र के यह शब्द केवल रट के लिए ही नहीं परन्तु यह काश्त की शक्तियाँ हैं। काश हम खेती बाड़ी की तरह अपनी धरती पर पवित्र विचारों की उपज एक खेती बाड़ी की तरह्न करें तब परिणाम भिन्न हो सकेंगे। आज विज्ञान की दृष्टि में खेती बाड़ी भी एक बड़ा विज्ञान बन रहा है किस तरह नाली गहरी खोदो जाती है सीधी खेंचीं जाती है जमीन नर्म बनाई जाती है फिर उसमें बीज भी वो जो हर तरह से सुरक्षित, सींचा हुआ, पका हुआ, अज़माया हुआ,डाला जाता है इस ध्यान पूर्वक गतिविधि के पश्चात् ऐसा बीज पौधे का रूप लेता है। अच्छे विचार, उत्तम लक्ष्य, पवित्र संस्कार, शुद्ध, धरती पर फला फूला करते हैं।

एक दिन एक अध्यापक ने अपनी कक्षा के बालकों को घर से कई प्रश्न हल कर लाने को दिये। दूसरे रोज जब बालक आये तो प्रश्न देखे गये जो उन्हें घर से हल कर लाने थे। एक छात्र सारे प्रश्न

ठीक हल कर लाया था। अध्यापक ने उसकी सराहना की उसे इनाम देना चाहा। परन्तु वह छात्र रो पड़ा और यह स्वीकार कर दिया कि उन प्रश्नों में से एक प्रश्न उसने अपने मित्र को सहायता से ठीक हल किया था क्योंकि वह सारे प्रश्न ठीक स्वयं हल न कर सका था इसलिए वह अध्यापक महोदय के मान और इनाम का पात्र नहीं था। अपितु दोषी था। इस पर अध्यापक महोदय तो और प्रभावित हुए और उसे पारितोषिक का सत्पात्र करा दिया। यह बालक था जो आगे चलकर गोपाल कृष्ण गोखले के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जीवन की धरती को जिन्होंने उपजाऊ बनाया है उनके इतवार कुछ और से हैं। जीवन का अर्थ न समझ सकने वाले समय को कत्ल कर चुके हैं अब बदला लेने की खातिर वे नावलें पढ़कर जुआ खेलकर ताश खेल, आवारगी से वक्त को कत्ल करने में लगे हुए हैं हम तो इस तरह अपने सिरों पर कफन बांधने में लगे हुए हैं।

मैं एक सज्जन को जानता हूँ जिसने पाकेट साइज़ नावल लिखवा-लिखवा कर लाखों रूप बना लिए हैं जिसे लड़के लड़कियां ये सस्ते नावल जेबों में भर कर दूसरों के ख्याली पुलाव से, खुशनूदी, से कल्पना के हवाई घोड़ों से, दूसरों की बुराई से, दूसरों की गिरावट से अपने को खुश करने की अपने ही लिए एक नई साजिश तैयार कर रहे हैं। यह सस्ता साहित्य हमारे लिए जहरे-कातिल का रूप ले रहा है। आप देखिए मानव शरीर पर छोटी सी चींटी कहीं भी चले, त्वचा एकदम सूचना देती है, चींटी को हटा अपने को साफ करने का विचार आनन फानन पैदा हो जाता है परन्तु हमारा मन इसे यदि ठीक रूप में समझ जाय तो बड़ा मान हो जाय वरना यह मन बड़ा नाजुक है वहां हमारे विचार हमको चकाचौंध करते रहते हैं परन्तु हम वहाँ से इन बिन बुलाये मेहमानों को दूर करने के लिए तैयार नहीं होते। कहा जाता है धरती पर हर साल लगभग ६०००० झटके जलज़लों के आ जाया करते हैं। परन्तु उनमें से बहुत को हम जान और पहचान नहीं पाते। इसी तरह हर एक

जीवन में दिन भर में कितने तूफान, लहरें, उतार चढ़ाव आते हैं उनके आगमन का हमें पता नहीं होता। हम अपने आप को इतना गैर हाज़िर रखते हैं कि जैसे कुछ हुआ ही नहीं। परन्तु सत्य यह है कि हमारे बेतरतीबे बिन सभाले विचारों की ट्रेन के यह धमाके हमारी आन्तरिक धरती को उथल पुथल कर देने के कारण बनते हैं।

संसार में सबसे महान पहाड़ हिमालय कहा गया है उसकी सबसे ऊंची चोटी एवरेस्ट २९००० फुट गिनी गई हैं यदि उसे समुद्र में डाल दिया जाय तब भी समुद्र का पानी ६००० फुट उस चोटी के ऊपर पाया जायेगा। परम पिता की इतनी विशाल प्रकृति परन्तु उससे भी विशाल रचना हमारे अपने मन की है जिसके पाताल की कोई पैमाइश नहीं विचारों के सागर में। इसलिए उनकी संभाल, उनकी गतिविधि, उनका हिसाब किताब करना अत्यन्त उचित है। मगर यह सब है उसके लिए जो अपनी ऊंचाई और नीचाई अपनी विशालता और लघुता की जांच पड़ताल करने की इच्छा रखता हो जो अपने आप को अपने प्रभुत्व का उत्तरदायी मानता हो, जिसे उसकी दरबार की हाज़री में जाना हो। उसके हजूर में पेश होना हो। अपनी पुस्तक, अपना लेख, अपनी रचना, अपनी उपज, अपना ही भाग्य यह सब हमारे ही हैं, पर हम हैं लापता। यह अच्छा तमाशा बन रहा है। अपने अभीष्ट मन्त्र की व्याख्या जो है वो चन्द शब्दों में लिखी जा सकती है परन्तु उसकी वास्तबिकता भी कुरेदना ही मेरा लक्ष्य है।

चीन के प्रसिद्ध फिलासफर (लाउटजे) से प्रश्न किया गया कि धर्म क्या है। उसने उत्तर दिया कि "धर्म एक घोड़ा है जो हमारी मंजिल तय करता है, हम उस पर सवारी करने में जितने सिद्ध होंगे उतने ही हम धर्म की मंजिल के करीब होंगे। यह घोड़ा उसका सगा है जो उसे भली-भांति पहचानता है। यूं तो दुलत्तियां खाने वालों की कमी नहीं होती लेकिन मैं किसी सवारी के हक में नहीं हूं। मानव स्वयं ही अपनी मंजिल है जबकि वह अपने अन्दर की वाटिका में

आकर आयु के फूल चुन चुका हो। एक और प्रश्न उसके सामने पेश किया गया क्या कोई ऐसा मरहम भी है जो तन मन के जख्मों को भर सके, इसके उत्तरमें आपने कहा कि जिसके जख्म हैं वही उसका मरहम है हम अपने ही द्वारा अपने जख्म भरते है। सबसे बडा जख्म द्वेष का है जो प्रेम के द्वारा भरा जा सकता है। परन्तु उनके लिए है जो अपने जख्मों को साफ कर सके। जिन्हें अपने जख्म नजर आते हों, जिन्हें अपने दोष प्रतीत होते हों। डाक्टर बेचारा क्या करेगा जब हम अपने जख्म आप ही छिपा सकते हैं। जिसे मैली पट्टी से ढांप लेना, छिपा लेना, हमारे लिए एक मनपसन्द कार्य है। वे जख्म हमारे जान लेवा हो सकते हैं इसलिए मन्त्र के पहले सारगर्भित शब्द परासुव की व्याख्या में पेश किए जा रहे हैं वह सिर्फ यहीं है कि हम इमानदाराना तौर पर अपने दुर्गुण, अपने बुरे विचार, बुरे संस्कार, शुद्ध करने की तरफ लग जायें। तब कहीं जाकर हम उनके चरणों में बैठने का सौभाग्य लें सकेंगे। सच्चाई से अपने अन्दर का हिसाब किताब प्रगति का सच्चा मार्ग है। व्यापार उनका चलता है जो रोज़ का बही खाता लिखते हैं। चैकिंग ठीक-ठीक करते हैं और होशोहवास के आधार पर खर्चे का लेखा जोखा रखते हैं।

सर बेडेन पावल ने संसार भर में स्काउट्स का कार्य-क्रम चलाकर बड़ा नाम पाया। प्रत्येक स्काउट् को अपना जीवन रूप रखने के लिए डायरी रखने की आज्ञा दी जिसे उसमें अपने हर रोज़ के अपवित्र विचारों को इन्दराज करने की अनुमति दो। यह सचमुच वास्तविकता है कि मानव बड़ी कठिनता से स्वयं को समझना है। साधारण जन इस पहलू की परवाह ही नहीं करते। वे अपने को पर्दा दे देने में बड़े बुद्धिमान हो जाते हैं। हमारे शास्त्रों में भगवद्गीता में आन्तरिक दुगुर्णों का बड़ी बारीकी से वर्णन किया है। पाप क्लेष उनके भी कई तत्व हमें अपने से अनभिज्ञ करने में सफल रहते हैं। स्थान.स्थान पर महाराज कृष्ण को मधुसूदन शब्द से सम्बोधित किया गया है। इस शब्द का शुद्ध अर्थ मोह से दूर होना है। यही

मोह ही बहुत बुराइयों का कारण बनता है मानव-स्वभाव को बारीकी से समझ सकने वाले कह पाये हैं कि आम आदमी किस तरह दूसरों के दुःख में संतोष और प्रसन्नता अहसूस करता है। दूसरों के असफल होने की अवस्था में, शक्ल में, अपने आप को सुखी जानता है। अस्पतालों में बैरकें इसलिए बनवायीं ताकि प्रत्येक मरीज़ अपने कमरे में पड़े अनेक मरीज़ों को देखकर तसल्ली ले। जेलों में एक ही बैरक में बहुत से कैदा देखकर अपनी कैद भूल सी जाती है। समूह में हुई बेईज्जती महसूस नहीं होती। क्योंकि उसके बहुत से भागीदार होते हैं। हम दूसरों का मजाक होते देखकर दिल ही दिल में प्रसन्नता का अमुभव करते हैं। परन्तु यह ढंग हमारे रंग को विगाड़ने वाले जंग आलूदा करने वाले हमारी प्रगति में बाधा बनते हैं। यह बुरा मानने की बात नहीं क्योंकि दोषों को देख पाना एक बड़ा सौभाग्य है। इसलिए ही 'परासुव' पर इतना जोर डाला जा रहा है। सचमुम वे सौभाग्यशाली हैं जो कम से कम अपने दोषों को जान और पहचान तो लेते हैं उनका दूर करना भले एक लम्बा कोर्स हो परन्तु उनकी विद्यमानता का अनुभव एक बड़ा कीमती राज है। सही अर्थों में 'परासुव' की देख रेख में दिव्य जीवन का आरम्भ है जहाँ शर्म झिझक को स्थान न देकर ठीक जायजा लेना अपने ऊपर बड़ा एहसान हैं। 'परासुव' की देख रेख उस परम उत्कृष्ट की देन का एक सुन्दर साधन है। भगवान भली प्रकार जानते हैं कि हम कमजोर हैं, बेसहारा है, बार-बार गिर पड़ने के आदी हैं, अपने दुगुणों से मजबूर हैं। अपने दोषों से पाश पाश हो जाने के पात्र हैं। इसलिए भी वह हमारी इस अवस्था को साहस और प्रेम से साधने का अवसर देने के प्रवर्तक हैं। केवल आवश्यकता है हमारी स्वीकृति की। हमारे इकबाल की हमारे एमाल की, हमारे एत्तदाल की, हमारे दुर्गुण भरे हाल की, हमारी सीधी चाल की, हमारे राग और द्वेष के बाल-बाल को, हमारे हर बाल के खाल की, हमारे निष्कपट भरी ताल की, सुगन्ध पूर्ण नाल की, हमारे अन्दर ही पैदा हुई पेचीदगियों से युक्त जाल की, सही

शक्ल में पेश करने के अहवाल की, तब कहीं जाकर वह महाराजाधिराज सहानुभूति से तन्नासव की कृपा कर दिया करते हो इसी तरह दिल भरी कोशिश सँजीदा आत्म सम्पर्ण ही हमारे लिए सफलता का सुहाग लाने में वरदान बनता है। वेद में तो जगह-जगह पर सुन्दर तरंगे आत्म अनुभव की, प्यार की, उपासना की, और परमपिता के आर्शीवाद की विचार धाराएं लिखी गयी हैं। इसी सिलसिले में एक मन्त्र के विचार समझ लेने से प्रेम बढ़ेगा।

ये ते पवित्रमूर्मयो अभिक्षरन्ति धारया।
तेभि र्नः सोम मृडय ॥

हे सोम! अपनी शीतल सुखदायनी और ज्ञान अमृत वर्षीणो धाराओं से तूने इस जगत् को व्याप्त कर रखा है। इन्हीं द्वारा यह जगत् धारक हुआ है नहीं तो यह जगत् का रस कभी का सूख चुका होता। मैं अपने जीवन को पवित्र बना रहा हूँ ताकि तेरी जगत् व्यापक धारा से आई तरंगें मुझ में पैदा होवें जिसके कारण मेरे अन्त:करण में तुम्हारे प्रति आकर्षण बने। जैसे चन्द्रमा के आकर्षण से समुद्र जल में ज्वार भाटा आता है उसी तरह से सच्चे सोम मेरे पवित्र हुए मानसरोवर में तेरी सोम धारा से महान आकर्षण से कुछ तरंगें उठें। विश्व-प्रेम वीरता अदम्य उत्साह, सर्व अर्पण कर डालने की उमंग दुखित मात्र पर दया इत्यादि ऐसे सनातन व्यापक भाव आवेश हैं जो तेरी जगत् धारक महान घारा के अनुकूल हैं। इसलिए हे मेरे सोम मेरे मानस में उन्हीं तरंगों को उठाकर मुझे सुखी करो जो तरंगें पवित्र हृदय में तुम्हारी धारा से उठती हैं। यही तरंगें उठ। खूब उठें, ऊँची उठें, महान होकर उठें ताकि आनन्द मग्न होकर मैं तेरी ऊंचाई के सस्पर्श का सुख अनुभव कर सकूं। यही सोचने की आवश्यकता है कि हम कहां पहुच सकते हैं, किस लोक में अपना अनुभव ले सकते हैं, भगवान सबको यह वरदान दे ताकि उस सुख-स्वरूप की सुख सामग्री हमें प्राप्त हो।

यह अवस्था प्राप्त होती है बड़ी छानबीन, प्रयास और लगातार कोशिश से। जैसे छोटे से कंकर भी खेती बाड़ी में, उपज में बाधा डालते हैं। ऐसे ही छोटे-छोटे दोष किसी के जीवन को कहां का कहां ले जाते हैं यह रूपरेखा देखन को बनती है। छोटे-छोटे दोष दूर करने से सफलता जल्दी मिला करती है। इस सत्य की जांच एक ऐतिहासिक घटना से देखने वाली है। शिवाजी जिन दिनों मुगलों से टक्कर ले रहे थे। एक दिन सायं को थके मांदे एक बुढ़िया की झोंपड़ी में जा पहुंचे क्योंकि दिनभर के भूखे और प्यासे थे। बुढ़िया से खाने पानी की मांग भी कर दी। उस समय बुढ़िया के घर में कोदों का साग था उसने प्रेम पूर्वक उसका भात बनाया और पत्तों की पत्तल पर रखकर शिवाजी के सामने परोस दिया। शिवजी देर से भूखे तो थे ही, उन्होंने एकदम खाने के उत्साह से पत्तल के ऐन मध्य में हाथ डाल दिया और अपनी उंगलियां जला बैठे जिस पर अपने मुँह से फूँक-फूँक कर जलन शान्त करने लगे। तब बुढ़िया ने आंखें फाड़-फाड़ कर उसे देखा और बोली सिपाही लगता तो तू शिवाजी जैसा है। शक्ल भी तेरी वैसी है साथ में तू लगता है मूर्ख भी उस जैसा ही। यह सुन शिवाजी पहले तो विस्मित हो गये पर बुढ़िया से सवाल कर ही दिया "भला शिवाजी की मूर्खता तो बताओ और साथ में मेरी भी" बुढ़िया ने कहा "तूने किनारे किनारों से कोदों का साग खाने की बजाय बीच के उबलते भात में हाथ मार कर उंगलियां जला ली हैं यह ही कम अक्ली तेरी है और ऐसा ही शिवाजी भी करता है वह दूर के किनारों पर बने छोटे २ किलों को आसानी से जीत कर ताकत बढ़ाकर मध्य क्षेत्र के बड़े किलों पर धावा मार सकता है और ऐसा न करके वह मार खा जाता है" शिवाजी को अपनी हार का ज्ञान हुआ उन्होंने बुढ़िया (जो थी तो अशिक्षित पर थी अनुभवी) की शिक्षा को मान लिया पहले छोटे-छोटे सरहद पर फैले किले लक्ष्य बनाकर काबू में ले आया, विजय का रुख बदला, इसी प्रकार अपनी नीति में जुटा रहा। अपना निज

का छोटा-छोटा व्यवहार परख कर हम एक दम भगवान पर ही कूद पड़ते हैं जो क्रियात्मक तौर पर गलत रास्ता है रोज की रोज सफाई छोटे-छोटे तिनके चुन-चुन कर बाहर फैंकना हमारे घरेलू जीवन का एक मुख्य भाग है ! हम इसी-असूल को अपने भीतर के महल में क्यों नहीं अपनाते। झाड़ू भी तिनकों का है तिनके ही तिनके चुन पाते हैं यदि झाड़ू किसी मोटी चीज का होता तो छोटा-छोटा दाना न चुना जा सकता, सफाई पूरी न बन पाती, अपने भीतर भी हम सूक्ष्म, दृष्टा, नुक्ताबीन होकर, छोटे-छोटे मैल निकालने का ढंग अख्तियार करें। मानव की इच्छाएँ असीम हैं। यह बढ़ कर काल और दिशा को मुट्ठी में बन्द कर लेना चाहती है। इसलिए साथ के साथ खोज का सिलसिला चालू रखना चाहिए।

माननीय व स्वर्गीय डा० राजेन्द्र प्रसाद अपने एक महाराष्ट्र के संत के साथ बातचीत के चक्कर में निजि कमजोरियों की छानबीन करते हुए यह स्वीकार कर लेने पर मजबूर हो गये कि इज्जत (यश) का नशा बड़ा घातक है। यश की खातिर अपने असूल अपना ईमान बालाए ताक कर के मानव अपने रास्ते से भटक जाता है। हिटलर ने मुट्ठी में सूर्य को कैद करने और हथेली पर गदंम उगाने के रंग-ढंग सिर्फ अपने अन्दर छिपे यश की इच्छा फलने-फूलने की खातिर बनाये थे। विज्ञान इंडस्ट्री टैक्नोलोजी ने हमें निकम्मा बना दिया है। हमारा मस्तिष्क सांप के सिरे से निकली मणी की तरह खोखला हो रहा है फिर भी हमें अभिमान से अपने जाहोल्हरमत बढ़-बढ़ कर हमारा सन्तुलन बिगाड़ रही है। हिटलर पहले स्वयं एक फौजी सिपाही था। पांव की हड्डी टूट जाने के कारण उसे फौज से निकाल दिया गया। पर फौजी जोश अपने अन्दर पनपा अहंकार अभिमान उसे दम नहीं लेने दे रहा था। उसके चन्द और साथी भी शारीरिक कमी से फौज से बाहर कर दिये गये। उनको साथ मिलाकर हिटलर को अपनी पाशविकता को रूप देने का एक अच्छा खासा ढंग विचार में आया। और यह प्रचार करना आरम्भ कर दिया कि यहूदी कौम

जर्मनी की हार का मूल कारण थी पहले तो यहूदी उस की इस बेहूदा दलील पर हंसे पर हिटलर गांव-गांव जाकर यहूदियों के सरमाया के विरुद्ध, अपने लोगों की दरिद्रता के हक में, और अपने व्यक्तितत्व को चार चांद लगाकर अपीलें पेश करता रहा। यह आश्वासन देकर कि वह जर्मनी का बोल बाला कर सकता है। उसकी अपील उसकी दलील बन गयी। पीछे हटे इस अपने देश को ऐसा चकमा दिखाया कि देश की बागडोर संभाल कर बैठ गया। उसने शत्रुओं के दांत खट्टे किये, उन्हें भी मानना पड़ा कि लातों के भूत बातों से नहीं मानेंगे। जिस पर चर्चिल और रुजोवेल्ट, रोगी का रोग भांप गये। वे भी युद्ध में ऐसे बढ़े कि जंगआलूदा हिटलर ने मुंह की खायी और अपनी जान से भी हाथ धो बैठा। इन बड़े बड़ों की तो अदा ठहरी पर जन साधारण की तो जान गयी। कल्पना यह है कि हिटलर साहब की इस तेज मिजाजी से दस करोड़ जीते जागते मानव धरती से साफ कर दिये गये।

इतिहास ऐसे प्रकाश बार-बार पेश कर रहा है कि अपनी सूक्ष्म दृष्टि किसी-किसी की अकल में समाती है जो लोग न्याय की दृष्टि में चक्कर और घटनाओं का परीक्षण करते हैं वह हो प्रायः सफल कहे जाते हैं। अपनी संभाल इतनी कुदरती हो जाती है जितनी हमारी प्रतिदिन मकान की सफाई। साधारणतया प्रश्न किया जाता है कि घर में गन्दा कहां से आ जाता है। रोज ही सफाई होती है और दूसरे रोज फिर कल जितना मल झाड़ू से इकट्ठा होने का पात्र बन जाता है। इस प्रकार हमारे अन्दर गन्द के अम्बार लग रहे हैं। खुद ही सोच लें रोज एक घर में सफाई के अतिरिक्त गंद बन पड़ता है परन्तु हमारी भीतर जहां सफाई नहीं होती जिसकी खिड़कियाँ रोशनदान नहीं हैं दरवाजे भी नहीं हैं वहां की अपवित्रता कहाँ जायेगी। बच्चे कागज की किश्ती बनाते हैं कटोरे, बाल्टी, टप के पानी की सतह पर कागज की किश्ती [को तैरने को डाल देते हैं। परन्तु बच्चे जो ठहरे कच्चे ही रहे किशोरावस्था में यह न समझ

सके कि कागज का हल्का पन पानी के हुज्म पर तैरने की शक्ति देता है। इसी तरह जब हम हल्के हो जायेंगे, भरे संसार पर हम भी तब तैर सकेंगे। जिस तरह टप के पानी पर किश्ती हमारी ही बनायी हुई, हमारी ही ईजाद, हमारा ही प्रयास अम्ल में आता है। वैसे ही भौतिक जीवन का असूल आध्यात्मिक सागर के प्रवाह में इन्सानी मंजिल का एक नमूना पेश करना है।

बात चलरही थी छोटे-छोटे व्यवहार और कार्यक्रम की। निष्कपटत: मानव का एक बड़ा अद्वितीय गुण है। सरलता ही भगवान की प्राप्ति का एक विचित्र साधन है और सरलता से सहजता मार्ग प्राप्ति और विजय अपने आप चली आती है। डा० राजेन्द्र प्रसाद जब देश के राष्ट्रपति थे राष्ट्र भवन में अपने एक कर्मचारी तुलसी को राष्ट्र भवन से हटा देने की आज्ञा जारी कर बैठे। क्योंकि उसके हाथों से मेज की सफाई करते डा० साहब का एक फाउनटेन पैन जोकि हाथीदांत का था, जो किसी ने खास प्यार से उन्हें पेश किया था, वह तुलसी के हाथों से गिर गया था। स्याही गिर गयी कमरें का कालीन भी खराब हुआ, ऐसी शिकायत पहले भी उस कर्मचारी के विरुद्ध डा० सहाब को मिली थी, उसे ध्यान पूर्वक पहले भी काम करने को कहा जा चुका था। इस घटना पर उसके हटा दिये जाने की आज्ञा जारी हो चुकी थी। भवन के सचिव ने उसे राष्ट्रभवन के किसी और काम पर लगा दिया। परन्तु डा० सहाब की आज्ञा के चन्द घण्टे बाद डा० सहाब बेचैन हो गये। तुलसी को वापिस बुलाने का आदेश दिया। तुलसी पहुंच गया और डा० साहब उसके सन्मुख खड़े थे। डा० साहब तुलसी से क्षमा याचना करने लगे, तुलसी के पैरों से तो धरती निकली जा रही थी कि कहां देश का० पति और कहां एक गरीब कर्मचारी और उसके सामने यह व्यवहार, वह परेशानी से पानी-पानी हो रहा था। आखिर डा० साहब ने तीसरी बार कहा "तुम मुझे माफ करदो" "बोलो—कि तुमने मुझे माफ

कर दिया" आखिर तुलसी ने कहा "मैंने आपको माफ कर दिया।" तब डा० साहब को चैन आया और आखिर में अपने स्टाफ से इतना कह कर शान्त हुए कि मैंने इसकी आत्मा को ठेस पहुंचाई है इसलिए मैंने माफी मांगी है।

आप जरा गौर करें कि कहां इतने बड़े देश के राष्ट्रपति कहां एक कर्मचारी परन्तु राष्ट्रपति भी किसी बेकस कर्मचारी के दिल को चोट नहीं देना चाहते थे। यही चोट हमें भी प्राप्त करनी है। काश कि भगवान् की कृपा हो जाय। परन्तु यह चोट मिलती है उन्हें जो निखरे के निखरे, शुद्ध, सरल और पवित्र हुआ करते हैं। हम हवन कर जाते हैं सायं व प्रातः, परन्तु शब्दों को शीघ्रता से क्रास कर जाते हैं क्योंकि यह भी तो कर्त्तव्य ठहरा जिसे पूरा करना हो है चाहे संध्या व हवन के शब्दों को प्राण मिलें या न मिलें। कर्त्तव्य पालन ही हमने कर्त्तव्य मान लिया है परन्तु उसी ईश्वर का ज्ञान और उसकी वैदिक आज्ञा का पालन ही देवत्व है। हम निज रक्षा का हाथ फैलाते चले जा रहे हैं मगर यह नहीं देख पा रहे कि थाली पकड़ने वाले हाथ साफ भी हैं थाली सभाले भी हैं कि नहीं। इसकी जाँच अपने मन को उंगलियों से होती नहीं इसलिए थाली धरी की धरी रह जाती है और खाली की खाली रह जाती है। सचमुच सुन्दर व्यवहार ऊंचे चरित्र की रूपरेखा है क्या इनकी भी कोई हद है। जब इनकी हद नहीं रहती तक मानव अनहद हो जाता है। अर्थात् उस आनन्द स्रोत में घुल मिल जाता है। किया क्या जाय ? दृष्टान्त समाप्त नहीं होते। मन सन्तोष नहीं लेता आंखें थकती नहीं और महान् आत्माओं के सरलता; पवित्रता के उदाहरण अधिक से अधिक अपने को शर्मिन्दा करते हैं और उत्सुकता देते हैं कि उन्हें देखा और पढ़ा जाय।

रेलगाड़ी तेज रफ्तार से दौड़ रही थी। तृतीय श्रेणी के छोटे से कम्पार्टमेंट में खद्दर का कुर्ता और खद्दर की धोती पहने एक सज्जन बड़ी तन्मयता से अखबार पढ रहे थे। उनकी सामने की सीट पर

एकमुल्ला जी बैठे थे। उन्हें जोर की खांसी आई, खंखार कर बाहर थूकने की तकलीफ न कर अन्दर के फर्श को ही गन्दा कर दिया।

"यदि आपने बाहर थूका होता तो कितना अच्छा होता। कोई यात्री यहां आकर बैठेगा तो उसका पैर बिना सने नहीं रह सकता। जब हम देश को स्वतन्त्रता दिलाने के लिए जी जान से प्रयत्न कर रहे हैं तो कम से कम साधारण से शिष्टाचार के नियमों का तो पालन करना ही चाहिए" उस सद्पुरुष ने अखबार से दृष्टि हटाकर बड़े विनम्र शब्दों में समझाते हुए कहा

मुल्ला जी किसी का उपदेश सुनने की स्थिति में नहीं थे। उन्होंने चुनौती की भावना से सामने बैठे व्यक्ति को देखा। उसकी आंखों से झलक रहा था—"तुम्हारी ऐसी जुरअत। तुम मेरा बिगाड़ ही क्या लोगे ?"

वह भद्र पुरुष उठा। उसने अपने अखबार का एक कोना फाड़ा और मौलाना का थूक पोंछ कर खिड़की से बाहर फेंक दिया। मौलाना जी मन ही मन तिलमिलाये, उन्हें लगा यह कांग्रेसी मेरी तौहीन कर रहा है। उसकी नफरत फिर भीतर से बाहर प्रकट हुई। उनको फिर खांसी आई और जान बूझ कर उन्होंने दो तीन बार फर्श पर ही थूक दिया। उस सज्जन ने सोचा जब यह व्यक्ति एक बार समझाने पर समझने का प्रयास नहीं करता तो दुबारा कुछ कहने का लाभ ही क्या है ? वे फिर उठे और थूक पोंछ कर बाहर फेंक दिया। जितनी बार मौलाना अपनी हठधर्मी दिखाता, उतनी ही बार उस सज्जन ने उसे साफ करके बाहर फेंका। जब दुष्ट अपनी दुष्टता छोड़ने को तैयार नहीं तो उसे सज्जन क्यों छोड़े। निश्चित स्टेशन जब आया प्लेटफार्म सैकड़ों सेवकों कार्यकर्त्ताओं और दर्शकों से खचा-खच भरा था 'महात्मा गांधी की जय' से आकाश गूंज उठा कार्यकर्त्ता हाथों में तिरंगा ध्वज लिए उसके स्वागत को दौड़ पड़े। गाड़ी रुकी लोगों ने अपने प्रिय नेता को उसी डब्बे में देखा घेर कर खड़े हो गये।

मोलाना को भी यहीं उतरना था तब उन्हें समझते देर न लगी कि यह कोई साधारण व्यक्ति नहीं वरन् विश्व बन्धु 'बापू' हैं।

हिन्दुस्तान तिथि २१-७-७५ लौटजे उवाच द्वारा अत्यन्त सुन्दरता से एक पाठ पढ़ने को मिला। लौटजे से पूछा गया कि क्या दुःख से छूटना इस पृथ्वी पर संभव है लौटजे बोला—"कि दुःख स्वयं ही एक छूट है निवारण है दुःख हमारी आत्मा का जल है जो सुख के कीचड़ में फंसे चित्त को धोने के लिए हमारे पास आता है।" भगवान् जैसो सत्ता को निमन्त्रण देना परन्तु आसन साफ पेश न करना, अनुचित है। हमने भिन्न-भिन्न यंत्र बना डाले। मानव शरीर को परखने और देखने के लिए परन्तु अपने आप को निरखने का सौभाग्य मिला तो ऋषि दयानन्द को जब किसी ने उनसे प्रश्न किया कि महाराज क्या आप को किसी देवी के बारे में विचार पैदा नहीं हुआ ? प्रश्न तो कान में पड़ गये परन्तु महर्षि ने झटपट उत्तर दे जाने की गलती नहीं की। भड़क नहीं उठे, अपमान नहीं माना, गुस्ताखी नहीं जानी विचलित नहीं हो गये, शान्त रहें और अपने भीतर घुस गये। अपने भगत को शुद्ध साफ और सत्य मय उत्तर देने के लिए, भीतर, गोता लगा कर अपनै को टटोल कर, बिना हील हुज्जत के बोले "कि जागते तो क्या, सोते भी कभी किसी देवी का विचार मन में नहीं आ पाया।"

शायद परासुव शब्द की धज्जियां उड़ाते किसी को बुरा लगा हो पर इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है, दोष बहुत हैं जिसका वर्णन भी लम्बा चौड़ा बन जाता है विशेषतः आज के युग में जब मनोविज्ञान ने एक विशालकाय प्राप्त कर ली है। उसे जितना खोजा जाय उतनी सामग्री बढ़ती जाती है। गुप्त बात एक ही है केवल एक कि पाकीजगी सुथरायन, सरलता, निष्पापता एक बड़ा चमत्कार है जिसके बिना मनुष्य का देवता जाग नहीं सकता। अपना नूर बन नहीं सकता। वेद स्वयं बोल रहै हैं। "हे परमात्मन् आप ही सब स्थानों

पर विराजमान हैं इस लिए विश्वतोमुख हैं। आप अपनी शक्ति से सब जीवों के हृदय में सदा सत्य आदर्श दे रहे हैं। यही आपका मुख है। आप की इच्छा है कि हमारे सब पाप नष्ट हो जाएं।" यही राज है आधार शिला है, प्रेरणा है न्योता है। इस कारण से नहीं कि हमने हिटलर बनना है। देखा जाय तो हम सब अपने अपने क्षेत्र में हिटलर से कम काम नहीं करते, प्रकृति और प्रवृति हमारी भी यही है। परन्तु बचाव होगा तो नित्य की सफाई से। किनारों पर मैल ज्यादा लगा करती है। छोटी-छोटी बातें जीवन में बड़ा स्थान रखती हैं। शिवाजी की तरह हम भी समझ लें कि अपने अपने जीवन की सरहद को सच्चरित्र और दृढ़ बनावें अपने व्यवहार में विवेकी, धर्मनिष्ठ और ऊँचे लक्ष्य वाले बनें, झटपट में भगवान् नाम का लुकमा बना मध्य में से प्राप्त करके खा लेने का लोभ न करें। सत्पात्र बनें। सत्पात्रता से सौभाग्य मिलेगा। वरदान मिलेगा और दिव्यता का अनुदान मिलेगा।

: ७ :

सातवीं भेंट

मैं अब तक विश्वानि [देव सूत्र का अर्थ विश्वभर का देव जो सविता के रूप में है लेता रहा। परन्तु एक ट्रेक्ट प्रार्थना मन्त्र लेखक श्री हरीशरण सिद्धान्तालंकार प्रकाशित जन ज्ञान प्रकाशन नई दिल्ली को देखने पर विश्वानि का अर्थ 'हमारे न चाहते हुए भी अन्दर घरकर जाने वाले दोष, प्रविष्ट होना, देख करके" विचार धारा को बदल पाया हूं जो कि बुद्धि को भी स्वीकार होती है। इसकी रू से पापों का रूख न चाहते हुए भी मानव के अन्दर प्रविष्ट हो जाने वाले स्वभाव का है। इस प्रकृति के कारण परासुव पर इतना जोर दिया गया है। जो मेरे विचारों को और भी पुष्टि देता है इसके अनुसार मन की स्लेट को शुद्ध करने पर जितना बल दिया है वह भी ज़ंचता है। यह भी ठीक कहा गया है कि मनके हारे हार है मन के जीते जीत। यह भी एक विशेषता है कि मानव अपने आप ठगा जा रहा है। एक सज्जन, भले पुरुष कहलाने वाले, पूजा पाठ करने वाले प्रभु भक्त के नाम से प्रसिद्ध हैं। एक बार उनके यहां ठहरने का मौका मिला। वह सज्जन घर में नौकर चाकर से कडुआ बोलते, सीधे रूख बात न करते, बाहर निकलते तो जले भुने, अपने आप भी मस्त प्रतीत होते हुए, अपने दफ्तर में जाते और इसी तरह ही वापिस लौट आते। दोचार दिन उनका ऐसा व्यवहार देख पूछना पड़ा-ऐसी क्या बात है कि आप किसी से प्रसन्नता पूर्वक नहीं बोलते। इसके उत्तर में उन्होंने

कहा। घर के नौकरों को यदि प्यार से बात करें तो वे सर च, जाते हैं और यदि बाहर वालों को प्रीति पूर्वक रुख दें तो चंद दिनों में कोई सिफारिश कोई रियायत कोई ढील कोई सुधार और अनुचित व्यवहार का मसला पे । कर देते हैं। इसीलिए उन्होंने अपना व्यवहार रिजर्व रहने का बना लिया है। भगवान के भक्त तो वो भले कहलाये परन्तु भगवान के बन्दों से ये द्वेष ये नफरत अहंकार का यह ढंग भगवान से सरासर लाइलमी का प्रमाण है यदि ध्यान से देखें तो यह भी बहादुर मन के नये रागरंग है। कैसे आदमी अपने से भयभीत होने की शक्ल लेते हैं। अपने को लोग चाहे कुछ मानते रहें पर वास्तविकता यह है कि वह किसी गुप्त रोग के शिकार हो रहे होते हैं। इतिहास गवाही दे रहा है कि हिटलर को मिलने जुलने, मुलाकात और कार्यक्रम में समीप आना इतना खतरनाक बन गया था कि विश्वास ही नहीं बनता। उनको किसी पर इतबार न था। न खाना पकाने वाले पर, न खाना खिलाने वाले पर, न कपड़ पहनाने वाले पर, यहाँ तक कि अपनी सारी दिनचर्या में भय उनके लिए इतना व्यापक रूप लिये हुए था कि जीवन भार रूप हो रहा था। बारह वर्ष से एक देवी उनको प्यार करती थी और अपने से विवाह कर लेने की तजवीज पेश किए फिरती थी। परन्तु हिटलर का उस पर भी विश्वास कैसे बनता आखिर अपनी मौत से दो घंटे पहले उसे बुलाकर चुपके चुपके उससे शादी कर ली और दो घन्टे बाद दोनों ने आत्म हत्या कर ली। यह हमारे ही दिनों का जीता जागता उदाहरण है। यह समझने के लिए कि अपना ही मन अपना ही आइना (शीशा) किस तरह जंग अलूदा बन जाता है। इसीलिए इसे रोज मांजना, साफ करना अत्यन्त आवश्यक है। फिसलना मन का एक आवश्यक पार्ट है जिसका समय, ढंग, कल्पना, विचार से बाहर का विषय बनता है। फिसलने की भी तो हद चाहिए। परन्तु जहाँ उत्तमताकी हद नहीं, शिष्टताकी हद नहीं, वहाँ फिसलने की भी कोई हद नहीं। जापान में एक विद्यार्थी भारत से उच्च शिक्षा प्राप्त करने

आया हुआ था। वह बहुत पढ़ता था प्रतिदिन अपने विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में जाता। घन्टों वहाँ लगाता। एक दिन एक नक्शा (चित्र) उसे पसन्द आया जो उसके विषय से सम्बन्ध रखता था और उसके लिए लाभदायक भी था। अपनी कमजोरी के वश में जाकर उसने वो नक्शा किताब से निकाल लिया और अपने यहां ले गया। परन्तु जब पुस्तक उस चित्र के बिना मालूम कर ली गई। उसकी तहकीकात हुई और परिणाम के तौर पर वहाँ के विश्वविद्यालयों में भारतीय विद्यार्थीयों को पुस्तकालयों में जाने की बंदिश लगा दी गई। मन फिसलता भी है। खिसकता भी है गिरता भी एकदम है परिणाम की कल्पना न लगाता हुआ, पहाड़ से पाताल तक फिसल कर खिसक कर, गिर कर, पतन की पराकाष्ठा लेता है। अशुद्ध होना और पापी होना भी दो विरोधी अवस्थाएँ है। हमें तो जन्म जन्मान्तरों के मैल खदेड़ने हैं। एक जन्म तो अनेक जन्मों का मैल धोने में सर्वथा नाकाफी है। हमारे चित्त का बर्तन भरा हुआ है। इसलिए हम अपात्र है। हमारे अपने भीतर बड़ी अचेतन ताकतें काम कर रही है वह हमें धके लतीहैं जिस ओर धक्का लगता है वह ही हमारा राह बन जाता है। क्योंकि हम अपने भीतर बसे हुए विचारों के स्वामी तो हैं नहीं विचार आते जाते है हमारा घेराव होता जाता है। काश कि हम अपने विचारों के स्वामी होते। जब चाहते विचार बंद कर सकते। और तो और एक ही विचार को ढालने के लिए कितनी मुश्किल का सामना करना पड़ता है क्योंकि अपने अन्दर जबर्दस्ती से दाखिल हुए अनेक जन्मों के संस्कार घर बनाये बैठे हैं जो मौका मिलने पर प्रलोभन पर भोजन पर साहस मिलने पर शेर बन कर खड़े हो जाते हैं। और हमें ही स्वाहा कर देने का रूप ले लेते हैं।

लिखा कितना जाय, जरा प्रयत्न करने, विषय के इस रूप की कल्पना ही कर ली जाय कि एक क्षण मौन हो लें फ़िर भी मौन कैसे हमारे अन्दर एक नया वायुमंडल बन जाता है। सत्य तो यह है कि जिस विचार को हम बाहर फेंकने की चाह करते हैं वह और जबर-

दस्त हो जाता है, आप चाहेगें कि वे विचार दूर हो जाये परन्तु वह बार बार स्मरण हो जाता है। हम हार जाते हैं। विचार जीत जाते हैं क्योंकि हमारी साधना का भेद है क्या यह अवस्था भी कभी आती है कि हम अपने को अपना मालिक अपना स्वामी कह लेने का मान ले सकते हैं, अपनी अवस्था तो अब यह हो रही है कि हम स्वयं मशीन बन गये है अपने अन्तः करण के अनुसार खुद बखुद हमसे कर्म होते जाते हैं। हम उस मशीन की तरह हो गये है जिसका बटन दबा दिया और वह चल पड़ी। इसमें तो सन्देह नहीं कि हमारा जीवन बाहर से प्रभाव लेना है खास तौर पर अब अपने अन्दर का स्वामी गायब होता है। इसलिए जो होता है होता जाता है और हम इस पर अपना नाम दर्ज करा लेने का हक ले लेते हैं। शायद ये बातें ऊपर से गलत कही जायें परन्तु सार की बात यही है कि हम अपनी शक्ल भी अपनें ही शीशे में ठीक ठीक नहीं देख पाते। मछलियाँ जैसे ही जाल में फंसती है वो अपने बचाव के लिए उस जाल के धागों को जोर से पकड़ लेती है ताकि वे धागों के सहारे अपनी रक्षा कर सकें लेकिन वो जिन धागों को पकड़ती हैं वो धागे उस जाल के होते हैं जिसका एक सिरा शिकारी के हाथ में होता है और वो ही जाल उन्हें ऊपर ले जाता है जो उनकी मृत्यु का कारण बन जाता है। हम भी सारे लोग इन धागों को पकड़े हुए है अपने दोषों के धागों से चिपटे हुए है। शायद इस विचार से कि यही धागे हमें बचा जायेंगे परन्तु जो गलती मछलियाँ करती हैं वह ही गलती हम कर रहे हैं इसीलिए धागों के जाल और अपनी पकड़ को अलग अलग खोज लेना बुद्धिमत्ता हैं।

एक बार एक सज्जन का एक बहेलिया से वास्ता पड़ा। वहेलिया तोते पकड़ने का काम करता था उससे पूछा गया कि वे तोते पकड़ता है या तोते उसके जाल में स्वयं फसते हैं। इस बहेलिये ने उसे न्योता दिया कि वह स्वयं साक्षी होकर के तोते पकड़ने और फंसने की घटना का अनुभव ले लें, यह निर्णय लेने के लिए कि तोते स्वयं फंसते हैं या वह तोते को फंसाता है। घटना स्थल पर देखा गया कि दो पेड़ों के बीच रस्सी बंधी थी इस रस्सी की

थोड़े थोड़े फांसले पर गांठें थीं जिनमें छोटी छोटी लकड़ियाँ लगा रखी थीं। रस्सी के नीचे दाने पड़े हुए थे छोटी छोटी लकड़ियां इस तरीके से लगा रखी थी कि ज्योंहि तोता लकड़ी के सिरे पर बैठता लकड़ी वजन से घूम जाती और तोता उसके द्वारा लटक जाता और फंस जाता गिरने के डर से वह लकड़ियों को इतने जोर से पकड़ लेता है कि कही वो नीचे न गिर पड़े। भला सोचिये आकाश में घूमने वाले पक्षी पृथ्वी पर गिरने से भी डर जाते हैं और अपनी पकड़ स्वयं स्वीकार करते हैं इस तरह अपने शिकारी के हाथ लग जाते हैं बहेलिया हंस दिया और देखने वाले ने स्वीकार किया कि तोते ही फंसते हैं और चक्कर में आते हैं। यह भी तो सत्य है कि जो स्वयं फंसना नहीं चाहते उसे दूसरा नहीं फंसा सकता। इसी तरह जीवन भी एक विचित्र पहेली है असल प्रश्न अपनी कमजोरी अपनी गलती अपनी बेबसी और अपनी असमर्थता का है जिसका केवल एक ही हल है कि हम प्रजापति को अपना संरक्षक मान कर दिलोजान से याद रखें उससे प्रार्थना कर सके कि हमें इन आक्रमणकारियों से बचाय रखें, अवसर ही न दें, हमें परीक्षा में ही न डालें, जब तलक साधना में हम निखर न जायें, हमें ज्योंहि मौका मिलेगा हम उल्टे हुए पड़ेगें। यह ठीक है कि जिसकी तपस्या, अपना आत्म-बल, अपनी प्रार्थना का वातावरण शिथिल हो वो दयनीय अवस्था में होता है भगवान करे कोई गरदिश में पड़े ही न। श्री हरिकृष्ण सिद्धांतालंकार की व्याख्या कियह पाप यह मल आकाश में कीड़े और मच्छरों की तरह फैले हुए हैं जिनसे बचने का रास्ता प्रभु कृपा एक वाहिद इलाज है। जिसे जीवन का मजा लेना हो साधना का प्रोग्राम लेना हो वो अपनी बात बात आन्तरिक उपज उपज, संस्कार, विचार, वातावरण, और अपने अन्दर के खुदरौ पौधों को जरा परखे। अपनी खेती बाड़ी की तरफ ध्यान दे, ईश्वरीय अनुग्रह उसी की प्रार्थना ही सौभाग्य का फल ला सकेगी, भगवान का आशीर्वाद भगवान की पलपल की रक्षा हमारे जीवन में परम उत्कृष्ट हेतु बन सकेगा जिसकी अपार कृपा अपार परिणाम हमारे देखने की बात होगी।

यदि 'विश्वानि देव' 'सविता' का भी रूप लिया जाय तो भी बात समझ बैठती है क्योंकि विश्व भर का देव सविता रूप होकर जो कि केवल दिव्यता का ही दान देने वाला है, हमारे दुर्गुणों को दूर कर सकता है और उनका तबादला अच्छाइयों में कर सकता है। अर्थात् यथाथ ज्ञान को जानने के लिए केवल गोपति ही एक मात्र गुरु है इसी कारण वह यथाविद कहलाते हैं अन्दर की बात अन्दर वाला ही जान सकता है। बाहर की, इन्द्रियों को, बातें बाहर का संसार शोध सकता है पर अन्दर का मैल विकार अन्दर का ही स्वामी शोधने में सर्वशक्तिमान ही है निराकार आत्मा निराकार परमात्मा से एक गुणी होने के नाते सत्य व प्रकाश के अवलोकन का कारण बनता है अपनी बुराइयों पर नजर दूसरे की कमियों की उपेक्षा एक मात्र साधन अपने सुखी होने का है। कहा जाता है कि एक बार मनुष्य ब्रह्मा के पास पहुंचा और उन्नति और सुख शान्ति का वरदान मांगने लगा। ब्रह्मा जो ने उपहार स्वरूप उसे भरे दो थैले दिये। एक को पीठ पर बांध दिया और दूसरे को गले में लटका दिया। मनुष्य ने आश्चर्य चकित होकर उन थैलों का रहस्य और उपयोग पूछा ब्रह्मा जी बोले—पीछे वाले थैलों में पड़ोसियों की बुराइयां भरी है इन्हें पीछे रखना, इन्हें देखना मत अन्यथा तुम्हें अकारण क्षोभ होगा और प्रगति के लिए जो करना चाहिए वोर करके इस क्षोभ में उलझ जाओगे। गले में लटके हुए थैले का रहस्य बताते हुए कहा इसमें तुम्हारी बुराइयां भरी हैं आँखों के सामने इसे रखना बार बार देखना और उन्हें सुधारने के प्रयत्न में लगे रहना। साथ में बोले दोनों थैलों का तुम उचित उपयोग कर सके तो निश्चय ही तुम्हारी सुखशान्ति की मनोकामना पूर्ण होगी।

बड़ों की बातें सममुच महानता लाती हैं मनुष्य बनना ही हमारा एकमात्र क्षेत्र है। भगवद् प्राप्ति ही हमारा आदर्श है भगवान को हम प्राप्त कर सकें इसका सबसे बड़ा साधन यह जुटा दिया कि परमात्मा आत्मा के अत्यन्त निकटस्थ विराजमान होने का व्रत ले बैठे हैं।

शान्त हो के सोचा जाय तो अत्यन्त निकटस्थ वस्तु शीघ्रता से प्राप्त हो सकती है। पर हम लोग उलझे हुए इस रहस्य को नहीं प्राप्त कर सके अपने समीपस्थ से प्रार्थना उसकी अत्यन्त देख रेख में जीवन यापन दुर्गुणों को दूर करने और सद्‌गुणों को प्राप्त करने का अत्यन्त उत्तम सरल मार्ग बना दिया गया है। महात्मा गान्धी कहा करते थे "मुझे रोटी न मिले तो में व्याकुल नहीं होता पर प्रार्थना के बिना मैं व्याकुल हो जाऊँगा। प्रार्थना भोजन की अपेक्षा करोड़ गुणी ज्यादा उपयोगी चीज है। खाना भले ही छूट जाय पर प्रार्थना नही छूटनी चाहिए। प्रार्थना तो आत्मा का भोजन है यदि हम पूरे दिन ईश्वर का चिन्तन किया करें तो बहुत ही अच्छा, पर क्योंकि यह सबके लिए सम्भव नहीं इसीलिए हमें प्रतिदिन कुछ घन्टों के लिए ईश्वर स्मरण करना चाहिए। स्तुति उपासना प्रार्थना अन्ध विश्वास नहीं बल्कि उतनी ही अथवा उससे अधिक सच बात है जितना कि हम खाते है पीते है चलते है बैठते है यह सच है बल्कि यूँ कहने में अत्युक्ति नहीं की कि यही एक मात्र सच है दूसरी सब बातें झूठ हैं मिथ्या हैं। प्रार्थना करना याचना करना नहीं है वो तो आत्मा की सच्ची पुकार है हम अपनी असमर्थता खूब समझ लेते है और सब कुछ छोड़ कर ईश्वर का भरोसा करते हैं फिर उसी प्रार्थना का फल पाते हैं प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं हृदय से होता है इसी से ही गूंगे तुतले मूढ सभी प्रार्थना कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल हो तो जीभ का अमृत किस काम का। कागजके गुलाब से सुगन्ध कैसे आ सकती है

प्रार्थना करने का उद्देश्य ईश्वर से संभाषण करना है एवं अन्तरात्मा की शुद्धि के लिये प्रकाश प्राप्त करना है ताकि ईश्वर की सहायता से हम अपनी कमजोरियों पर विजय प्राप्त कर सकें। प्रार्थना मन से न हो तो सब व्यर्थ है। प्रार्थना में जो कुछ बोला जाता है उसका मनन करके अपने जीवन को वैसे ही बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। तभी उसका पूर्ण लाभ है। परलोक की बात तो

जाने दीजिए इस लोक के लिए प्रार्थना सुख और शान्ति देने वाला साधन है अतएव यदि हमें मनुष्य बनना है तो हमें चाहिये कि हम जीवन को प्रार्थना द्वारा रसमय और सार्थक बना डालें इसीलिये मैं आपको सलाह दूंगा कि आप प्रार्थना की विधि से लिपटें रहें। मेरे आने वाले राष्ट्रीय, सामाजिक, अथवा राजनैतिक विकट प्रश्नों की गुत्थी के सुलझाव मुझे अपनी बुद्धि की अपेक्षा अधिक स्पष्टता और शीघ्रता से प्रार्थना द्वारा विशुद्ध हुए अन्तःकरण से मिल जाते हैं।" मानव सोचे तो कितना हमारे और महान आत्माओं के व्यवहार में अन्तर है। दार्शनिक पारकल ने मनुष्य का विश्लेषण करते हुए इतना तक कह डाला है कि यह एक ऐसा बेवकूफ है जो अपना सबसे बड़ा शत्रु है और अपने को ही सबसे अधिक सताता है। निज अभिरुचि से ही अच्छाई और बुराई मिलती है केवल अपनी अभिरुचि को कहाँ केन्द्रित करें नियोजित करें यह पूर्णतः अपने हाथ की बात है उद्यान में पुष्प भी खिले रहते हैं और गोबर भी पड़ा रहता है। गोबरीले गोबर पर जा चिपटते हैं और भंवरों का गुन्जन पुष्पों पर ही होता है। विवेकशील होने का सौभाग्य मानव को मिला। सच तो यह है कि कभी आन्तरिकता से नास्तिक भले लगते हैं। श्री इटानबी ने कहा है "कि परमात्मा की **रट** लगाना ही यदि आस्तिकता है तो मुझे नास्तिक कहलाने में कोई एतराज नहीं मैंने यह सोचा और जाना है कि अपने आप को समझना और अन्तरात्मा को विकसित करना पूजा करने से अधिक श्रेयस्कर है। मैं अपने पर आस्था रखता हूं उसी पर अगाध श्रद्धा करता हूं क्योंकि यही मेरा भगवान होना है मैं सोचता हूं यदि अपने को भगवान बनाया जा सके तो फिर आस्तिकता का असली प्रयोजन पूरा हो जायेगा पर यदि आस्तिकता की परिभाषा यह है कि व्यक्ति कितना ही निकृष्ट बना रहे और थोड़ी पूजा पाठ करके अपने को पवित्र करने और समुन्नत होने का उद्देश्य पूरा करलें तो मुझे उस मान्यता से इनकार करना होगा।" अनुभवी लोगों के तो यह उद्‌गार मानने के काबिल हैं हम अन्दर

की ओर तो ध्यान न देकर बाहर की बातों में आपको व्यस्त किये रखते हैं।

एक बार एक यात्री यात्रा पर जा रहा था। रास्ते में उफनती हुई नदी पड़ी पार कैसे किया जाये नाव होती तो काम चलता दृष्टि दौड़ाई तो पास के घाट पर नाव दिखाई दी वो वहाँ पहुंचा और पेड़ से बंधे नाव के रस्से को खोल कर पार जाने का प्रयत्न करने लगा। एक दूसरा मनुष्य वहां खड़ा था। उसने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा मल्लाह नहीं, पतवार नहीं डंडा नहीं तुम्हें नाव चलाना आता नहीं फिर इस प्रकार केवल नाव मात्र से कैसे पार हो जाओगे पर यात्री ने न माना और कहा नाव की बड़ी महिमा सुनी है उस पर बैठ कर पार हो जाने का महत्व भी सुना है असंख्य लोग इसी आधार पर पार हो गये तो मैं क्यों नहीं हो सकूंगा दूसरा मनुष्य रोकता रहा यह भी कहता रहता कि नाव की महिमा भले हो परन्तु पतवार डांड आदि का होना अत्यन्त आवश्यक है। यात्री तो जाने के मूड में था उसने सोचा नाव में एकाकी बैठकर पार जाने के लिए चल पड़ा नाव थोड़ी दूर बही और भंवर में पड़ कर उलट गयी यात्री भी मरा नाव के अपयश का भागीदार भी बना। मानव नाम की नाव में बैठकर पार हो जाना हम अच्छा समझते हैं परन्तु उसके साथ सद्गुण सत्प्रवृत्ति का उपयुक्त मार्ग दर्शन की शर्त भी जुड़ी हुई है। अब धर्म भी एक शौकीनों की चीज बनता चला जाता है श्री रविन्द्रनाथ टैगोर ने यह कह डाला है घर में अनेक तरह के अनेक सुसज्जा साधन और जी बहलाने वाले उपकरण रहते हैं। उसी प्रकार धर्म भी घर के एक कोने में स्थान देने की आवश्यकता समझी जाती है। शौकीनी सुसज्जा में भी विभिन्न स्तर की वस्तुएं इकट्ठी करनी पड़ती है। सभ्यता व धर्म को भी एक ऐसा ही उपकरण समझना शुरू किया है कितने ही लोग अपने कई तरह के शौकों में एक शौक धर्मचर्चा भी सम्मिलित कर लेते हैं। यह स्थिति धर्म जैसे जीवन तत्वों का उपहास करना है। स्नान घर सजा कर रखने

मात्र से स्वच्छता की आवश्यकता पूरी नहीं होती। रसोई घर में आवश्यक वस्तुएं जमा कर देने भर से क्या भूख बुझ सकती है। पलंग भर बिछा रहे तो क्या बिना सोए नींद पूरी हो जायेगी। दूसरों की दृष्टि में धर्मात्मा बनकर अपनी आन्तरिक अध्यात्मिकता को छुपा लेने के लिए आवरण ओटना किस काम का यदि धर्म के प्रति सचमुच आस्था हो तो उसे न केवल दृष्टिकोण में वरन् क्रिया कलाप में भी समाविष्ट करना चाहिए। अन्यथा यह काम बुरा है कि हम अपनी अधार्मिकता को उसी रूप में खुला रहने दे और धार्मिक बनने का दम्भ न करें। इससे अधर्म के साथ दम्भ को जोड़ने की दोहरी बुराई तो न बढ़ेगी।" जैसे कि ऊपर कहा गया है हम अन्दर सुधि न लेकर बाहर के जीवन को ही अपना जीवन मान रहे हैं जबकि अन्दर ही स्थिरता, अमरता और आह्लाद का स्रोत हैं। बरगद का विशाल वृक्ष नदी के किनारे खड़ा था यात्री उसके नीचे सुस्ताया और विशालता को सराहता हुआ चला गया। कुछ ही दिन बाद जब लौट कर आया वहां पर पेड़ नहीं था। यात्री को अचम्भा हुआ और उसने वहां के निवासियों से उस पेड़ के न रहने का कारण पूछा लोगों ने बताया पेड़ बड़ा तो जरूर था पर अन्दर से उसकी जड़ें खोखली हो गयीं थीं। एक हल्का सा तूफान आया और उसे उखेड़ कर फैंक दिया। यात्री यही रास्ते भर सोचता गया। बाहर की विशालता ही नहीं अन्दर की गहराई भी आवश्यक है। जैसा कि महात्मा गांधी ने ऊपर कहा है। प्रार्थना का रूप ही कुछ भिन्न है। किसी से किसी का हो जाना यह भी एक बड़े सौभाग्य की बात होती हैं पति पत्नी का, मित्र मित्र का, गुरु शिष्य का, अन्यो अन्य सम्बन्ध बनता ही तब है जब कोई निष्काम भाव से एक दूसरे का बन जाता है और यह अवस्था होगी तब जब हम स्वच्छ होकर उस परम सत्यस्वरूप के सखा बन सकेंगे। तब धर्मार्थ काम और मोक्ष भी हमारे स्वभाव में आ जायेंगे जो मैं हूं वही बिना किसी दाव पेच के भगवान का भक्त

बन जाना भी एक कला है द्वार है मार्ग है सम्पर्क है और समर्पित हो जाना है। जब सन्तों की बातें पढ़ते हैं कि कोई किसी का कैसे हो जाता है तो इसमें एक बड़ी बरकत और बड़ी अद्भुत घटना घटी हुई दिखने में आती है। कहा जाता है कि वाचस्पति मिश्र का विवाह हुआ छोटी उम्र में। घर वालों ने ही सब कुछ कर डाला। घर वाले डरे तो हुए थे कि उसकी प्रकृति विद्वत्ता की तरफ थी पर उसे फंसा ही डाला गया। वह बचपन से ही विद्वता पूर्ण विचारों में रत रहता। लिखता पढ़ता और उसके दिन रात ऐसे ही कटते! बारह वर्ष हो गये। वाचस्पति ब्रह्म-सूत्र का भाष्य लिख रहे थे। एक बार धर्मपत्नी ने उनसे प्रश्न भी कर दिया कि उसे क्यों यहाँ लाया गया था। परन्तु वह अपने विचार में रत, किये हुए प्रश्न का उत्तर भी न दे पाये। उपनिषदों के भाष्य, गुप्त रहस्यों को समझना, उनके जीवन का सार था। वाचस्पति का विचार था कि ज्योंहि ब्रह्म-सूत्र भाष्य समाप्त होगा वह उसी दिन घर छोड़ देगा। ब्रह्म सूत्र के भाष्य का अन्तिम पृष्ठ लिखा जा रहा था कि 'दिया'(रोशनी) बुझ गया। उसकी पत्नी तो छाया की तरह उसकी सेवा में रहती थी वह झट से आयी उसने दिया जला दिया। पहली बार उस वाचस्पति ने जलते हुए दिये में पत्नी का हाथ देखा और उससे पूछा कि वह कौन है। पत्नी ने विवाह की याद दिलाई। वाचस्पति अफ-सोस करने लगा और उल्लाम्भा दिया कि उसे इस विषय की पहले याद क्यों नहीं दिलाई और कहा कि उसने प्रतिज्ञा कर रखी है कि ब्रह्म-सूत्र का भाष्य समाप्त होते ही वह घर छोड़ देगा कल प्रातः यह शुभ कार्य समाप्त हो रहा है और वह घर छोड़ रहा है इस पर उसकी धर्म पत्नी ने कहा कोई हर्ज नहीं, न ही कोई देर हुई है वह पतिदेव से कहने लगी इतनी फ्रिक जो जाहिर की गयी है उसके लिए यह भी बड़ा सौभाग्य है। हार्दिक सन्तोष है कि पतिदेव के दिल में पत्नी के लिए स्थान तो है यह जानकर उसे सब कुछ मिल गया है। वाचस्पति उसको श्रद्धा, सेवा और तन्मयता के भरे विचारों से

इतने प्रभावित हुए कि उसने पत्नी के नाम पर ब्रह्मसूत्र के भाष्य का नाम भी 'भामती' रख दिया। ऐसे आदमी अपने स्वभाव में जीते हैं। काश कि शुद्ध हो जाना सरल बन जाना निष्पापता द्वारा भगवद प्राप्ति हमारा भी स्वभाव हो जाये।

हमारा जीवन मोड़ ले प्रभु प्रसाद मिले ताकि हमारा दृष्टिकोण ही बदल जाए, परम दयालु की दयालुता से हम पलते हुए विशालता से विवेक से अपने गुण अवगुण निरीक्षण कर के सत्यता पूर्वक अपने को सत्पात्र बना पाए, यही मानव जीवन का श्रृंगार है सार है तथा तारतम्य है।

———

: ८ :

आठवीं भेंट

परम न्यायकारी और परम हितकारी परम संरक्षक और परम नियोजक महाराजाधिराज ने परासुव और तन्नासुव के दो पलड़ों में मानव को डाल दिया है। तराजू पूरा करने की खातिर डंडी रखी है अपने पवित्र और उत्तम हाथों में, जिसका नाम डाल दिया 'यद भद्र' मुझे तो इस तराजू में बड़ी विचित्रता और उत्तमता और बड़ी सूक्ष्मता का दृश्य मिलता है। जितना कोई परासुव होगा उतना उसे तोल मिलेगा, तन्नासुव का। दुकानदार एक पलड़े में बाट डालता है दूसरे में बेची हुई वस्तु। डंडी के सन्तुलन से दोनों पलड़ों को बराबर करता है। होशियार दुकानदार अपने अनुभव से बुद्धिमत्ता से और सार्थकता से डंडी को पकड़ता है। कमी बेशी को पूरा करता है केवल अपनी डंडी से। असल में डंडी ही उसका पैमाना है बाट और बेची हुई वस्तु का। चालाक दुकानदार डंडी को संभालने से ही धोखा और लूटमार का कार्य भी कर लेता है। परन्तु ठीक ठीक तोल वाले ईमानदारी से, अपना कारोबार करने वाले, अपने कार्य क्रम खुशी और बरकत का अनुभव लेते हैं जबकि इसके विपरीत दूसरे दुःख और झूठ का मज़ा लेते हैं। हिन्दुस्तान टाइम्स २६-८-७५ के अनुसार केवल कम बाँट व कम तोल के कारण खरीदारों (कंज़्यूमर्स consumers) को दो हजार करोड़ की हानि उठानी पड़ी है

परन्तु हमारे उत्कृष्ट अधिपति के पास तो ऐसी व्यापार निधि ही है यद्यपि वे परोक्ष में हैं। अपितु अत्यन्त सावधानता से हर एक के पलड़े दुरुस्त सभाले हुए है। उसका यह व्यपार सर्व उत्तम है। निर्दोष है और सन्तुलित है। संसार वाले को सुख, दुःख, आत्मा वाले को आनन्द, बेपरवाह को बेफिकरी, नम्र को रुतबा, और सन्तोष एवं उसके बाँट उड़े अनन्त हैं। वो बड़ा विचारवान है। सबके परिणामों को भली प्रकार जानता और समझता है, हम दुनियादार इन पलड़ों का तोल नाप समझ नहीं सकते। खाली होना और भरा जाना और भी दिव्यता स्वरूप है जिसका हम केवल तब योग्य अन्दाजा लगा सकेंगे जब हम उसके राजोन्याज के दावेदार होंगे। पलड़ों को बांध रखने वाली डंडी बनाई 'यद् भद्रं' की धातु की, जो भी बहुत विशाल बहुत अद्‌भुत, बहुत स्थिर और वहुत अनन्त है। अनन्त शब्द की कोई व्याख्या नहीं है, ये शब्द ही समाप्ति है। सारे सूची पत्र का अन्त है अर्थात् जो संभवतः भद्र है उसी का नाम ही 'यद् भद्रं' है उसकी हस्ती का सबूत हो उसका वजूद है कोई 'जो' के क्या अर्थ बताये। जो भी हो चुका है हो सकेगा, हो सकता है, सब हमारे लिए रिजर्व कर दिया गया है। सुन्दरता यह कि 'जो' के साथ शब्द जोड़ दिया है 'भद्र' का, सोने में सुहागा कर दिया, 'भद्र' भी उसी तरह व्यापक, जिस तरह 'जो' है।

अब कोई क्या कल्पना कर सकता है कि उसे उसके सत्कर्मों के लिए क्या मिल सकेगा। यह तो निश्चित है कि जो भी मिलेगा हर सम्भव तरीका से वो तमाम 'भद्र' ही 'भद्र' होगा। इस दुकान पर कोई जाकर देखें तो, जो की तकसीम करने वाला खुद ही जानता है कि किसके लिए जो 'कितना' 'क्या' और 'कैसा' उचित रहेगा यूँ तो हम मुंह फाड़े बाजू फैलाये हर, क्षण में दुनियां का सब कुछ ले लेने का दावा किए बैठे हैं परन्तु देने वाला बड़ा सयाना है वो जानता है क्या दिया जा सकता है, कब दिया जाना उचित रहेगा किस रीति नीति से दिया जाना ही उचित रहेगा। हम निर्बुद्धि, गैर दूर-अन्देश,

क्या दुरुस्त और गैर दुरुस्त मौका पर बेमौका का विचार बना सकते हैं और खास तौर पर जिनके पास पिछले हिसाब किताब की पास बुक ही नहीं ! हम कितने पागल बनते है कि बिना हिसाब किताब किये बैंक से नकदी ले लेना चाहते हैं। इस डंडी का दुरुस्त अन्दाज ही हमारी पहुंच के बाहर है इसलिए जो भी वो हमको अता करता है उसे बड़े मान और प्यार से अपने पास संभालना उचित है। उसकी देन में श्रद्धा उसके वरदान में विश्वास, उसके अत्तया में पूरा यकीन, रखकर हमें तो हर समय धन्यवाद का पार्ट ही अदा करते रहना चाहिए।

मैं एक चौधरी साहब को जानता हूं वो अच्छे जमींदार अपने कस्बा के गिने हुए आदमियों में से एक थे, उनके एक लड़का और एक लड़की थी। एक रोज रात के समय लड़की को गोद में लिए खेल रहे थे और भगवान को सम्बोधन करके कह बैठे "क्या ही अच्छा होता जो इसकी बजाय मुझे दूसरा लड़का दे दिया होता" तीर निकल गया, अदायगी हो गयी, सुनने वाला भी बड़ा तेज और चौकन्ना है। मांग उसे अच्छी नहीं लगी। रात हो रात लड़का बिमार हो गया उसी मालिक के मुल्क के पास खाना हो गया, जिसके यहाँ गिला शिकायत पहुंचा दी गयी थी। डंडी सम्भालने वाला 'क्या दुरुस्त है, क्या दुरुस्त नहीं हैं को भली प्रकार जानते हुए उस चौधरी साहब को एक बालक एक बालिका दे चुका था परन्तु उन्होंने उसे अपनी बुद्धि के सन्तुलन के बाहर जाना अतः पलड़ा दूसरी तरफ झुक गया और उसकी गोद पुत्र की औलाद से खाली कर दी गयी। यह तो एक सही शक्ल है मगर उसकी परख भी बड़े राज की है। काम करते वक्त हम विवेक से बाहर होते हैं यह परासुव और तन्नासुव का पलड़ा यदि संसार के लिए भी समझ कर परखें तो भी बुरा नहीं, अपने संसार में कितने उदाहरण है जो हमें साफ बतला रहे है कि अपवित्र विचारों से अशुद्ध परिणाम निकला करते हैं।

बात चल रही थी 'यद् भद्र' की, सुन्दर कड़ी से दो पलड़ों के सन्तुलन की। इस पैमाना में बड़ा राज़ यह है कि तश्खीस उसकी बढ़िया, समय और ढंग निराला, जाँच पड़ताल निराली, उसका उचित मान अपनी पूर्ण श्रद्धा विश्वास में रंगा होना चाहिए कि जो भी होगा भला होगा, भद्र होगा, यूं हम दोषों से खाली हो जावें अपने सत्कर्मों के वज़न दान जो भी वो देगा हमारे लिए वही हित-कारक समयानुसार और पायदार होगा। इन पलड़ों के जीवन के मध्य यदि हम भद्र ही भद्र लेने वाले का सौभाग्य पा सकें तो हमारा संसार कितना शान्तिमय और आह्लाद पूर्ण होगा। हमारे यहाँ सन्तोष का कितना लहलहाता पारावार होगा। हमारे भाग्य का उत्तम सत्कार होगा, हमारा मन उसके आशीर्वाद का तलबगार होगा। नाहक आदमी शिकायतों के पुन्लदें लिए फ़िरता है, मिला हुआ सुख भी प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार नहीं करता, जहाँ उसकी अक्ल पहुंच ही नहीं सकती, वहाँ की हवायें लेकर अपने आपको मानव डगमगा रहा है। इस पवित्र मन्त्र के दो शब्दों के मध्य एक सुन्दर सी डोरी से जो संसार बनाया जा सकता है जो ऐसा भव्य और दिव्यता वाला होगा उसकी जान पहचान से हम अयोग्य हो रहे हैं शोक है तो इस बात का कि प्रतिदिन हम यज्ञों को करने वाले अपने ही मुँह से, किसी मन्त्र शब्द की कीमत को समझ नहीं पा रहे।

यजुर्वेद के इस मन्त्र द्वारा कितने सुन्दर विचार की कल्पना की गई है।

'इन्द्रो विश्वस्य राजति शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे'

अर्थात् हे इन्द्र आप परम ऐश्वर्य वाले हो हमारे लिए कल्याण-कारी द्विपद व चतुष्पद साधनों के द्वारा अपने अमृत का भाग्य वरसानें की कृपा करो। वेद में जगह जगह भगवान से सुख की प्रार्थना की जा रही है। एक मन्त्र में कहा गया है कि हे भगवान हम तुम्हारी

दया द्वारा जिंदा रहें जो हमारी बाढ़ की तरह है जिसका कोई बांध नहीं, ऐसी सतत खुले ग्राम सात्विक सुख और अमृत के पारावर में अपने आपको सौंप देना बड़ी कला कौशल है परन्तु यह कदम उठता है उनसे जो प्रभु में पूरा विश्वास रखते हैं जो उसके 'जो' में पूरा सम्मान रखते हैं जो उसकी 'जो' में अपने जीवन की सफलता का भाव रखते हैं, ऐसी प्रकृति, ऐसा स्वभाव, बना लेने से दिमागी तनाव भी गायब, सन्तोष भी प्राप्त, शान्ति भी पूर्ण, वातावरण भी हराभरा, सदा बहार का जीवन, दिलोदिमाग में हर समय विद्यमान सद्भावना एक अलौकिक युग के दर्शन करना है।

अमर भगवान कृष्ण का शुभ उपदेश कि काम करो फल की आशा न रखो, इसका भी अमली सबक और अमली मैदान यह सारे का सारा कितना सुन्दर वातावरण बना सकता है। इस मन्त्र के इन दो शब्दों से बंधी डोरी, उनसे लगे पलड़े एक कल्पना में ले आने की बात है कि पलड़ा कौन सा भारी है और कौन सा कम है। सन्तुलन की लकड़ी किस ओर झुक जाने की रग़बत ले रही है इन तमाम क्रिया कलाप की पूर्ण जिम्मेवारी उन देवों के देव पर छोड़ कर मानव निर्विकार और सन्तुष्ट बन सकता है। यहाँ व्याख्या का क्षेत्र नहीं बनता यह तो नकद बनकद सौदा, निजी अनुभव के हंडोले परम पिता के प्रेम के झूला में झूलने के रंग ढंग हैं। आजमाये जिसका जी चाहे कोइ मनवाये तो क्या तृप्ति नहीं होगी, जबतक अपनी अनुभूति का पर्दाफाश न हो।

विधाता ने मुझे तराजू का काम तो सौंपा नहीं शायद इसलिए मैं तोल नाप के वर्णन में बहुत सफल न हो सकूं परन्तु हम सब संसार में अपने पूर्व जन्म और इस जन्म के संस्कारों में तोले जाने के लिए लाये जाते है। प्रत्येक अपने गुण कर्म स्वभाव के अनुसार अपने जीवन यापन, अपनी आय, व्यवसाय, मान, पोजीशन और अपना स्तर प्राप्त करता है। तोलना भी एक बड़ा गुण है दुकानदार लोग पलड़ों के दरम्यान लगी लकड़ी को अंगुलियों से इधर-उधर दबाकर

अपने मानसिक विचारों के तदनुरूप पदार्थों और उनके दाम में फर्क पैदा कर लेते हैं। कोई दरम्यान वाली लकड़ी को सीधी रख कर आँख द्वारा लकड़ी का सन्तुलन देकर पूरा-पूरा तोल का काम लेता है और कोई अपने चालाक तरीकों से अपने लिए लाभ दूसरों के लिए हानि का कारण पैदा कर लेता है। ये तो आवश्यक है ही कि तोल होने से पूर्व पलड़ा खाली करना ही पड़ेगा। पलड़ा भरा हुआ फिर उसे तोलना हास्य का विषय बनता है। अर्थात् अगर हमको तोल देना है तो पहले, पुराने पदार्थ, गले सड़े, जीर्ण संस्कार विचार और ढंग से खाली होना ही होगा।

तन्नआसुव का प्रश्न तो बाद में पैदा होता है। कोई अपना तोल वजन तब दुरुस्त प्राप्त करता है यदि वो व्यर्थ अनावश्यक वस्तु से पाक होगा। यद्यपि ये तोल की रीति हमें साधारण सी बात नजर आयेगी परन्तु यह है एक वास्तविकता। तोल के बाट ही हमारा दाम हैं, परन्तु तोल में जाने से पहले हमें चौकन्ना होना, सत्पात्र होना, भाव के अनुरूप होना, जिनके बदले हमें तोले जाना है उसके अनुसार होना, एक बड़ा गोपनीय विषय है। अपने को परीक्षा में डाल सकने वाले वीर गिने जाते हैं जो जान बूझकर अपने को परखा करते हैं वे कहाते हैं जिज्ञासु। वह किस पानी में रह सकते हैं। इसका विचार करना महत्ता का गुण है। सबसे प्रथम सन्तोष उनके लिए एक बड़ा जादू हुआ करता है। शान्तिमय बर्ताव जेवर हुआ करता है। साधरणतया जब हम किसी दुकान पर जाते हैं तब हम भी यह कोशिश किया करते हैं कि तोलने वाले को अशान्त न करें, न झुंझोलें, न उद्विघ्न करें, न ऊँचा बोलें ताकि वो सन्तुलन करने की गतिविधि में किसी प्रकार से इधर उधर न हो सके। ऐसे ही जीवन के व्यापार में शान्तचित्त निर्विघ्न बाजी ले जाया करते हैं। मुझे याद है कि स्व० सर्वदानन्द जी महाराज बड़े गम्भीर और शान्त स्वभाव के सच्चे सन्यासी थे। वे एक बार दाजल जिला डेरागाजी खाँ में आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर पधारे जाम-

पुर से दाजल के लिए तांगा उनको देर से मिला और वे रात को देर से ही दाजल आर्यसमाज मन्दिर में पहुंचे। अपनी खातिर किसी को तकलीफ देना वे अच्छा नहीं मानते थे आर्य समाज मन्दिर के थड़ा पर कुछ और लोग भी सो रहे थे, वह दिन थोड़ी थोड़ी सर्दी के थे, स्वामी जी एक तरफ कम्बल तान सो रहे। अगले रोज प्रातः जलसा की तैयारी के लिए एक प्रवन्धक ने थड़ा खाली करा लेने की खातिर सबको उठा दिया। स्वामी जी जो कि कम्बल ओढ़े थे उनको भी उस सज्जन ने पांव की ठोकर से 'उठ उठ' की आवाज़ से जगा लेने का ढंग बर्ता। स्वामी जी उठ बैठे और कम्बल बगल में दबाकर जंगल को चले गये, वह सज्जन तो बहुत शर्मिन्दा हुआ लेकिन स्वामी जी जो इतनी दूर से चलकर वहाँ जाया करते थे उन्होंने दाजल वालों से प्रेम बनाये रखा और उन्हें कभी अपने प्रवचनों से निराश नहीं किया।

आजकल के कहलाने वाले नेताओं की तरह दाजल वालों पर वह अनेक प्रकार का असंतोष व क्षोभ प्रकट कर सकते थे पर उन्होंने तो किसी को जतलाया ही नहीं कि उन्हें किस ढंग से जगाया गया था वे चाहते तो समाज वालों से जवाब तलबी करते उनको असहयोग देते। कुछ न सही एक आध बार तो उनका वार्षिकोत्सव पर जाना छोड़ सकते थे। परन्तु उनका संतुलन उनके वाट उनके विचारों से अत्यन्त अनुकूलता रखते थे। परिणामतः क्या हिन्दू क्या मुससमान, क्या आर्यसमाजी क्या सनातन धर्मी उनके प्रवचन में जाना अपना अहोभाग्य मानते थे। ऐसा पलड़ा जो सदा संतुष्ट, हर रजा में राजी, हर पल परमपिता के लिए कृतज्ञता के मूड में बना रहता है, कृतज्ञता के मूड में बना रहना शोभायमान होता है। उनका हर पल स्वयं में एक उत्सव हुआ करता है। सुरतान में मिला हुआ होता है। सरदार भगतसिंह कई बार अपनी माता से कहा करते थे कि दिन भर तो वो अनेक कष्ट झेलते। रात्रि को निद्रा में वह अपने आप को चारों तरफ से फूलों से लदा पाते थे। मां भी हैरान थी ये अजब तमाशा

है और उसके मन में यह द्विविधा बनी ही रही कि इस अवस्था का क्या कारण हो सकता है अपने पुत्र के विदा ले जाने के बाद माता स्वयं देख पायी कि त्याग-मय जीवन, उसकी तपस्या देश का स्वतन्त्रता संग्राम उनके लिए फूल इकट्ठे कर रहा था जो उन्हें रात को निद्रा में तोल आया करते थे और आने वाले दिनों के लिए एक रिजर्वेशन तैयार कर रहे थे केवल यह नगमा सुना देने के लिए कि "नेक काम दाम बनाया करते हैं।" सत्य तो यह है कि हम अपने पलड़े समझते नहीं उनमें तौल लेने के लिए उन्हें पहले धूल आदि से साफ करते नहीं। संसार वाले तो पलड़े देख पाते है जिनमें पदार्थ डाले जाते हैं परन्तु साफ पदार्थ और उनके मूल्य की बात विचार में कम आती है पर दिव्य संसार के दिव्य पलड़े इतने सुनहरे और मुकम्मल होते हैं, इतने साफ होते हैं, इतने स्वच्छ व सूक्ष्म होते हैं जहां 'कुछ न कभी' तोल दिया जाता है। ऐसे पलड़ों का माल, ऐसे पलड़ों के बाट हमारी नजरों से बाहर हुआ करते हैं। ऐसा तुलने वाले को यह विचार भी नहीं होता कि वो तोला जा रहा है, उसे तुलना है, किस भांति उसका मूल्य लगेगा वो तो केवल इतना जानता है कि जीवन यापन सुन्दर और कर्त्तव्य मय होना चाहिए।

कहते हैं इटली देश के अपने समय के नेता जनता के दिलों के मालिक श्री गेरीबार्डी को रिपोर्ट हुई कि उनके यहां के एक गड़रिये का भेड़ का बच्चा गुम हो गया है। उस शासन कर्त्ता ने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी कि भेड़ का बच्चा ढूंढा जाय पर रात देर तक ढूढने पर सफलता न हुई सिपाही लोग निराश होकर वापिस लौट आये। सुबह हुई गेरीबार्डी स्वभाव के प्रतिकूल देर तक सोये पाये गये। दिन चढ़ जाने पर उनके कर्मचारी ने उन्हें जगाना चाहा परन्तु उसने देखा कि वे अभी सो रहे थे और उनके पांव के करीब भेड़ का बच्चा भी पड़ा सो रहा था। इतने में श्रीमान जी की आँख खुली और आज्ञा दी कि अमुक गड़रिये को भेड़ का बच्चा पहुंचा दिया जाय। मालूम यह हुआ कि सिपाहियों के निराश लौट आने पर गैरी

बार्डी स्वयं उस भेड़ के बच्चे को ढूंढने के लिए बाहर चले गये थे। और आखिर उसे ढूंढ ही लाये। जरा सौभाग्य मिले तो हम यह विचार कर पायें कि प्राचीन दिनों में शासक कैसे हुआ करते होंगे। कहां बादशाह कहां गड़रिया। कहाँ ढूंढ निकालना गुम हुआ बच्चा, ऐसे पलड़ों वाले देवता कहलाने का सौभाग्य लिया करते हैं।

बात हो रही थी अपने अपने पलड़ों के सत्पात्र होने की, श्री पाल मोडी ने दुरुस्त कहा था कि "मानव की महानता इस बात में नहीं कि उसके पास कितने सेवक हैं अपितु इस बात में है कि वह स्वयं कितने लोगों की सेवा करता है।" अपने कर्त्तव्य की भावना भी अपने-अपने ढंग से हुआ करती है आंख भी अपनी, दृष्टि भी अपनी कर्त्तव्य भी अपना, और निभाव भी अपना। इंग्लैंड के महान नेता ग्लैडस्टोन प्रधान मन्त्रीको अगले रोज पार्लियामेंट में भाषण देना था। जिसे लिखने में वो रत थे। इस बीच उन्हें सूचना मिली कि पड़ोस में एक बालक बीमार है और उसकी हालत खराब हो रही है वो कामछोड़ उसे देखने चले गये। वहां उस की सेवा सुश्रुषा में देर लग गयी और लौटने पर अपना भाषण पूरा न लिख सके। जब किसी ने कलके भाषण की याद दिलाई तो उत्तर यह दिया कि भाषण अधूरा रह जानेसे उनके देशका कुछ नहीं बिगड़ेगा पर उनके वहां चले जानेसे एक बीमार बालक की हालत सुधर गई इससे बढ़कर खुशी की क्या बात हो सकती है। ऐसे उच्च आत्माओं के हमें पलड़े खाली के खाली नजर आते हैं जिनमें कुछ पदार्थ और कुछ करन्सी नजर नहीं आती। जिनके बाट नहीं बन पाते जिनके संतुलन हमारी दृष्टि में नहीं समाते। परन्तु उस शहनशाहे आलम के यहां "कुछ न भी" तोला जाता है सुनहरी बाटों में सुन्दर पारितोषिक परन्तु इन पर भी नजर पड़ती है सद् आत्माओं की, दिव्य पुरुषों की जो तोलने को एक बड़ी कला मानते हैं। यही ज्ञान है, विज्ञान है, राग है, रंग है ढंग है, पर जिसे यह नसीब हो। जिसे योग्यता मिले इन पलड़ों की, डंडी की, देखभाल की, केवल धागों की नहीं, देखा होगा कि पलड़ों के दरम्यान लगी डंडी की भी अपनी

पैमाइश होती है। पलड़ों का साइज डंडो के साइज से अनुकूलता रखता है इनको यह अनुकूलता ही तोल में अपना भाग रखती है। परन्तु हमारे यहां परम सूक्ष्म देवों का देव, हमारे जीवन के इन विशाल पलड़ों में अपना प्रभाव बहुत सूक्ष्मता से निभाते हैं जिससे दिव्यता का राग-रंग अधिक से अधिक बनता है उसकी 'यद् भद्रं' का बाट सन्तुलन इतना अधिक प्रभावशाली, विशाल, स्वतन्त्र और सत्तारूढ़ होता है जैसा वे स्वयं हैं, इतना नफीस जैसा वो स्वयं, इतना स्थायी जितना वह स्वयं, इतना निर्दोष जितना वह स्वयं, और इतना समया नुकूल जितना वह स्वयं, सारी प्रकृति और सारे पारावार में जागरूक, इतना प्रभावशाली जितना वह स्वयं, इतना सफल जितना वह स्वयं क्योंकि डंडी ही अपने हाथ में जिसकी कल्पना हमारी बुद्धि और ग्रहण शक्ति से बाहर है, हमारे हिसाब किताब से बाहर है! अत्यन्त पूरी नपी तुली: पूरे-पूरे दाम वाली, यह तराजू स्वयं ही अपने काम किये जा रहा है उसमें न किसी के नारों की, गूंज की, शिकायत की, सराहना की, Preference की, न किसी की सिफारिश की, न किसी के जोर की जरूरत रहती है। कार्य हुआ नहीं तोल लगा नहीं विचार बना नहीं, मोल बना नहीं, ताजे का ताजा अपितु prompt and fresh किसी को पसन्द आये न आये, कोई चाहे न चाहे, कोई उसकी वास्तविकता को समझ सके न समझ सके, तोला जाना एक आवश्यक भाग्य बनता जाता है। नम्बर लगते जाते हैं और नम्बरों के अनुसार हर एक के जीवन का भुगतान होता जाता है। अतः परासुव और तन्नासुव की दुनियां में अपने आपको फिट कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। अपना अनुभव सत्यता पूर्वक कर लेना अपना दाम लगा लेना है। ऊपर-ऊपर से हमें यह राज समझ में नहीं आता परन्तु अन्तरतम से संस्कार जागे नहीं कि रास्ता मिला नहीं और हमने अपने स्वामी के तराजू में वजन पाये नहीं। इसीलिए तो कहा खाली होवो और तोल करो, अपने यह न्यारे रंग भी देखने की बात बन जाती है।

: ९ :

नौवीं भेंट

सन्त राबिया वन में तप कर रही थीं पशु पक्षी उसके चारों ओर बैठे हंस खेल रहे थे। हसन उधर से निकले उन्हें भी पहुंचा हुआ सन्त माना जाता था। हसन ज्यूँही राबिया के समीप आये सारे पशु पक्षी उनके आते ही अपने-अपने मार्ग पर चले गये यह देख उन्हें बड़ा विस्मय हुआ और उन्होंने राबिया से कहा कि पशु पक्षी तुमसे तो लिपटे हुए थे वे मुझे देख भाग क्यों खड़े हुए। इस पर राबिया ने पूछा 'आप खाते क्या हैं ?' हसन ने कहा प्राय: गोश्त ही खाने को मिलता है। राबिया हंस पड़ी और कहने लगी "लोग आप को जो समझें उनकी मरजी पर आपका दिल कैसा है उसे ये नासमझ पशु पक्षी भली प्रकार जान गये हैं। इस लिए वे आप से दूर चले गये हैं।" संसार एक बड़ी मार्केट है। यहां सब अपनी सौदागिरी करने आते हैं यह संसार एक बड़ी दुकान भी है। जहाँ बड़ी-बड़ी खरीदोफरोख्त हो जाती हैं। पदार्थ कही के, 'बाट' कहीं के, किस्म कहीं की, देश किसी के, किस नाप तौल के, बाटों का अर्थ करने वाला संसार भर का शासक है संरक्षक है। जिस पर किसी इन्टरनेशनल करेंसी के नियम लागू नहीं होते, उसका लेखा जोखा अपना, जांच पड़ताल अपनी एक्स-चेंज अपना करेंसी तो क्या यहां तो करेंसी के अतिरिक्त भी सौदा हो जाता है। यहां एक अजब और अद्भुत बाजार गर्म हो रहा है कि

अच्छे बाटों से सद्‌गुण अच्छा स्वभाव प्रेम संजीदगी, पर उपकार, सेवा नेक नीयति के भाव चुकते हैं। सुख शान्ति ऐश्वर्य और साधनों के साजो समान से ये विचित्र मार्केट देखने और समझने के योग्य है। परोक्ष से ही आशीर्वाद और लानत का प्रोग्राम मिलता है अपने कृतकर्मों के उपहार में। प्रायः देखा जाता है कि ज्यों हि कोई किसी दुकान पर वस्तु खरीदने जाये। सयाना खरीदार दुकानदार के बाटों पर नजर रखता है कि कहीं वो कम वस्तु के बाट डाल कर कम वस्तु तो नहीं दे रहा, धोखा तो नहीं मिला रहा, और अगर कोई वस्तु कम पड़ रही हो तो झट से दुकानदार को कहा जाता है कि भाई अपने बाट तो संभाल इसलिए बाटों पर दृष्टि रखनी अत्यन्त आवश्यक है ताकि हम घाटे में न रहें। परन्तु हमारे यहां वस्तुओं, पदार्थों, अर्थात् सुख-दुःख स्वास्थ्य सन्तोष पर हर एक अपनी दृष्टि जमाये रखता है मगर कोई यह नहीं देखता कि उसके अपने बाट दुरुस्त हैं कि नहीं, पूरे हैं कि नहीं, सही हैं कि नहीं, प्रत्येक अपने डाले बाटों को भूल जाता है। इसीलिए हमारी सौदागिरी घाटे वाली हो जाती है। कम इनाम वाली, नुकसान वाली, और अधूरी रह जाती है। काश कि हम जब अपने जीवन के साधनों पर, हेतु पर, ध्यान करें साथ ही यह भी विचार करें कि हमने कर्म क्या-क्या किये थे। संसार के अधिष्ठाता के पास बाटों की देखभाल का बड़ा सूक्ष्म से सूक्ष्म यन्त्र है जिसकी पकड़ से कोई बच नहीं पाता। प्रत्येक को अपने अपने कृतकर्मों का लाभ और हानि अवश्यमेव भुगतनी पड़ती है। यहां देर हो सकती है मगर चूक नहीं हो सकती उधार भूल नहीं सकती। यदि हम लोग संसार की घटनाओं पर नजर दौड़ाते दौड़ाते बाटों की संभाल कर पायें तो शीघ्रता से समझ में आ जाये कि सत्पात्रता सुख और शान्ति लाती हैं। इससे सच्चा मार्ग मिलता है इससे ही सन्तोष का फाटक खुलता है और अनन्त जीवनों का अनन्त सन्तुलन भी बनता है।

अमृतसर में एक लड़की देखी गई जिसकी आयु बीस साल की थी। उसकी सुन्दरता अवर्णनीय थी सब अंग सुडौल आकर्षक वो अच्छे

धनी माँ बाप के घर की पुत्री थी परन्तु बोल नहीं सकती थी बिस्तर पर पड़ी रहती थी पर वो भी सीधी लेटे लेटे, क्योंकि वो करवट नहीं बदल सकती थी उसका सारा कार्यक्रम विस्तर पर ही होता था। जनसाधारण देखते, विस्मित होते, सेवा तो उसकी होती ही थी। धार्मिक लोग उसे उसके बाटों का खेल कहते कि उसके पिछले कर्म ऐसे थे बाट खोटे थे जिसके कारण उसकी यह दशा थी।

पटियाला में एक कालिज के प्रिंसिपल थे। एक दिन पढ़ाते-पढ़ाते उन्हें अधरंग का हमला हो गया। छुट्टी ली, मर्ज बढ़ती गई आखिर नौकरी से जबाब मिल गया। इलाज चलता रहा और कुछ समय के बाद वह ठीक हो गये नौकरी तो छुट चुकी थी। कमजोरी दोबारा नौकरी नहीं लेने देती थी। उनकी धर्मपत्नी और एक लड़का था। लड़का जवान था। आशा थी कि लड़का कमायेगा और घर गृहस्थी चलेगी। एकदिन लड़का ही हादसा का शिकार हो गया उसकी टाँग और बाजू टूट गये। पलस्तर चढ़ गये। और घर की आशाओं का भी पलस्तर हो गया। बड़ी बेबसी का आलम। देवी इस दुःख में पागल हो गयी। सब तरफ से दुःख ने घेराव कर लिया। आखिर कहना यही हुआ जो हम कहे जा रहे हैं कि उनके बाट खोटे थे। हम लोग जहान वाले जहाँ-दीदा तो कह दिये जाते हैं परन्तु विवेकशील बनना बड़े राज़ की बात है और यह उसे सिद्धि मिलती है, जिसे परासुख और तन्नासुख की देखभाल का सौभाग्य मिलता है कहाँ का रोग किसे लग जाता है। कहाँ के दुर्भाग्य किसे आ दबोचते हैं। कहां के कर्जे कहाँ चुकताव होते हैं। देखे और देखे ताकि हमारे दिलोदिमाग में इस दुकान का नियम घर कर जाये कि दुर्गुण नहीं लेने, पाप नहीं करने, दुःख नहीं कमाना। पुण्य कमाना है। ताकि शान्ति और सन्तोष का वर मिल सके। एक करोडपति अपने घर से दूर बाग में पलंग डाले पड़े हैं। उन्हें पलस्तर लगा हुआ है। सारे नित्य कर्म बिस्तर पर हीं पूरे करते हैं। पैसा है कर्मचारी हैं। कर्मचारियों का भी समय विभाजन है ताकि उनकी देखभाल

में कोई कसर न रह जाये। प्रातः सायं परिवार वालों से स्वयं कहते हैं, देखो मेरी हालत पैसा है सब सुविधायें हैं परन्तु जकड़ा पड़ा हूं। पूर्व जन्मों के कर्मों से बाट मेरे खोटे थे कि मेरी यह हालत हो रही है। एक ओर सेठ साहब ब्लडप्रेशर के मरीज, बड़े धार्मिक बड़े दानी परन्तु न कष्ट किया जाता है न अच्छा सुन सकते हैं न ऊँची बोल सकते हैं। ज्यों ज्यों देखते जाये त्यों त्यों यह खेल तमाशे अपना विशाल क्षेत्र दिये जा रहे हैं। तमाशे इतने ज्यादा कि जिनसे उन्हें देखने और समझने का समय ही नहीं मिलता। अच्छे कर्मों के अच्छे फल, बुरे कर्मों की बुरी रीति। फिर डंडी वाले का अपना न्याय, यह सारे राग रंग, विचित्र से विचित्र, निराले से निराले, समझ से बाहर, न्ययालय के चमत्कार, दुकान की भरमार, संसार वालों की भागदौड़, एक अपना माहौल बनाये हुए हैं और यदि बात लम्बी न करें निरर्थक न कहें तो यही कह के चुप हो जायें कि परमपिता परमेश्वर के राज्य में दुर्गुणों का दूर करना और शुभ गुणों को प्राप्त करना ही एक सत्य मार्ग है।

पिछले चन्द दृष्टान्त प्रस्तुत किये हैं उनके जिनके तोल हो चुके थे परन्तु दाम देने पढ़ रहे हैं अब उधार तो चुकानी है उस सेठ का कार्यालय चलता है तब जब सबके लेखे पूरे किए जा सकें। कई घटनाये ऐसी घटती हैं जिनके द्वारा एक से अधिक वे तोल इकट्ठे किये जाते हैं क्योंकि उनके बाट एक से ही बनते हैं। चलते जाओ देखते जाओ भगवान के इस विचित्रालय का हाल एहवाल न देखते ही बनती है न सहते बनती है और न ही आह भरे। कई प्रकार दिल दहला देने वाली घटनाएं केवल एक ही ध्वनि उत्पन्न करती हैं 'क्षमा करो भगवान रक्षा करो,' १० सितम्बर १९७६ को दो विमान आकाश में ही टकरा गये सड़क में तो टकराव माना जा सकता है यथा सड़क तंग होती है कोई आगे आ जाता है पर आकाश तो खुले का खुला फिर उनकी उड़ान का नियन्त्रण धरती पर से बड़ी कड़ी देखभाल से संचालित होता है। उस पर भी दो

विमान ऊपर ही ऊपर टक्कर गए। १६७ यात्री अठारह कर्मचारी एक साथ परलोक सिधार गये और आकाश से लाशें ऐसी गिर रही थीं जैसे ओले पड़ा करते हैं। वेद में मन्त्र आता है 'मा नवधीरिन्द्र' मा पराद' पहले वाक्य का अर्थ हुआ 'हे इन्द्र हमें न बांध पूर्वकृत कर्मों से, यह खेल जो ऊपर लिखे गए हैं पूर्व कर्मों के बन्धन हैं। इसलिए भगवान से उन से मुक्त होने की प्रार्थना की गई। एक मां अपने बालक सहित अमेरिका से भारत को विमान द्वारा आ रही थी अपने छोटे बालक को अपने नाना नानी को मिलाने हेतु, विमान में ब्रेकफास्ट पर गोलियां मिला करती हैं बालकने भी गोली ली और वह गोली गले से नीचे उतरने के बजाय सांस की नली में जा फंसी बालक उस अटकान से मुर्झाता गया। मां गला फाड़ २ दुहाई देती रही मेरे नन्हें बालक को बचाओ : वेटरिस अन्य कर्मचारी उंगलियाँ मार ऊपर नीचे हिला डुला, अनेक प्रयत्न हो चुके पर बालक काला होता जा रहा था। भला कोई सोचे कष्ट आना भी था तो नीचे आ जाता जहाँ पास में किसी औषधालय का सहारा लिया जाता कोई यन्त्र निकाला जाता पर धरती से दूर और वह भी आकाश में कोई करे तो क्या। पर साधना के देव और साधनों के नाथ के खेल तमाशे अपने।

एक युवक अमेरिका में डॉक्टरी की नौकरी करता था। उसकी माँ बंगलौर में बीमार पड़ गई और आखिरी दमों पर आ पहुंची। उसे सूचना मिली कि यदि माँ के दर्शन करने हों तो अभी पहुंच जाओ। वे डाक्टर भी अपने परिवार सहित उसी जहाज से यात्रा कर रहा था जिस जहाज में बच्चे की साँस की नली में गोली फंस रही थी। उसने उड़ते जहाज में बच्चे के जान बचाने की दौड़ धूप देखी उससे न रहा गया वह उठा उसने भी हाथ पाँव मारे परन्तु बच्चा तो दम तोड़ता नजर आ रहा था। एक बार तो वह निराश हो कर पुनः अपनी सीट पर बैठ गया पर बैठते ही उसे अपने प्रोफेसर की बात याद आ गयी और वह झट से बच्चे के समीप पहुंच गया

वेट्रैस से कहने लगा कोई ब्लेड या कोई धारीदार काटने वाला यन्त्र लाइए अखिर मुश्किल से खुण्डा सा ब्लेड मिल गया, जिसके द्वारा उसने कभी अपने प्रोफेसर की बतलाई बात के अनुसार बच्चे की सांस की नली के करीब एक कटकर दिया और बचा सांस लेने लग पड़ा उसके चेहरे पर खून लौट गया उसके बचने की आशा बंध गयी इधर-उड़ते जहाज से बम्बई को सावधान कर दिया गया कि वह शीघ्रता से बच्चे को हास्पीटल ले जाने के साधन जुटा दें। जहाज बम्बई पहुंच गया बच्चा हस्पताल ले जाया गया। वह नवयुवक डाक्टर बंगलौर के जहाज में सवार हुए बंगलौर पहुँचकर उसे ज्ञात हुआ कि उसकी माता थोड़ा समय पूर्व चल बसी है। विचार यही बना जब वो एक तरफ बच्चे के जीवन से संघर्ष कर रहा था वहाँ उसकी माता मृत्यु से संघर्ष कर रही थी और हार रही थी। यह घटना के अनेकों पलड़े एक साथ तुलने, अनेकों के हाथ चुकने का एक साक्षात् उदाहरण है। सच तो यह है कि मनुष्य संभलता नहीं, समझता नहीं, वह वहती हुई नदी में तो अचल खड़ा रह सकता है पर मनुष्यों से भरे संसार में अपने नियमों और श्रद्धा के अनुकूल अचल नहीं रह पाता।

यह ठीक ठीक बात है कि मनुष्य का सबसे बड़ा दुश्मन है उसका अपना उच्छृंखल स्वभाव और उसके भीतर बसी हुई सारी अंधी शक्तियाँ, हमारा पुराना राग, भगवान निराले, उसकी तोल और माप उजियाले, उसके न्याय और कार्यालय, अपनी महत्ता आप हैं। काकोरी मुकद्दमा में रोशन सिंह जी को मृत्यु की सजा हुई थी। कुछ ही सालों के बाद उनकी विधवा की लड़की बड़ी हो जाने पर उसके विवाह की समस्या बन गयी। उस कस्बा दारोगा ने लोगों के मध्य एक यह भय पैदा कर दिया कि साजिश के मुल्जिम की लड़की से किसी की शादी करना ब्रिटिश सरकार के अफसरों को अच्छा नहीं लगेगा। इस पर भी एक नौजवान शादी के लिये तैयार हो गया क्योंकि वह लड़की रोशन सिंह की थी। अब प्रश्न था खर्च का यद्यपि थोड़ी रकम चाहिये थी पर वह आती कहाँ से। संसार को

नाच नचाने वाले के भी नाच अपने। श्री गणेश शंकर विद्यार्थी कानपुर में अपने वक्त के माने जाने हुए सम्पादक थे उनको रोशन सिंह के परिवार का यह समाचार मिला, पन्द्रह मील पैदल चल के वह रोशनसिंह के गांव पहुंचे। दारोगा जी से बात की उनको बुरा भला कहा, शर्मिन्दा किया और उस भगवान के बन्दे ने रोशनसिंह की लड़की का विवाह कर देने का सारा खर्चा अपने जिम्मे लिया और गलत प्रापेगंडा भी बंद कर दिया। जब विवाह के समय पिता का पार्ट देना था तो विद्यार्थी जी स्वयं पिता बन बैठे और विवाह सम्पन्न हो गया। अब कोई सोचे विद्यार्थी कहाँ से निकल पड़े वो दारोगा जो एक बार विरोध करता था विवाह की सारी जिम्मेवारी अपने ऊपर ले बैठा कितने लोगों के पलड़े एक साथ तुल गये। कितने लोगों की नेक नीयती काम कर गयी और उस प्रजा-पति की प्रजा का पालन कितनी सहजता और सुन्दरता स हो गया। कोई माने या न माने कई ऐसे व्यक्ति भी होते है जिनसे किसी का कुछ बुरा काम तो नहीं हो जाता परन्तु उनका दिल दूसरों के प्रति केवल द्वेष अग्नि से जलता रहता है ईर्ष्या और बदनीयति उनको अन्दर ही अन्दर से निढ़ाल किये रहती है। ऐसे आदमी कभी खुशहाल नहीं देखे गये। बात एक और निराली याद में आ गयी 'अखण्ड ज्योति' जनवरी १९७३ में एक घटना यूं लिखी गई है। "पादरी नित्य ससुद्र को जाया करता था एक दिन उसने देखा कोई तरुण नाविक किसी सुन्दरी की लाश के साथ अपने बहुपाश कसे हुए मरा पड़ा है पादरी उसे आशीर्वाद देना भूल गया। उसने क्रोध से झल्ला कर कहा, हटाओ इस कलुष ग्रस्त लाशों को इस स्थल से और उन्हें मरघट के एक गन्दे कोने में गाढ़ दो। ऐसा ही किया गया वे लाशें कूड़े के ढेर में गाढ़ दी गयीं और वे सड गई और दो पुष्प गुल्मों के रूप में उग कर सारे मरघट को सुगन्ध से महकाने लगे।

एक दिन गिरजे में उत्सव था धूपदानी में धूप और पवित्र जल का अभिसिंचन करके पादरी धर्मोपदेश में मग्न था और बता रहा

था कि पापियों पर स्वर्ग के पिता का शाप किस किस तरह उतरता है यह तो उसे याद ही नहीं रहा कि ईश्वर का स्वभाव क्रोध नहीं, वे तो अनन्त प्रेम है अनन्त प्रेम धर्मोपदेश की ओर श्रोताओं ने ध्यान नहीं दिया वे तो वेदी पर पड़े हुए पुष्पों की अलौकिक मादकता से उत्पन्न मस्ती में झूम रहे थे। पादरी ने सेवकों से पूछा ये फूल कहां से आये किसके हैं और किसने चढ़ाये। माली ने रुंधे गले से कहा कूड़े के ढ़ेर में उसी मरघट की दो लाशों पर जो झाड़ उगे हैं उन्हीं ने मरघट की तरह गिरिजाघर को भी महका दिया है। पादरी की आंखों से दो अश्रुबिंदू लुढ़क पड़े, पूजा की वेदी पर, बिखरे हुए उन पुष्पों पर। मैं इस घटना की अधिक जाँच पड़ताल में नहीं जाना चाहता परन्तु रचयिता की रचना का क्या ही वर्णन किया जाय। यह रहस्य की बात कहे बिना नहीं रहा जाता। क्योंकि जिसके हाथ में 'यद्भद्रं' की लकड़ी है जो मानव के पलड़ों का सन्तुलन करती है उन पलड़ों में ये कुछ ऐसी चीजें मिल जाती हैं घुल जाती है जो हमें बाहर से दृष्टिगोचर तो नहीं होती परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म विचार भी वहाँ हिसाब में पड़ जाते हैं। आज के विज्ञान ने कमाल कर दिया है जो हवा का वजन ज्ञात कर पाई है। उसके यहां हवा भी जो दूसरों का असली रूप बनाती है वो भी केवल उसके यहां तुल जाती है। उसका मूल्य भी पड़ जाता है और उसके दाम भी चुकता हो जाते है। इसलिये कहा था किसी ने—

"किसी ने संत से पूछा हुई विद्या सफल किसकी
कहा विद्या सफल उसकी कि नियत साफ हो जिसको"

इतने बड़े व्यापार क्षेत्र में हम अब भी स्वीकार करने को तैयार नहीं होते कि हमसे कोई दोष हो गया है। हमारे हृदय में भी किसी के प्रति क्रोध शिकायत और विरोध बन गया है यदि मानव

इस दिव्यता भरे बाजार की गर्मागर्मी, उसका कृत्यकार्य, उसकी सफलता पूर्वक चुकतान, मानने के योग्य हो जाये तो अपने जीवन के बहुत से पापों से बचा जा सकता है। थोड़ा सा प्रकाश चाहिये अशुद्ध विचार खुरदरा विचार और जलील अमल हट सकता है यदि और यदि अपने भीतर के शुद्ध और पवित्र प्रकाश से जिस पर अपने निजी परम पिता की छाप लगी हो। हम पवित्र वेद मन्त्रों का थोड़ा सा प्रकाश अपने अन्दर समाने के लिए तैयार नहीं हो पाते ताकि हमेशा के लिये कष्ट दु:ख अधंकार से खलासी हो जाये, मन हलका हो जाए, हमारा तोल ही न बने उसके बाट ही न मिलें मुकाबले की सूरत ही न पड़े। जब छोड़ दिया अपने आप को, 'कुछ न का' रुतबा दे दिया, वहाँ तुलेगा क्या, वजन बनेगा कैसा, उस पैमाने का नाम क्या होगा। हाँ एक परिणाम जरूर होगा कि परासुव का पलड़ा खाली और तन्नासुव का पलड़ा भारी। यह एक असाननीय स्वीकृति व वास्तविकता है परन्तु है सही। मानव खुद तुल रहा है पर उसका शरीर चाहे मौजूद हो मगर उस शरीर में वो स्वयं विद्यमान न होगा। यह समस्या साफ कि दिव्य मूल्य उसके इधर उधर का सारा वातावरण बनाये होंगे इसलिए कह दिया था किसी ने—

"खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर 'इकबात'
से पहले
पिता बन्दे से खुद पूछे बता तेरी रजा क्या है ।।

ऐसी अवस्था में परमपिता खुद झुक जाते हैं और भक्त को अपने मन में रमा लेते हैं भगवान कृष्ण का सन्देश कि कर्म कर फल की इच्छा न कर इस दृष्टिकोण का वर्णन करता है कि जो अपना कर्त्तव्य उनका एक पलड़ा होता है और कर्त्तव्य का कर्त्तव्य ही उसके लिए दूसरा पलड़ा होता है। केवल अनुरूपता की यह हद कि अपना काम पूरा कर दिया जाता है। शेष कुछ भी ही भगवान

सबके सांझे हैं। प्रत्येक को अपनी अपनी पुकार की कला और बुद्धि का अनुदान देते हैं। मानव गीता और वेद के प्रवचन दे सकता है परन्तु छोटा सा जानवर चींटी रेतसे शक्कर का टुकड़ा चुन सकती है। यह साधारण आदमी तो क्या विद्वान् की भी पहुँच से बाहर है उसे अपनी जगह ज्ञान है परन्तु मानव को अपनी जो दिव्य चेतना है, उसकी अपनी मानवता है, अपने आप को पा लेने की सामर्थ्य है, वो उसके लिए बहुत ज्यादा सम्मान है। स्वामी विवेकानन्द ने एक उत्तम उदाहरण दिया है कि एक विशाल रेलगाड़ी सामने से बढ़ती चली आ रही है रेल की पटरी पर एक चींटी है वो चींटी आहिस्ता आहिस्ता पटरी से उतर जाती है। जिससे इतनी भयानक रेलगाड़ी उसका बाल भी बांका नहीं कर सकती। चींटी में चेतना है। रेल गाड़ी अचेतन है चींटी में विवेक है अपने कदम को बदल लेने का सामर्थ्य है परन्तु रेलगाड़ी को नीचे उतरने की सामर्थ्य नहीं है।

बात हो रही थी ऊपर बतलाये वेद मंत्र की जिसका दूसरा वाक्य है 'आपरादह' इस संस्कृत के शब्द का अर्थ है कि हे भगवान हमें अपने से परे न कर अर्थात् पूर्व कर्मों के एवज़ भी हमें अपना आत्मीय मानव ज्ञानं। अब उसका हाल भी सुनिये। अमेरिका के भौतिक शास्त्री डा० स्टीवेंशन ने ६०० ऐसी घटनायें एकत्रित की हैं जिनके तोल तो हुए कभी पर मोल लग रहे हैं, अब ये पूर्व कृत कर्मों और उनके फलों का एक विचित्र वर्णन पेश करते हैं। मद्रास संगीत ऐकेडेमी का एक रविकिरण ढ़ाई वर्ष के बालक को उसकी अद्भुत संगीत प्रतिभा के उपलक्ष्य में विशेष छात्रवृत्ति दी गई है। यह बालक न केवल वाद्य यन्त्रों का ठीक बजाना जानता है वरन दूसरों द्वारा बजाये जाने पर उनकी गलती भी बताता है। सरजान फील्डिंग इंगलैंड के जज थे वे अन्धे थे पर उनके कान इतने सूक्ष्म थे कि अपने जीवन काल में जिन तीन हजार अपराधियों से उन्हें वास्ता पड़ा था उन सबकी आवाज ठीक तरह जान पाते थे और उनका नाम बता सकते थे। मुकद्दमों के मुद्दतों बाद जब लोग

उनसे मिलने आते तो नेत्र न रहते हुए भी केवल स्मरण शक्ति के आधार पर जज साहब अपराधी का नाम मुकद्दमे का सन्दर्भ बता पाते।

दो सौ वर्ष पूर्व जर्मनी होनरिस होनेनकेन नामक बच्चे का जन्म हुआ। वह बालक तीन वर्ष का था अब उसे हजारों लैटिन मुहावरे कंठस्थ थे। इग्लैंड में पांच अक्टूवर उन्नीस सौ पचास को एक भारतीय महिला शन्कुतला देवी जिन्हें गणित की जादूगरनी कहा जाता है ने टैलीवीजन पर अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया, तब एक सज्जन ने एक गणित का प्रश्न हल करने को कहा, बिना पल भर विलम्ब करने के इस देवी ने यह कह दिया कि प्रश्न ही गलत है। यह प्रश्न ब्रिटेन के बड़े २ गणित आचार्यों ने तैयार किया था इसीलिए सब लोग एक दम आश्चर्य में डूब गये कि प्रश्न गलत कैसे हो सकता है। B. B. C. कार्यक्रम के आयोजन कर्त्ता ने प्रश्न की जांच कराई तो वह विस्मित रह गया कि प्रश्न गलत था और उसने साथ में यह माना कि 'हम जितना समझ पाये हैं मन की शक्ति और सामर्थ्य बहुत अधिक है।" कार्फीड विश्व विद्यालय ने एक चार वर्षीय बालिका बेविल धाम पन्नम् के गणित अध्यापन के लिए अतिरिक्त प्रबन्ध किया है। यह बालिका इतनी छोटी आयु में अंकगणित, त्रिकोणमिति और भौतिक शास्त्र में असधारण मानी गयी हैं। ऐसी अनेक घटनाएं हमारे राग में राग मिलाती है कि संसार वाले तेरे राग विचित्र और समझने के काबिल है हमारे अपने ही स्वामी विरजानन्द पांच साल की आयु में प्रज्ञाचक्षु हो गये। बिना किसी की देखभाल के वे कर्तारपुर (पंजाव) से हरिद्वार पहुंच गये। कहाँ कहाँ तपस्या की क्या क्या साधन जुटाये और जीवन में एक ऐसे विख्यात विद्वान् बन गये जिन्हें स्वामी दयानन्द जैसे शिष्य को भी गुरु बनना पड़ा। और जिनकी मृत्यु पर स्वामी दयानन्द ने इतना कह दिया था कि आज भारत से व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया है। अब यह सारी चन्द घटनायें क्या हमारे लक्ष्य

की पूर्ति में सहायता नहीं दे पा रही कि हमारे कर्मों के पलड़े और सुन्दरमय भगवान के सुन्दर बाट समझने और मानने के योग्य हैं। जिनकी डंडी का केवल वो स्वयं मालिक है। हम सोचें कि कितने दुर्गुण दूर हो जायें ताकि तन्नासुव का आशीर्वाद मिल पाये। ये संतुलन भी हर एक अपने अपने जीवन में अपने अनुभव और अपनी अपनी प्रतिभा से प्राप्त कर सकता है।

बात एक और जो समझ से बाहर कमाल की यह है, लेना देना कुछ भी नहीं, वस्तु कुछ भी नहीं, हाथ डालना कुछ भी नहीं, यह भावों की दुनियाँ, भाव देना भाव लेना, एक अपने प्रकार का नया बाजार है। शायद इसलिये ही तो हमारा विश्वास हमारी श्रद्धा नहीं बन रही है क्योंकि हम आंख वाले किसी वजन व किसी वस्तु की साक्षी कर नहीं सकते हैं। परन्तु हमारे जगत् संरक्षक के व्यापार क्षेत्र में "कुछ न" का सौदा "कुछ न" से होता है। सद्भावना दी जाती है, आनन्द लिया जाता है। चरित्र दिया जाता है, चित्र लिया जाता है, सूक्ष्मता पेश की जाती है, सूक्ष्मता मिल पाती है। यह तरतीब एक अपना संसार है। इसलिए विश्वानिदेव सविता के परासुव और तन्नासुव का लेखा जोखा हम भी कमाने वाले बनें ताकि हमारा व्यक्तित्व उभर सके। हम भी थोड़े से प्रयास से महान के आशीर्वाद का सत्पात्र बन सकें। परासुव और तन्नासुव का जोड़ जिस डंडी से है वो हम पर अनावृत अमृत वर्षा कर सकें। दोनों पलड़ों की डोरी सांझी बन सके ताकि इन दोनों पलड़ों को जोड़ने वाली परम सत्ता हमारे जीवन में एक दिव्यता का वरदान दे सके।

———

: १० :

दसवीं भेंट

वहुतों के पलड़े हमने देखने का साहस किया। यह भी उनका अपना अपना सौभाग्य होगा यदि दूसरों के पलड़े देखते देखते अपने-अपने पलड़े भी दृष्टि में गये हों, पर मुश्किल यह बनती जा रही है कि मध्य की डंडी जो एक दूसरे के पलड़ों को जोड़ती है वह नज़र से गायब होती जा रही है इसलिए हम एक दूसरे से कटे कटे से होते जा रहे हैं। रिश्ते बनाने वाला, सम्पर्क देने वाला लापता हो रहा है जिसके कारण पलड़े भी जुड़ नहीं रहे। सब भिन्न भिन्न। यद्यपि संसार एक प्राणीमात्र की लड़ी थी वह एक पिता के द्वार पर साझी कड़ी नहीं नजर आ रही जिसकी वजह से हर एक का जीवन व्यस्त अपने में त्रस्त बनता जा रहा है खरीदारी का भी आलम नहीं बन पा रहा क्योंकि तराज़ू का काम देखा नहीं जा रहा अच्छे कर्म का फल अच्छा, बुरे का बुरा हमारे विश्वास व श्रद्धा से बाहर का बनता जा रहा है जिससे हमारी आस्तिकता पर चोट लग रही है। डंडी एक जोड़ हैं सांझापन है बन्दे का बन्दे से, व्यक्ति का व्यक्ति से, कर्म का फल से, कारण कार्य से, प्रजापति का प्रजा से यही अविवेक हमारे बाट तोड़ रहा है। पूर्व इसके कि हम डंडी की परख करें, डंडी के भिन्न भिन्न रूप रूपान्तर देखें, हमें डंडो वाले का परिचय तो ले लेना चाहिए ताकि आधारशिला ठीक से जंच जाए।

तित्तरि ऋषि से किसी ने ब्रह्म का परिचय पूछा और ब्रह्मानन्द की मीमांसा करने को कहा, ऋषि बोले, ब्रह्म के ही भय से वायु चलती है ब्रह्म के ही भय से सूर्य उदय होता है, ब्रह्म के ही भय से अग्नि और विद्युत अपना अपना कार्य करती हैं और ब्रह्म के ही भय से मृत्यु दौड़ लगाती है। फिर अपना कथन जारी करते हुए कहा कि ब्रह्मानन्द की मीमांसा बड़ी कठिन है,तो भी सुनो। कोई मनुष्य युवा हो, श्रेष्ठ हो, फुर्तीला हो, सुदृढ़ हो, बलिष्ठ हो और उसे धन दौलत से भरी वह सारी भूमि मिल जाये ,तब उसे जो आनन्द होगा वह एक 'अमानुष आनन्द' है। ऐसी सौ अमानुष आनंद' मिलकर एक 'मनुष्यगंधर्वों' का आनंद होता है। ऐसे सौ मनुष्यगंधर्वों के आनन्द मिलकर एक 'देवगंधर्वों का आनन्द' होता है। ऐसे सौ देवगंधर्वों के आनन्द मिलकर एक 'पितरों का आनन्द' होता है। ऐसे "सौ पितरों के आनन्द" मिलकर एक 'अजानदेवों का आनन्द' होता है। ऐसे "सौ अजानदेवों" के आनन्द मिलकर एक 'कर्मदेवों का आनन्द' होता है। ऐसे सौ "कर्मदेवों के आनंद" मिलकर एक 'देवों का आनन्द' होता है। ऐसे सौ "देवों के आनन्द" मिलकर एक "इन्द्र का आनन्द" होता है ऐसे सौ "इन्द्र के आनन्द" मिलकर एक ' वृहस्पिति का आनन्द होता है। ऐसे सौ "वृहस्पिति के आनन्द मिलकर एक "प्रजापति का आनन्द" होता है। ऐसे सौ प्रजापति का आनन्द मिलकर एक "ब्रह्म का आनंद" होता है।

जो ब्रह्म पुरुष के अन्दर है और आदित्य के अन्दर है वह एक ही है। जो मनुष्य ब्रह्म और ब्रह्मानन्द का अनुभव कर इस संसार से विदा होता है वो अजयम आत्मा से प्राणमय आत्मा को, प्राणमय आत्मा से मनोमय आत्मा को, मनोमय आत्मा से विज्ञानमय आत्मा को, विज्ञानमय आत्मा से आनंदमय आत्मा को, पा लेता है। वस्तुतः वाणी से ब्रह्मानन्द का वर्णन नहीं हो सकता— वो मन की पहुंच से परे है। जो इसे उपलब्ध कर लेता है उसे किसी से भय नहीं रहता। ये हो गया प्रतीक हमारी इस विचारधारा का कि हमें किसे प्राप्त करना है उसका क्या फल है और उससे कितना आनन्द प्राप्त होता

है। अब मानव स्वयं सोच ले कि वो क्या करता फिरता है, क्या सोचता फिरता है, और उसके लिए क्या कुछ हो सकता है, दुर्गुणों से मुक्त हो जाने से सम्भवतः हमारे लिये अखंड लाभ वरदान नियुक्त हुए पड़े हैं। संत वासुवानि एक बार कहने लगे "मैंने अपने भगवान को अपनी कल्पना, मान्यता और रुचि के अनुरूप ढाला है साथ ही यह आशा भी की है कि वह मेरी इच्छानुसार चलेगा और सोचेगा और जब देखता हूं कि दूसरों के ईश्वर मेरी आत्मा और कल्पना से बहुत हद तक मिलते हैं उनकी आकृति ही नहीं प्रकृति भी मेरी कल्पना के भगवान से तालमेल नहीं खाती तब सोचता हूं क्या हर आदमी का अलग होना चाहिए भगवान ? क्या इतने अलग भगवान भी हो सकते हैं ? लगता है हर आदमी ने अपना भगवान अपने ढंग से गढ़ रखा है उसकी निज को आकांक्षाओं और मान्यताओं के ढांचे में उसे ढाला गया लगता है हर व्यक्ति अपनी ही अंहता को ईश्वर का आवरण पहना कर पूजने और रिझाने में लगा है। काश सबके भगवान एक होते और उस सार्वभौम एकता को ध्यान में रखते हुए एक ऐसा भगवान गढ़ा जाता जो व्यक्ति के इशारे पर चलने को तैयार न होकर अपने इशारे पर लोगों को चलाने के लिए विवश करता"।

ऐसा ही भगवान सब को मान्य हो सकता है। सब में व्याप्त होकर सबका हितकारी होकर सत्तारूढ़ हो सकता है। सबमें व्यापकता भी इसलिए कि सबके दुगुर्णो को दूर कर सके और सद्‌गुणों का उपहार दे सके। ईश्वर का सबसे निकटवर्ती स्थान हमारा अन्तःकरण है यदि हम उसे वहां देखें और ढूंढे तो बाहर भटकने की अपेक्षा उसे सरलता पूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। न केवल दर्शन वरन् उसके साथ वार्तालाप, परामर्श भी हो सकता है। इसके लिए अन्तःकरण से बढ़कर ईश्वर के साथ एकान्त मिलन का और कोई स्थान नहीं है। चाहे तो उसकी छाती से छाती लगाकर राम और भरत की तरह यहीं मिल सकते है और उत्कृष्ट की आत्मारूपी राधिका का पर-

मात्मा रूपी कृष्ण से संगम व समर्पण भी यहीं हो सकता है। विवेक की आँख खोलकर देखें तो उत्कृष्ट की प्रतिमा के रूप में वह महिमा शाली हमें यहीं हंसता और मुस्कराता मिलेगा। मानवीय आदर्शों को महिमामयी महत्ता से सम्पन्न उज्जवल और प्रशाशवान अपना आत्मा ही परमेश्वर है। मलिनताओं का आवरण उठाकर यदि उसके सत्‌चित् और आनन्द स्वरूप का सत्यं शिवं सुन्दरं के भवन प्रकाश का दर्शन करें तो प्रतीत होगा कि दूर समझा जाने वाला भगवान् वस्तुतः अपने अति निकट है। कषाय और कल्मषों से ढका रहने के कारण वह दीखता नहीं था। विश्वात्मा के रूप में उसकी आत्मा अपने ही भीतर ज्योतिमय हो रही थी। समस्त प्राणियों में ओत प्रोत व दिव्य सत्ता अपने भीतर भी विराजमान है। सबको अपनें में और अपने को सबमें देखने का दृष्टिकोण वैसे ही विकसित हुआ कि बदली हटते ही प्रकट होने वाले सूर्य की तरह भगवान सामने आ गया। व्यक्तिवादी संकर्णीता की बदली ही उस दिव्य दर्शन से हमें वंचित किए रहती है। हमने प्रारम्भ की यह भेंट थी डंडी के अनेक रूप देखने के लक्ष्य से। भगवान एक है हर एक व्यक्ति की डंडी अपनी कृपा और आर्शीवाद से संभालने में परम समर्थ है। मानव छोटी छोटी आकांक्षा से उत्कृष्ट पद से च्युत भी हो जाता है और उत्कृष्ट भी हो जाता है। धर्मशास्त्र पलड़ों के लेखे जोखे व्यक्तिगत व्यवहार के दृष्टान्त अधिक से अधिक देकर मानव के लिए ज्ञान का सूर्य उदय कर रहे हैं। समझाने की भी कोई हद होती तो हम चुप हो जाते परन्तु जितना देखते जाओ उतना विस्मयता के सागर में उत-रते जाओ, 'वाह वाह' करते जाओ और उत्सुकता से नया जन्म भो लेते जाओ।

एक बार देव सभा में विवाद उठ खड़ा हुआ कि ब्रह्मा विष्णु रूद्र इन देवताओं में बड़ा कौन है। तर्क वितर्क बहुत चले पर निष्कर्ष कुछ नहीं निकला। समस्या को सुलझा लेने के लिए भृगु पर बोझा डाला गया। उन्होंने परीक्षा की विधि निर्धारित की और क्रमशः

तीन देवताओं के निवास स्थान के लिए चल पड़े। पहले ब्रह्मा जी के यहां पहुंचे। वे सृष्टि रचना की समझ और वेद व्याख्यान में लग रहे थे। भृगु जी उन्हें बिना प्रणाम किए समीप ही आसन पर गन्दे पैरों से जा बैठे ब्रह्मा जी को क्रोध आया और अशिष्ठता के लिए भृगु को बहुत बुरा भला कहा। भृगु बेचारा उठ कर चुपचाप चल दिया। अब वे शंकर जी के पास पहुंचे वे पार्वती को कथा सुना रहे थे। भृगु जी ने वहाँ भी ऐसी अशिष्टता वर्ती। वह बिना पैर साफ किए पार्वती के आसन पर उससे सटकर बैठ गये। यह उद्धत आचरण शिवजी को बहुत बुरा लगा। आग बबूला हो त्रिशूल उठा कर उन्हें मारने दौड़े और भृगु जी को जान बचाकर भागना पड़ा। अब रह गये थे विष्णु जी जिनकी परीक्षा बाकी होनी थी। भृगुदेव जब वहां पहुंचे तो उन्हें शेष शैय्या पर सोते देखा तो जगाने के लिए उन्हें लात से हिलाया। विष्णुदेव हड़बड़ा कर उठ बैठे भृगु देव के चरण सहलाते हुए नम्रता पूर्वक बोले—गुरुदेव आपके कोमल चरणों को मेरे कठोर हृदय से टकराने में कष्ट तो नहीं हुआ, कहिए मुझ सेवक के लिए क्या आज्ञा है भृगुजी प्रसन्न हुए और बोले बड़प्पन की परीक्षा करने निकला था। सज्जन्नता और नम्रता से अशिष्टता और उद्धता को जीतने की महानता तलाश करते करते आपके यहाँ आया था। भृगु जी के निष्कर्ष से देवों में विष्णु को तीनों में से बड़ा घोषित किया गया। भगवद्—प्राप्ति कहें, मानव सन्तुलन कहें पलड़ों की जांच पड़ताल कहें, व्यवहार शास्त्र की परीक्षा कहें, भगवान को पाने के ढंग, भगवान बनने के रंग हैं तो यही हैं। स्वामी विवेकानन्द से एक बार एक जापानी ने पूछा था कि भारत में गीता रामायण वेद उपनिषद का इतना ऊँचा दर्शन है फिर भी वहां के लोग पराधीन और निर्धन क्यों है। इस पर स्वामी जी ने उत्तर दिया "बंदूक बहुत अच्छी होते हुए भी यदि कोई उसे चलाना न जाने तो उसे सैनिक श्रेय नहीं मिलता। इसी प्रकार भारत का दर्शन तो ऊँचा है पर भारतीय उसे अपने व्यवहार में नहीं ला पा रहे अतः उनके पद

घट रहें हैं। किसी के पलड़ें न जुड़ पा सकें, न पूरे तोल ले सकें, तो उसमें दोष न पलड़ों का है न बाटों का है परन्तु अपनी अन्तर्मयी जीवन का है, जिन्होंने जान लिया है उन्होंने विचित्र और विवेक शील मान भी मान लिया है। गांधीजी अतृप्त कामना के वारे में कहा करते थ "कभी कभी यह विचार आता है कि सब छोड़छाड़ कर एकान्त में जाकर अपना प्रयोग चला कर देखूं, तो अपनी शान्ति कल्याण साधने के लिए नहीं, किन्तु आत्मा/ निरिक्षण के लिए, आत्मा की आवाज को अधिक स्पष्ट सुनने के लिए, जगत् के ही कल्याण का प्रतिक्षण विचार हो और इस विचार की सहज सिद्धि प्राप्त हो सके तभी मेरा अहिंसा का प्रयोग सफल होगा। पूर्ण अहिंसक मनुष्य गुफा में बैठा हुआ भी जगत् को हिला सकता है।"

दूर कहां जायें महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन काल में मोक्ष सुख को दूर रख कर भारत निर्माण और भारत कल्याण का एक प्रतीक जीवन निभा कर दिखा दिया। भारतीय चरित्र को किस स्तर पर प्रकाशित किया, जन साधारण को वेदों के प्रति और सच्चे भगवान के लिए एक नया दिग्दर्शन करा दिया। जिस भगवान की व्याख्या तितैरीय ऋषि ने ऊपर बतायी ही है कि ब्रह्मानन्द का साक्षात् कैसे हो सकता है वे आनन्द कहां, क्यों, और कैसे मिल सकता है। पलड़ों के तोल-जोल में हम यह बाट बरत कर अपने जीवन के लिए एक लक्ष्य बना सकते हैं। प्राय: लोग तो बिना सोचे समझे यात्रामयी हुए हैं। ये न सोचते हुए कि हमारी यात्रा सत् शास्त्रों के अनुकूल भी है कि नहीं। जितना भारतीयों ने कृष्ण भगवान की मान हानि की है शायद ही कोई करेगा।

ये अकल के बन्दे अब भी रुकते नहीं यद्यपि जाग रूकता में ऐसे आदमियों की कमी जरुर हो रही है। महाभारत में सच्ची तीर्थ यात्रा का एक सही वर्णन पढ़ कर कितना रोमांच होता है अब यहभीं देखिए जहां भगवान स्वयं ही सर्व व्यापक है अनन्त प्रतिभावाले हैं वहां उनकी प्राप्ति के साधन भी अनन्त हैं व्यापक है ताकि प्रत्येक अपनी २

रूचि अनुसार उस महासत्य की प्राप्ति हेतु भिन २ साधनों के लक्ष बेध कर सके, किसी को सरलता, निर्भयता, परोपकार, नम्रता, सदभावना, सत्यव्रत, सुहा जाता है किसी को तपस्या, उच्चविचार, शुद्ध व्यवहार नेकनीयती व शुभआकांक्षा ही रुचिकर हो जाती है और अपने २ अभीष्टकी ओर चल दिया जाता है इस लिए साधना वाले देव के, साधनों वाले नाथ को, अपने रंग ढंग से, अपनाना ही मानवीय श्रेष्टता हैं। इन्द्रको स्थिर और विचर्षणि-जान लेना ही उसकी शरण में आजाना है विचर्षणि का केवल अर्थ' सब ज़गत को ठीक २ देखने वाला हैं। यथावत ज्ञान भी एक महान उपलब्धि है जिस के कारण अपने २ पलड़े भरे जाते हैं. मानव अपने पलड़े शुभ विचारों तथा भावों से भरले फिर वह उन के अनुकूल बाट डालने में देरी नहीं करता, अच्छा तोल सकने वाला, तोल में दक्ष भी एक, चुने गिने होते हैं, पदार्थ देखते जाते हैं बाट झट से चुनते जाते हैं. बाट डाला और माल दिया ऐसे ही भगवान एक दक्ष खिलाड़ी, मानवों के हितैषी, झट पट मोल लगाते जाते हैं। हम लोगों ने तो एक आडम्बर बना लिया है तीर्थयात्रा का महान आत्माओं की मूर्तियां खड़ी करके पूजा पाठ करने का, पर वास्तविकता यह है कि महाभारत समाप्त होने के उपरान्त धर्मराज युधिष्टर ने तीर्थ यात्रा करने का निश्चय किया। साथ में चारों भाई अर्जुन भीम नकुल सहदेव द्रोपदी भी थी। प्रस्थान चलने से पूर्व वह भगवान कृष्ण के पास भी गये और उनके साथ चलने का आग्रह किया।

कृष्ण को उस समय कुछ आवश्यक कार्य थे। अतः तीर्थ यात्रा में साथ न जा सके पर सुखद यात्राकी कामना करते हुए उन्होंने अपना कमण्डल अवश्य दे दिया और कहा जहाँ जहाँ तीर्थ स्थानों में, नदियों और सरोवरों में स्नान करने का आपको अवसर मिले वहां २ इस कमण्डल को भी उसमें डुबा लेना। युधिष्टर कमण्डल लेकर सपरिवार चल पड़े। काफी दिनों के बाद वापिस लौटे और कृष्ण को कमण्डल देते हुए कहा "आपकी आज्ञानुसार जहाँ मैंने स्नान किया वहां इसको भी पानी में डुबोया है।" "यहा तो में चाहता था"।

इतना कह कर कृष्ण ने कमण्डल को जमीन पर पटक कर टुकड़े २ कर दिया और प्रसाद रूप में एक एक टुकड़ा वहाँ उपस्थित सभी लोगों में वितरित कर दिया । जिसने भी वह प्रसाद चखा उसका मुंह खराब हो गया । लोगों को चूकते तथा मुहं बनाते देख कर कृष्ण ने धर्मराज से पूछा "जब यह इतने तीर्थों में घूमकर आ रहा है और अनेक स्थानों पर स्नान भी किया है फिर भी इसकी कड़वाहट दूर क्यों नही हुई" "आप भी कैसी अजीब बात करते है, कृष्ण, कहीं धोने मात्र से कमण्डल का कड़ुवा पन निकल सकता है" धर्मराज ने उत्तर दिया । यदि ऐसा है तो विभिन्न तीर्थों में जाने और अनेक नदियों में स्नान करने पर आपके पाप कैसे धुल सकते है"? मैं तो यही समझता हूं कि यदि हृदय से अपनी भूलों को स्वीकार किया जाय और पश्चाताप अनुभव कर भविष्य में भूल न हो सके इसके लिए सावधानी रखी जाय तभी हृदय शुद्ध होता है और पाप से मुक्ति मिलती है । सच्ची तीर्थ यात्रा तो यही है केवल शरीर को धोने से कार्य नही चलता, धोना तो मनको चाहिए । शुद्ध तो हृदय को करना है" अब धर्मराज के पास कहने के लिए कुछ भी शेष न रह गया था । भगवान के रंग निराले के निराले, हम फिर हुए अपने पुराने राग के हवाले । प्रयास, सतत प्रयत्न, और भगवान को भी विशेष रचनाओं की एक रचना यह है कि कहाँ के पलड़े कहाँ तुल जाते हैं । एक और दृष्टांत से देखिए । प्रशाकी (जापान) में ढाईसौ वर्ष पूर्व हवाना होकीची नामक एक बालक गरीब परिवार मे जन्मा उसको सात वर्ष की आयु में चेचक निकली और उसी में दोनों आखों से वह अन्धा हो गया । अब उसके लिए कुछ भी देख सकना सम्भव न था, इस दुर्भाग्य भरे जीवन में अन्धकार के अतिरिक्त कुछ भी न रह गया था । ऐसी स्थित में लोग पराश्रित होकर जीते हैं । दूसरों की सहायता पर ही उनकी जीवन यात्रा चलती है । पर होकीची हिम्मत न हारा एक एक इन्च की दो आंखें ही तो गयी थीं । इतने बड़े शरोर के अन्य कुलपुर्जे ज्यों के त्यों थे फिर वह क्यों यह माने कि

उसका सब कुछ चला गया था। ६३ इंच लम्बे शरीर में से २ इंच घट जाने पर ६१ इंच की काया तो यथावत् थी होकौची १०१ वर्ष जीया। सात वर्ष बचपन के छोड़ कर उसने ९४ शेष वर्ष उसने अनावृत रूप से ज्ञान की साधना की। किशोर अवस्था तक वह पढ़ता रहा। इसके बाद उसने पढ़ाने का धंधा अपना लिया। वह छात्रों को पढ़ाता और बदले में उनसे अपने काम की पुस्तकें पढ़वा कर अपने ज्ञान की वृद्धि करता। यह पढ़ने और पढ़ाने का काम उसने आजीवन जारी रखा और जापान ही नहीं समस्त संसार के अदभुत स्मरण शक्ति समपन्न विद्वानों की अग्रिम पंक्ति में अपना नाम लिखाया था। वह जो एक बार सुन लेता उसे कभी भूलता न था। उसके मस्तिष्क में संग्रहीत अति उपयोगी ज्ञान को एक राष्ट्रीय शिक्षा संस्था ने नोट कराया और उसके आधार पर एक विश्वज्ञान शेष प्रकाशित किया गया जो दो हजार आठसौ बीस खण्डों में छापा गया है। संसार के इतिहास में इससे बड़ी और इससे अधिक तथ्यपूर्ण पुस्तक अभीतक कोई भी नहीं छपी। वेद में कहा गया है कि जो लोग सम्पूर्ण प्राणियों के हित में संलग्न रहते हैं परमात्मा उनका भार स्वयं वहन करता है पर समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों का समुचित रीति से पालन न करने वाले ईश्वर भक्त आत्म-कल्याण में समर्थ नहीं होते। समाज भी तो मनुष्य का अपना स्वरूप है। अपने स्वार्थ की पूर्ति में तो उद्यत रहा जाय पर अपने ही समाज के प्रति परमार्थ का ध्यान न रखा जाय तो उस ईश्वरोपासना से आत्म सन्तोष होना सर्वथा असम्भव है। धरती स्थल पर ढूंढते जायें तो एक से एक बढ़ कर उदाहरण निष्काम सेवा सच्चा प्रेम और कर्त्तव्य पालन का मिलता जाता है सचमुच पलड़े भगवान के इतने हो विचित्र जैसे वह स्वयं विचित्र है। एक बार अमरीका के एक प्रान्त में भीषण अकाल पड़ा। वहाँ किसी नगर में एक गृह दम्पति रहते थे। उनके सामने भी गुजारा न हो सकने की समस्या थी पर उनकी एक छोटी लड़की थी जो अपने माता पिता को इस दुःखावस्था को नहीं देख सकती थी

वह अल्प आयु में ही मेहनत मजदूरी करके जैसे तैसे माता पिता का पेट भरती और जो कुछ बच जाता उससे अपने पेट की अग्नि शान्त करती। आखिर यह कब तक चलता उस लड़की का स्वास्थ्य भी खराब रहने लगा मेहनत के कार्य में वह अपने आप को असमर्थ पाने लगी पौष्टिक भोजन की कौन कहे दो समय का रूखा सूखा अन्न जुटाना भी कठिन हो गया। उस बालिका को किसी ने बताया कि समाचार पत्र में एक दंत चिकित्सक का विज्ञापन निकला है वह अच्छे से अच्छे दांत खरीद कर तीन डालर तक प्रति दांत की कीमत दे देता है वे दांत स्वयं ही उखेड़ कर अपने पास रख लेता है। वह कर्त्तव्यनिष्ट बालिका सूचना मिलते ही पता लगाते हुए उस दंत चिकित्सक की दुकान पर पहुँची। और अपने आगे के दांत उखाड़ने के लिए आग्रह करने लगी। चिकित्सक ने उस बालिका को उस पीड़ा का भान करांया जो दांत उखाड़ने पर होती है तथा जीवन भर की परेशानी अपने गले वंध जाती है पर उस वालिका ने अपने माता पिता की सारी स्थिति बतादी जिस पर चाकित्सक उसकी बात सुन कर पानी पानी हो गया और विना दांत उखाड़े दस डालर देते हुए कहा "भला जिस माता पिता को ऐसी कर्मनिष्ठ और कर्त्तव्य परायण सन्तान प्राप्त हो वो कितने भाग्यशाली होंगे।"

सत्पुरुषों का निज धर्म होता है ओर उसका पालन ही उनके जीवन की चेतना हुआ करतो है परमात्मा का जिन्हें सौभाग्य मिल जाय उनमें प्रकाश उनके जीवन का एक राज हुआ करता है। चादंनी रात में प्रत्येक जलयान रात के बजाय दिन में ज्यादा वजनदार होता है। क्यों कि चन्द्रमा की आर्कषण शक्ति जलके बजाय जहाज पर अधिक पड़ती है यही कारण है कि पानी के जहाज दिन की बजाय रात में धीमे चलते है उनका वजन बढ़ जाने से खोचंने वाले यन्त्र उसी अनुपम से उसे कम धकेल पाते हैं। प्रकाश मनुष्य के व्यक्तित्व का वजन बढ़ाता है पर अंन्धकार में भटकने वाले की तौल घट जाती है। प्रकृति भी अनन्त, उसके नाम भी अनन्त, उसके दाम भी अनन्त और

उसके पाठ भी अनन्त, केवल मानव के तोल करने, मोल करने, दाम चुकाने की बात, पलड़ों से पलड़ों की जोड़ मोड़ के राज समझने की बात है। हमारे विचार में छोटी से छोटी चीज कितना लाभ कर जाती है ये देखते नहीं थकना होता। घोडा बैल हाथी आदि सशक्त पशु घास से ही आवश्यक शक्ति प्राप्त करते हैं दो सौ ग्राम घास में इतनी शक्ति होती है कि एक मनुष्य डेढ़ घंटा सफर कर सके आधा घंटा लकड़ी चीर सके, तीन घंटे झाड़ू लगा सके। अनाज जिसे हम खाकर जीते है घास के बीज ही तो होते हैं। ७०० बीघे का एक हरी घास का मैदान सूर्य से इतनी शक्ति खींचता रहता है जितनी एक परमाणु बम में अर्थात २०,००० टन टी-एन-टी के बराबर। तीव्र वर्षा की जलधारा नदियों में द्रुतगति से पहूंचने पर स्वभावत भयंकर बाढ़ को आंशका रहती हैं। उस संकट का निवारण घास ही करती है। वह वर्षा के जल को अपने में सोखती उलझाती रहती इससे एक तो प्रवाह रुकता है, दूसरे घास से ठहरे रुके हुए पानी को जमीन धीरे २ अपने में समाती रहती है और उस में देर तक नमी काएम रह जाती है, वर्षा उचित बाढ़ को रोकने के लिए घास की क्षमता बड़े वड़े बांधों से भी वढ़ कर है, पृथ्वी का पांचवां हिस्सा घास से ढका रहता है। पैरों तले रोंदी, जानवरों द्वारा खाए जाने वाली घास वस्तुतः समस्त प्राणधारियों के लिए जीवन भूरि है हिमाच्छादित्त और पहुंच से वाहर उच्य गिरी श्रेणी को कोतुहल और प्रशंसा के साथ देखा जा सकता है और घास की अवज्ञा उपेक्षा होती रहती है।

इस से क्या विवेकशील दूरदर्शिता सदा नगणय समझी जाने वाली घास की जीवन दात्री रीति नीति के प्रति नत मस्तक ही बने रहेगी। यह तो अब विज्ञान कह चुका है कि प्रातः की ओस भरी घास पर नंगे पांव चलने से मस्तिष्क तथा आंखों को नया, प्रोज देता है, घास यद्यपि पांव तले रोंदी जाती है पर जन कल्याण की कितनी सेवा निभादेती है। यह भेंट आरम्भ की थी प्रभु की सहायता से उस के महानन्द से और समाप्त कर रहा हूं इस उदाहरण मात्र से कि

महान के महान काम, महान के महान उपकार, महान के महान वैभव जो केवल अपने हाथों में एक ही प्रतीक लिए खड़े हैं कि सरलता सेवा शुभ लक्ष शुद्धि तथा निर्मलता ही अनावरत अमृतवर्षा है काश कि मानव प्राप्त करने वाला बने। उसकी अनुकम्पा सर्वव्यापी व सुख वर्धक है पर जो कुटल है प्रपंच और क्षुद्र है उसकी भी मानसिक अवस्था दीनता हीनता से भरपूर है। कहते हैं देवता वरदान बांटने धरती पर आए तब झुण्ड के झुण्ड अपनी मनोकामनाएं प्राप्त करने को जमा हो गए किसी ने यश, किसी ने धन किसी ने कुछ मांगा और प्राप्त किया एक व्यक्ति हाथ जोड़े एक कोने में खड़ा था देवता ने उसे प्रेम से पूछा कि उसे जो चाहिए वह भी लेले, उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, मेरी याचना साधारण सी है जिन लोगों ने धन मांगा हैं उनके पत्ते नाम मुझे दे दीजिए ताकि अपनी मनोकामना पूरीकर सकूं" देवता ने ऐसा सुन आश्चर्य से पूछा आखिर वह है कौन उस व्यक्ति ने कहा 'चोर' जो अनावश्यक धन संग्रह को विकेन्द्रित कर देता है। ऐसे मानव भी वास्तविकता में हमारे मध्य हैं जो बदनियत न स्वयं खाते है न दूसरों को खाने देते हैं

——

: ११ :

ग्यारहवीं भेंट

सामर्थ्य अनुसार पलड़े ही तोल दिये। पलड़ों के गाँठने वाली लकड़ी महिमामयी सत्ता की भी थोड़ी रूप रेखा पेश कर दी है इसका सन्तुलन कर सकने वाली महान शक्ति का एक अत्यन्त व्यापक बाट 'यद् भद्रं' की प्रस्तावना भी कह डाली है। बात तो और रह नहीं गयी सिर्फ यह कि जब पलड़े भी उसके हवाले, सन्तुलन का माप भी उसके हाथ, फिर तुलने वाले का बचा क्या बस यही एक परिणाम और विश्राम बाकी है जो शेष हमारे पल्ले पड़ता है। अर्थात् शून्य में से शून्य गया रह गया शून्य, उसके ही बाट, उसके ही बन्दे, जब तोल में आ जायें तो कमी बेशी का भी स्वामी वो, इस अवस्था का नाम पड़ जाता है आत्मसमर्पण। वे सन्त लोग उसके हो जाते हैं यद्यपि वे भगवान से बात मनवाने का गर्व ले सकते हैं परन्तु उसका निर्णय वह स्वीकार करते हैं और उसी में अपनी समर्थता सह प्राप्ति और सहगति का मान लेते हैं। ऐसी अवस्था में बड़ा शान्त स्वभाव मिला करता है उसके यहां रिग्रैटस, शोक का स्थान नहीं होता। जापान में एक विद्वान फकीर थे उसने बुद्ध के ग्रन्थों का अनुवाद शुरु किया, उसे छपवाने के लिए दस हजार रुपये जमा कर दिये, इन्हीं दिनों वहां अकाल पड़ गया, उस फकीर ने एकत्रित हुई राशी अकालपीड़ितों के लिए दे दी। फिर दोबारा अपने ग्रन्थों को छपवाते

की रकम एकत्रित करने लग गया। फिर भी उसके पास १०००० जमा हो गये। अब के वहाँ बाढ़ आ गई फिर वो सारी की सारी रकम उसने रिलीफ Relief फंड में दे दी फिर तीसरी बार ग्रन्थों के छपवाने के लिए राशि एकत्रित की और उन ग्रन्थों को तृतीय प्रकाशन के नाम से छपवा डाला ऐसे लोग जो हो वो होअच्छा है की मान्यता लेते हैं। जो भद्र होगा वह हमें वह देगा। ऐसी भावना वाले हम भी हो जायें अर्थात् जो प्राप्त होगा वही भद्र होगा। यह उसके हाथ के भद्र की एक स्मारिका हो गयी, ऐसा मान के निज जीवन यापन किया जाता है। वेद में एक मन्त्र आता है।

इन्द्रश्च मृडयाति नो, न नः पश्चात् अघं नशत्।
भद्रं भवाति नः पुरः॥ ऋ० २४.१.११॥

अर्थात् परमेश्वर निश्चय से हमें सुख ही देते हैं हमारे पीछे पाप न लगे तो हमारे सामने भद्र कल्याण ही रहे और होता रहे। इस पर भी हमारे सामने दुःख आते हैं इसका कारण है कि हमनें अपने पीछे पाप को लगा रखा है जिसका परिणाम दुःख अटल है। यदि पाप हमारे पीछे न लगा हो तो हमें सदा भद्र ही भद्र के दर्शन हों। जब हम कोई पाप कर बैठते हैं तो समझते हैं वह वहीं खतम हो गया। वस्तुतः वो हमारा पीछा कर रहा होता है और अपने समय पर वो हमारी हाज़िरी में पेश हो जाता है। हम इस बात की प्रतिज्ञा करें कि आज से आगे के लिए पाप करना सर्वथा त्याग दें यही संकल्प अपना तोल लेगा और इसके मोल में इन्द्र भगवान की दया से हमारा पाप भविष्य में भी छूट जायेगा, पीछे के पाप से मुक्त हो जाने का साधन भी मिल सकेगा। परन्तु यह अनुभव लेना है अपने विचार और सदभावना से, "जो हमें मिलेगा वो भद्र होगा" ऐसे दो प्रकार के भद्र भरत मिलाप का रूप लेते हैं। महात्मा गांधी एक शहर से दूसरे शहर को जा रहे थे। जब वे स्टेशन पर पहुचे तो गाड़ी को छुटा हुआ पाया। शान्त होकर वहां प्लेट फार्म पर बैठे रहे ताकि

दूसरी गाड़ी प्राप्त हो सके। क्षुब्ध मन नहीं हुए शोक नहीं मनाया। पहली गाड़ी के छूट जाने और दूसरी गाड़ी की प्रतीक्षा के मध्य अनेक विचारों की लहर में नहीं कूद पड़े "जो हो गया ठीक है" बड़ा आशीर्वाद बन जाता है। इतने में किसी ने आकर सूचना दी कि जो गाड़ी पहले जा चुकी थी उसकी रास्ते में टक्कर हो गयी है। आखिर किसी ने कह दिया—महाराज जो करता है अच्छा करता है। महात्मा जी ने भी हाँ में हाँ मिला दी। उसके बन्दे जो ठहरे फिर बात को दोहराने का प्रश्न ही नहीं बनता। इस सन्तुलन के व्यक्ति कितने उदार हृदय नेक सीरत अत्यन्त संतुष्ट और प्रतिभावान होते हैं इस मंत्र के इस रूप में कि 'यद् भद्रं' में अपने आप को लुटा देने का वातावरण बन जाये इसलिए मुझे यह बहुत प्रिय है। महर्षि दयानन्द का भी यही स्वभाव था विष के कारण शरीर में जख्म भड़क रहे थे। अपना हाथ में लिया हुआ काम अधूरा दीख रहा था। भारतीय जन साधारण की अवस्था दृष्टि में थी परन्तु कभी यह नहीं कहते सुने गए कि भगवान कुछ नहीं, और जीने देता तो तेरा ही कार्य तेरे ही लिए सम्पूर्ण करने में सफलता लेता। परन्तु उस महान आत्मा ने "प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो" का स्वर अलाप कर संघर्षमय जीवन को विराम दिया। भगवान के चरणों में संतोष लिया और प्रस्थान का स्वागत किया। भगवान कृष्ण के पाठ भी इसी सार में खत्म होते हैं, कि मानव कर्म ही करे और फल की इच्छा न रखे। महान आत्माओं की इस रुचि से एक बड़ा आशीर्वाद यह मिलता है कि तनाव बनता हो नहीं 'जो है' उसके चरणों में श्रद्धा के फूल बन जाते हैं। ऐसे महात्मा लोग उस महान के संसार, महान पवित्रता के महान आशीर्वाद, हुआ करते हैं। कहते हैं एक बार एक वीरांगना गुण्डों को शराब पिलाती थी और कहती थो कि बुद्ध की निंदा करो। वीरांगना की प्रेरणा से उन लोगों ने सप्ताह भर बुद्ध का पीछा किया। नगर नगर गांव गांव फिरे उन्होंने भद्दी से भद्दी गालियां बुद्ध को दीं, उस पर कीचड़ उछाला, बुद्ध के शिष्य आनन्द इस मारपीट और गाली-

गलोंच से बड़े संत्रस्त हुए उन्होंने बुद्ध से वह प्रदेश छोड़कर अन्यत्र भाग जाने का अनुरोध भी किया पर बुद्ध ने आनन्द को सस्नेह कहा "वत्स भय तो मन का विकार है, मन से भागकर तन कहां जायेगा। मन के घट को गोद मांगल्य से इतना भर लो कि कोई विकार उसमें शेष ही न रहे। किसी की निंदा और गाली गलोंच का इस पर असर ही न हो।" भगवद् भजन में लीन मन इतना बेपरवाह हो जाया करता है कि जिसकी कोई परवाह ही नहीं, बेपरवाह भी एक पदवी है जो कई बार हम भगवान को अर्पण करने में देर नहीं लगाते। ऐसे सन्तों का भगवान में मन ऐसे लग जाता है जैसे तपा हुआ कुन्दन। उनका वातावरण ही स्वच्छ शुद्ध और पवित्र हुआ करता है यद् भद्रं में उनका विश्वास इतना जम जाता है कि दूसरी ओर उनकी नजर जाती ही नहीं। यह सही धर्म है। आत्मा की चेतना ही धर्म है। यह आत्मिक चेतना सबमें चलती है। इसलिए हमको सारे काम उसको समर्पित कर देने में जो आनन्द मिलेगा वह लाजवाब होगा। खास तौर पर इस युग की नामुराद बीमारी timin से तो मुक्ति होगी। तनाव रहित अवस्था एक वरदान होगा। वह अवस्था बड़ी सुरक्षित होगी, वह सुख स्थायी होगा, निखरा, सुधरा, सफल सारगर्भित भी होगा ऐसी प्राप्ति भद्र स्वरूप के दर से आई हुई होगी जिसमें किसी की अशुभ अभिलाषा न होगी वहां संतोष होगा और यही एक बड़ा फल होगा। इस हमारे लक्षित मंत्र को समझ लेनें में बड़ा सौभाग्य बनेगा। काश हम इस प्रकार अपना मन पवित्र करते फिरें, उसकी भक्ति में, उसके दर्शन में, उसमें ही लीन हो जाने में। मेरा अपना अनुभव यही है कि यद् भद्रं जब हमारा सर्वेसर्वा हो जाता है हम यात्रा में, निज काज कार्य, में शुभ साधनों, शुभ लगन, शुभ विचारों की माला परो लेते हैं जो हमारा सुन्दर जेवर हो जाता है। स्व. कृष्णानन्द ने एक बार कहा था "जो कुछ काम करें उसे प्रभु को जानकर करें" यदि प्रभु की प्रार्थना में थोड़ा समय लगाने में हमें संतोष मिलता है तब यह विचारणीय है कि

अधिक समय उसक के चिन्तन का क्या लाभ बनेगा यदि प्रभु चरणों में थोड़े पुष्प हमारे भले लगते हैं तो सारे उद्यान फूलों की डालियाँ, उसकी रचना, दृष्टि गोचर हो जाए तो वह कितनी रसदायी होगी भविष्य के लम्बे चौड़े लक्ष, दूर की दौड़, फैलाव की चिन्ता हमारी अपनी चिता बना डालती है 'यह सब कुछ उसका है, सब कुछ को उसके नाते मान लेना एक हितकारी आनन्द व विश्वास का वातावरण बना देगा, यह एक विचित्र सौदा है कि उसकी रक्षा हम सब मांगते हैं पर उसकी रक्षा, उसके नियमों का पालन कोई नहीं करना चाहता यदि उसे सुरक्षित आने दिया जाए तो वह भी निर्विघ्नता पूर्वक पुण्य दान दे सकेगा। अनुकूलता संसार का एक अटूट नियम है यह तो मुहावरा हो है कि एक जाति के पक्षी एक साथ उड़ते हैं। वृद्ध वृद्धों के संग, नवयुवक युवा संग, नारी नारियों सहित, बालक बालकों में, हर्ष मूडी हर्षित रहने वालों में, निराश निराशों में, चलते फिरते नजर आते हैं। यदि हमें हंसमुख, प्राणमयी चिन्ता रहित जीवन बिताने वाले हो तो हमें भी उसका हर समय यही अनुदान प्राप्त होगा, हमारे पवित्रहोने पर वहपरमपवित्र, दयालु स्वभावहोने पर वह परम दयालु, परोपकारी होने पर वह परम उपकारी, सत्यवक्ता सदाचारी होने पर उस परम सत्य की समीपता प्राप्त होती है और इस प्रकार अनुकूलता का युग बन जाता है। भगवान का यह भी निराला ढंग है कि बदनियत को बदनियत साफ़गो को साफगो धोखेबाज को दोखेबाज ही मिल जाता है। एक बार एक यात्री रेल द्वारा सफर कर रहा था उसके पास एक खोटी अठन्नी थो जो वह चला लेना चाहता था उसे सोच यह आई कि चलती ट्रेन में वह शीघ्रता से आठ आने वाली पत्रिका माँगने लगा इधर अखबार बेचने वाला भी एक पुरानी आठ आना दाम की पत्रिका लिए फिरता था वह भी उस ताक में था कि चलती चलती ट्रेन में वह किसी को वह पुरानी पुस्तिका टिका दे, सो अनुकूलता के पलड़े मिल गए खरीदार ने खोटी अठन्नी से जान छुड़ाकर प्रसन्नता मानी औरपत्रिका विक्रेता ने पुरानी पुस्तिका से पीछा

छुड़ाया पर खलासी लेने पर दोनों अपने अपने स्थान पर शरमिन्दा हुए कि खोटे काम खोटे दाम लेते हैं। ऐसा है यह संसार अनुकूलता के पलड़े, एक स्वभाव के पलडे एक विचार के पलडे जुड़ा करत हैं बात वही पुरानी कि पलड़े, तुले जा रहे हैं और भगवान के बाट बने जा रहे हैं, यह व्यापक खेल देखने व समझने का है, भेंट का मुख्य विषय था 'यद् भद्रं'' के फल। यद् भद्रं का संक्षिप्त यह रूप जान पहचान वाले का हमारे लिए शुभ ही शुभ स्वभाव है, सत्य हो है।'' हमें तो अपने ऐन समीप का आगा व पीछा ही ज्ञात नहीं होता इसीलिए कोई चिन्ता रहित बात निर्णय बन सकती नहीं। आगे तो भला हम चन्द कदम देख भी लें पीठ के पीछे का तो कुछ सोच में आ ही नहीं पाता है और न ही दीख में आसकता है। इसी तरह परोक्ष की सत्ता का अपना रूप लेना, हमारे पहचानने के बाहर होना एक वास्तविकता है जिसे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त देवों का देव हमारे कर्म और उनके पलड़े के विषय में पूरी परख, योग्यता, सामर्थ्यता तथा परिणामस्वरूप अपने न्यायालय के न्यायधीश ही निर्णय देने की सत्ता रखने के कारण हमारे लिए यद् भद्रं का पार्ट अदा कर सकते हैं। विचार पूर्वक देखा जाय तो यद भद्रं का क्षेत्र, विषय इतना महान है जितना वह स्वयं, इतना व्यापक है जितना वह स्वयं; और इतना वास्तविक जितना वह स्वयं। एक अर्थ में यद्भद्रं विधाता का विधान भी है क्योंकि उन्हें शासन चलाना है। उन्हें ही ज्ञात है कि अमुक व्यक्ति को उसके किस कर्म, किस विचार, किस संस्कार का क्या फल दिया जाना है, जिनके अनुसार अमुक का किसमें कल्याण होगा ताकि उसकी निश्पापना भी हो जाये, कृत कर्म का फल भी हो जाये, उसका शासन भी बन जाये, और संसार चक्र की परिभाषा भी बन जाये। इसीलिए उससे जो आता है उस अपने भाग्य को, कि इसमें ही मेरा भला है स्वीकार कर लेने में शान्ति और निश्चिन्तता मिलती है। इसके अतिरिक्त यह भी सत्य है। कि यद् भद्रं के प्रताप से आत्माएँ जब अपनी हृदय रूपी स्लेट लेकर आती हैं तो

वह संस्कारों का निरीक्षक परम पिता हमारे यद् भद्रं का लेख स्वयं ही लिखता चला जाता है, भाग्य बनाता चला जाता है, राह देता चला जाता है, और देखते ही देखते, जो केवल बालक ही हो जिसे पूर्व विशेष शिक्षा व दिशा नहीं मिल पायी थी, उसकी प्रगति महानता की तरफ ऐसे बढ़ती चली जाति है जैसे पिता पुत्र का हाथ पकड़ कर कहीं ले जा रहा हो। क्या यह हमारे सामने देखी सुनी बात नहीं कि किसी महान सत्ता ने ही महान पुरुषों को महान बन जाने का अनुदान दिया। इस पर सुन्दरता यह कि परोक्ष में हमारे परम सखा, परम कृपा-निधान, परम दयालु, परम हितकारी सफलता देते गये, यश मिलता गया, सार्थकता बनती गयी, और वे स्वच्छ शुद्ध, पवित्र संस्कारों वाले बालक महापुरुष बनते गये। कोई विद्वान बन गया, कोई सन्त बन गया और कोई नेता बन गया। यद् भद्रं की डोरी उसकी बहुत लम्बी, बहुत सूक्ष्म, और बहुत विधिवत् है। अपने देश में अनेकों युग-पुरुष हमने देखे, क्रान्तिकारी देखे, जो अपने अपने जीवन में फूल उगा गये, सुगन्ध फैला गये, और जो उनके सम्पर्क में आया उसे भी सौभाग्य दे गये। क्या भगतसिंह को मालूम था कि उसका देश में आना होगा। अमली जीवन की एक दिशा लेनी होगी। सारी विद्या, और सारी चाल ढाल एक ऐसी निश्चित दिशा में चल पायगी जिसका अन्तिम रूप "भगतसिंह जिन्दाबाद" जा बनेगा।

सुभाष बाबू को क्या मालूम था कि किसी मित्र के घर से विवेकानन्द आदि की पुस्तकें उधार लेकर पढ़ कर वह अपने जीवन में एक क्रान्ति ला सकेगा। क्रान्ति भी ऐसी जिसने देश देशान्तर के सत्तावादियों को हिला दिया। और सात समुद्र पार बिटिश सरकार की आधार-शिला को भी डांवाडोल कर डाला। किचन में बैठी हुई मां जिसके पास से बिच्छू गुजर गया उसका बालक मोहनदास कर्मचन्द्र देख रहा था माँ हिली नहीं, भयभीत नहीं हुई यह कह कर कि बिना छेड़ छाड़ के बिच्छू मेरे प्रति हिंसा नहीं करेगा, बिच्छू को उठाके बाहर कर दिया और इस साक्षात उदाहरण से निज बालक के लिए

संसार भर की नीति को एक नया चाँद लगाने का सुन्दर यश दे दिया कि अहिंसा भी एक अस्त्र है एक शस्त्र है जिसके सन्मुख तोपें और बम्ब झुक सकते हैं। मूलशंकर को क्या मालूम था कि उसका घर से निकल जाना उसे कहां-कहाँ ले जायेगा। अनिश्चित मार्ग में वह किस तरह निश्चित धारा में बहता जायेगा। बिना साधन और बिना सहायता के अपनी विद्वत्ता, तपस्या और प्रभु प्रसाद से एक पतित देश का पांसा पलट कर रख देगा। विदेश में भी विशेष तौर पर अमेरिका में जितने presidents बने, कोई बढ़ई का पुत्र था कोई लुहार का था, कोई मोची का, हाल का प्रेजीडेन्ट मुंगफली के खेत के मालिक का पुत्र है। परन्तु इन सबों में एक आत्म संकल्प बना, वह उठ खड़ा हुआ जिसकी ऊर्जा से प्रत्येक चलता ही चलता, अध्यक्षता के आसन पर विराजमान हो गया। इन सबके जीवन में विधाता का यद् भद्रं का जादू बनता गया। जिन्हें हम संयोग नाम देते हैं वे घटनाएं संयुक्त होती गयीं, अपने अनुकूल बनती गईं, भद्र की हवाएँ लेती गयीं। अपने रुचिकर जल से पोषण लेती गयीं और अन्ततः एक महानता की कसौटी पर व्यक्तित्व उभरता चला गया फिर विचित्रता यह किसी महान पुरुष ने यह नहीं माना कि वह महान अपने से ही बने। मनुष्य में जो कुछ भी महान है वह उसके सतत प्रयास का परिणाम है और सभ्यता भी उसकी ही उपज है। जॉन रस्किन इतना तक कह पाये हैं "मेरा विश्वास है कि महान पुरुष में सबसे बड़ी कसौटी उससे पायी जाने वाली नम्रता है महान पुरुषों में यह अजीब सा एहसास है कि महानता उनमें नहीं उनके द्वारा है और वे प्रत्येक मनुष्य में कोई ईश्वरीय तत्व देखते हैं और अन्त तक दयालु बने रहते हैं।" बिलियम रोजोवेल्ट ने यह कहा है "किसी भी महान पुरुष ने अपने आप को कभी भी महान नहीं समझा।" डाकर जानसन ने कहा है "सच्ची महानता छोटी बातों से महान बनने में है।"

यह सब उदाहरण उसी राग के अलाप हैं कि यद् भद्रं का अनुदान ऐसी रूपरेखा लेता जाता है कि जिसे हाथ लगता है वह भद्र

का संदेश लिए होता है वहाँ तो केवल दिलोदिमाग से भद्र होने का संकल्प लिया नहीं और उनके अन्दर भद्र की बाढ़ चली नहीं। जिसे हम नहीं देख सकते उसे वह देख सकता है। जिसे हम नहीं समझ सकते उसे वह समझ सकता है। और हमें प्रभुवर निज प्रकृति की ओर ले चलने वाला भद्र का आशीर्वाद दिये चलता है। इसलिए "यद भद्रं की मंगल ध्वनि, यद भद्रं का निर्णय, "यद् भद्र" में समा जाना, हमारे लिए सौभाग्य भी है, मार्ग भी है, आशा भी है।" स्वामी रामतीर्थ ने कहा है "बाल्यावस्था और यौवन प्राप्त किये बिना कोई वृद्ध हो नहीं सकता। ठीक इसी प्रकार कोई व्यक्ति कर्त्तव्य निष्ठ, समाज निष्ठ, बिना ईश्वर निष्ठ हुए नहीं हो सकता। मन बहलाव भक्ति वाली बात दूसरी है। पर यदि हम वस्तुतः ईश्वर तत्व तक पहुंचना चाहें तो पवित्र जीवन और सेवाधर्म की टांगों की सहायता से उस महान यात्रा को पूरा किया जा सकता है यह सत्‌निष्ठा भी उसी का प्रसाद है। मनुष्य को सोचने और करनेकी स्वतत्रंता प्राप्त है। उसका उपयोग वह स्वयं कर सकता है वह चाहे तो अपनी मान्यता और दिशा को बदल भी ले सकता है। जिस तरह बन्धनों को अपनी इर्द गिर्द लपेटा था उसी प्रकार उनसे मुक्त भी हो सकता है। रेशम का कीड़ा अपना खोल आप बुनता है और उसमें बंध जाता है। मकड़ी को बन्धन में बांधने वाला जाला उसका अपना ही तना हुआ होता है। इन्द्रिय लिप्साओं में हम अपने आप को बाँध लेते हैं परन्तु ज्योंही दिशा पलटने का संकल्प बना लिया जाए महा संकल्प हमें प्रगति की ओर धकेल देता है। समस्त विभूतियों से सम्पन्न मानव जीवन का अनुदान धैर्य साहस का उपहार देकर भगवान ने अपने अनुग्रह का अन्त कर दिया अब मनुष्य की बारी है कि वह सिद्ध कर दिखाये कि उसके यद भद्रं में हमारी भी अनुकूलता और अनुभूति की रुचि है। यद भद्रं में प्राण लेने वाले यद् भद्रं का श्वास पर श्वास लेते हैं सारे कार्यक्रम में यूं ही बहते चले जाते हैं जैसा उनके द्वारा कुछ हो ही नहीं रहा

सरल और तरल जीवन सहजता व नियम पालन उसका उनका स्वाभाविक गुण हो जाता है। ऐसी अवस्था जैसे कोई मशीन अपनी निश्चित चाल पर बद्ध होती है उसकी तरह वह जिन गुण कर्म स्व-भाव में यद भद्रं में सार्थकता सत्क्रियता तथा शोभायमान जीवन का तारतम्य अनुभव करते हैं।

यद भद्रं की कहानी बड़ी लम्बी, प्रत्येक मानव का यद् भद्रं अपना अपना, भिन्न भिन्न, विचित्र ही विचित्र होता है विशेषतया इसलिए भी क्योंकि प्रत्येक की प्रकृति अपनी, रंग ढंग अपना। जो एक के लिए भद्र है शायद वैसा का वैसा वह दूसरे के लिए ऐसा न हो। इस लिए भी परम हितकारी महान विशाल शासक का प्रत्येक का अनुरूप यद भद्रं का प्रसाद जहाँ उस महान सत्ता का प्रमाण बनता है वहाँ हर एक के अपने अपने भाग्य का विधान भी बनता है। तीखी दृष्टि, उस डंडी को सम्भालने वाले पलड़ों पर नजर कायम बांटों पर पूरा पूरा ध्यान, इस पर भी हर एक के लिए यद भद्रं का प्रसाद एक बड़ी महिमा शाली रचना का प्रतीक बनता है। प्रश्न पैदा होता है कि यद भद्रं की कोई सूची भी है, लिस्ट भी है, क्या वह फहरिस्त वह ही तैयार करता जाता है या कि मानव के व्यवहार, मानव की सत्पात्रता, मानव का अधिकार, यद भद्रं का उपहार बनाते चले जाते हैं। बात और अवस्था बड़ी गम्भीर व सारगर्भित है परम न्याय-कारी प्रत्येक की आवश्यकता के अनुसार यद भद्रं का वरदान देते चले जाते हैं। मानव श्रद्धा पूर्वक लेने में विश्वास रखे, उसके संतुलन, उसकी सार्थकता, उसकी अचूक विधि विधान में निश्चय रखे, तो अन्ततः उसे शोक नहीं करना होगा, उस परम परोपकारी के हित साधन उसके लिए वरदान होगा। यह अनुभव करने का विषय है, जान पहचान का मज़मून है। यद भद्र के विशाल सागर में से अपनी अपनी रुचि का पुरस्कार अपनी अपनी वैयक्तिक उपलब्धि होगी। इस सत्य के इतिहास में अनेक उदाहरण मिलते हैं। स्वामी रामतीर्थ को विद्यार्थी जीवन में अनेक कठिनाइयां उठानी पड़ीं। कभी कभी

तो स्थिति इतनी विकट आ जाती थी कि दीपक के तेल के खर्च की पूर्ति के लिए, भोजन में कटौती करनी पड़ती थी। फिर भी अध्ययन के प्रति उनकी रुचि बढ़ती ही गयी।

लाहौर विश्वविद्यालय के आचार्य ने स्वामी रामतीर्थ के बुद्धि कौशल से प्रभावित होकर सिविल सर्विस की परीक्षा हेतु उनका नाम भेजने का निर्णय कर ही लिया था। जब उन्हें इस निर्णय की सूचना मिली तो वह दौड़े दौड़े आचार्य के पास गये और बड़े नम्र शब्दों में बोले—"मैंने अपनी फसल इसलिए तैयार नहीं की है कि उससे लाभ कमाया जाय, अथवा बेच कर आय में वृद्धि की जाय, मैं तो मिल बांट कर खाना चाहता हूं और मेरे परिश्रम का उद्देश्य भी यही है। मैं अधिकारी बनने का स्वप्न नहीं देखता और न मेरी इच्छा है। मैं अपने को सेवक मानता हूं क्योंकि सेवा करना मानव मात्र का धर्म है और मैं इस धर्म से विचलित कैसे हो सकता हूं। मैं तो अध्यापक बन कर सेवा करना चाहता हूं अतः आप सिविल सर्विस की परीक्षा हेतु मेरा नाम प्रस्तावित न कीजिए। आचार्य के खूब समझाने पर भी स्वामी जी ने अपना निर्णय नहीं बदला" इस निर्णय के न बदलने के कारण उसकी 'यद भद्र" की छाया में पल जाने के कारण स्वामी रामतीर्थ ने भारत का ही नहीं देश देशान्तर का जो उपकार किया है वह इतिहास अपने पन्नों में छिपाये हुए है। जैसे संकल्प के बारे में ऊपर कहा गया है, सत्य संकल्प सत्य शिव हुआ करता है और यही 'यद भद्र' का रूप व्यक्तियों में विचित्र आभा दिखा पाता है। ये भी देखने की बात है। कहा जाता है टेनिसो राज्य में रहने वाली महिला विलभागोल्डीन रूडाल्फ जब चार वर्ष की थी स्कार्लेट फीवर के कारण उसका दाहिना पैर खराब हो गया। वो बिना सहारे चल भी नहीं सकती थी। पर साहस की धनी उस बालिका ने नियमित टहलने और दौड़ने का क्रम प्रारम्भ किया वो पढ़ने के लिए विद्यालय भेजी गयी। वहां भी उसे दयनीय स्थिति के कारण शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के व्यंग्य सुनने पड़ते थे। एक अध्यापक ग्रेन उसे मच्छर

कह कर बुलाता था पर उसके धैर्य संकल्प और साहस ने उसे मच्छर से बिजली बना दिया।

सन १९६० में ओलम्पिक olympic खेलों का आयोजन हुआ तब रूडाल्फ ने भी उसमें भाग लिया और एक साथ तीन स्वर्ण पदक प्राप्त किए। उस लंगड़ी बालिका की इस महान विजय पर दर्शक दंग रह गये। एक खिलाड़ी ने जब उसकी विजय का रहस्य पूछा तो उसने बड़े गर्व से उत्तर दिया "मित्र मेरा पैर लंगड़ा हो सकता है पर मेरे संकल्पों और नियमित प्रयास ने मुझे यह दिन दिखला दिया है" वास्तव में नियमित साधना ऐसा अमूल्य खजाना है जो साधक को मालामाल कर सकती है। संसार के practieal जीवन में अनेक ऐसी घटनाएं अपने अपने स्थान पर उस दिव्य पुरुष की दिव्यता, देन अथवा अनुदान का वर्णन करते हुए थकती नहीं भगवान ऐसे रूप धारण करते हैं कि मानव को मानना पड़ जाता है कि रंग और ढंग वाले से रंग भी अपने अपने बनाये जाते हैं जिनके द्वारा प्रत्येक मानव में रंग बदला जाता है। एक राजा था दयालु और धर्म की राह पर चलने वाला था जनता के कष्टों को दूर करने का वह सदैव प्रयत्न करता रहता। पर उसके राजकुमार का स्वभाव अपने पिता से सर्वथा भिन्न था। उस राजकुमार को निरपराध नागरिकों को यातना देने में आनन्द आता था स्वभाव से निकृष्ट निर्दयी बोलने में कर्कश बात बात में उसे क्रोध आ जाता था। राजा अपने पुत्र की इन हरकतों से बहुत खिन्न था। उसने उसे स्वयं सुधारने का प्रयास किया। रानी ने भी नीति चलायो। अध्यापकों ने भी मार्ग लिया और सबने हार मान लो। जितने प्रयत्न सम्भव थे किये गये राज्य को जनता में विरोध बढ़ता जाता था और उधर उम्र के साथ राजकुमार के उत्पात बढ़ रहे थे, सभी लोग किसी न किसी तरह उससे मुक्त हो जाना चाहते थे। भगवान बुद्ध तक यह बात जा पहुंची उन्होंने उसे भलाई की राह पर चलाने का संकल्प लिया। उन्होंने राजकुमार को अपने पास नहीं बुलाया परन्तु स्वयं उसके

पास वहीं चले गये। भगवान बुद्ध व्यवहार में बड़े कुशल थे और लोगों के अनुकूल निदान ढूंढने में माने हुए थे। उन्होंने राजकुमार को धर्म का कोई पाठ नहीं पढ़ाया और न ही लम्बा चौड़ा व्याख्यान दिया। नरक की यातनाओं का भय दिखाने की भी उन्होंने कोशिश न की। वे घूमते हुए उसे एक छोटे नीम के वृक्ष के पास ले गये और कहा – "राजकुमार इस वृक्ष का पत्ता तो तोड़ कर देखो कैसा है।" राजकुमार ने वैसा ही किया। एक पत्ते को मुंह में डाला तो सारा मुंह कड़ुवाहट से भर गया। इतनी बात में ही वह आपे से बाहर हो गया। भगवान बुद्ध से उसने कुछ नहीं कहा पर अपने नौकर को आदेश देकर उस वृक्ष को जड़से कटवा दिया—"अरे राजकुमार तुमने यह क्या किया" बुद्ध ने प्रश्न किया "इस पौधे के लिए तो यही किया जाना था अभी से जब यह इतना कड़ुवा है तो बढ़ने पर इसकी क्या स्थिति होगी मैं समझता हूं साक्षात् विषही हो जायेगा अतः मैंने उचित ही किया है जो अभी से उसे उखाड़ फैंका है" राजकुमार ने उत्तर दिया। भगवान बुद्ध तो इसी अवसर व इसी नीति की प्रतीक्षा में थे। उन्होंने गम्भीरता पूर्वक कहा "राजकुमार यदि तुम्हारे दुर्व्यवहार और अत्याचारों से परेशान होकर जनता तुम्हारे से यही व्यवहार करने पर विवश हो जाय जो तुमने नीम के पौधे से किया है तो तुम क्या करोगे" वह दिन था कि भगवान बुद्ध द्वारा दिखाये मार्ग पर वो राजकुमार निकल पड़ा और फिर कभी बुराई की राह पर चल न पाया। बात संभाल संभाल को है, प्रजापति की यार्डस्टिक Yardstiek मापदण्ड बड़ा स्वतन्त्र है वह हर एक के अनुसार है, योग्य है, अनुकूल है, उचित है, जिसमें दूसरा निर्णय लिया ही नहीं जा सकता है। आज तो संसार इतने खेल तमाशे दिखाये जा रहा है कि विस्मय ही विस्मय दीख पाता है। सूरदास प्रज्ञाचक्षु तो हो गये परन्तु उसके वरदान में, प्रभुभक्ति में शराबोर एक ही हृदय की ऐसी छलक दे गये कि हाथ कान पकड़ते हैं। तुलसीदास जो अवश्य भक्ति के राह पर डालने वाली अपनी धर्म पत्नी का कर्कश स्वभाव तो

अवश्य बुरा मान पाये होंगे पर उस सुभद्रा माननीया दाम्पत्य की डोरी से बंधी सांझीदार का संदेश लेकर राम चरित मानस के लिखनें में एक सौभाग्य पा गये । तभी कहा था कि हमें किसी में कोई कमी नजर आती है किसी में कोई पर पालनहार के पालने इतने सुन्दर निकल पड़ते है कि सच तो यह है कई बार चंगे भले भी ऐसे पालने में डल जाने की इच्छा कर बैठते हैं । अपंग हर ने देखे भाले हैं । परन्तु हम तो देख भाल के लिए ही रह जाते हैं । यह विश्वकर्मा का एक आशीर्वाद कि हालैंड के एक शहर के समीप में हेटडार्प नाम की एक छोटी सी बस्ती बसाई गयी है, जहाँ केवल अपंग ही रहते हैं । डाक्टर आरी कलाप विज्क को विचार आया और उसने वहां अपंगों की बस्ती ही बसा डाली २६ नवम्बर १९६२ को अपंगों के जीवन यापन का कार्यक्रम दिखलाया गया टेलीविजन पर, प्रोग्राम पेश हुआ, कार्यक्रम सफल रहा, देश के हर शहर, कस्बे, और गाँव से लोग टेलीफोन पर व पत्रों द्वारा पूछने लगे कि वे इस कार्य क्रम में क्या हाथ बटा सकते हैं, एक युवती ने फोन पर कहा "कि मैं अधिक आर्थिक सहायता तो नहीं दे सकती परन्तु शीघ्र ही होने वाली अपनी शादी पर पहनने के लिए, पैसे बचा बचा कर खरीदा हुआ अपना गाऊन दे सकती हूं । पेशकश सहृदय थी और सुन्दर भी । उस युवती को T V स्टेशन पर आकर अपना उपहार देने के लिए बुलावा दिया गया । इस दृश्य का दर्शकों पर इतना गूढ प्रभाव पड़ा कि अपंगों की बस्ती बसा लेने के लिए एक सज्जन ने भूमि दे दी, कुल मिला कर लगभग पचासी लाख रुपये नकद और सात करोड़ बीस लाख रुपये उपहारों के रूप में जमा हो गये । जैसे कि ऊपर कहा गया है, अनेकों के पलड़े एक साथ तुल जाया करते हैं । वहाँ भी अनेकों के संयोग एक युग बना गये । अपंग अपनी जगह तुल पड़े, युवती अपनी जगह खरीदी गयी, टी-वी का अपना सौभाग्य बन गया और कार्यक्रम के नियोजन का यह पुरस्कार कि करोड़ों और लाखों की राशि परम पिता परमेश्वर के चरणों में झोंक दी गयी । ये भी भगवान की कृपा है वे

अपंगों का धन्यवाद तो लेते हैं उन पर नजर भी रखते हैं और उन्हें कृत्कृत भी करते हैं। बात वही पुरानी कि 'रचना वाले की रचना निराली' 'न किसी ने देखी न किसी ने भाली' 'हमने तो केवल विस्मित हो जाने की राह संभाली।' सद्भाव, सदा भद्र, सद् जीवन, प्रेम और दिव्यता का क्या कुछ कहा जाय। प्रभुवर की 'यद् भद्रं' के रूप में लोरियां हमें पाल पाती हैं। लोरियों की हूं हूं हमारे लिए परोक्ष में रास्ता ले रही होती हैं। कैसा सौभाग्यशाली देश राजस्थान था कैसी सौभाग्यवतीमाताएं राजस्थान की थीं कैसे भाग्यवान वीर राजस्थान के थे जो लोरियों, शुभ संकल्प का वरदान लिया करते थे। कहते हैं लोरियों की रागिनी राजस्थान में गूंजा करती थी। एक का नमूना यह भी है।

"माँ तेरे दूध से उऋण होना चाहता हूं" "यह तो बहुत सरल है" "कैसे ?" "तुझे सुलाने के वास्ते मैं जितनी बार तेरा पालना डोला रही हूं, बड़ा होकर निज पराक्रम से उतनी ही बार तू धरती हिला देना—मेरे दूध से तू उऋण हो जायेगा।" 'यद्भद्रं' के गीतों में ये उदाहरण भी फिट कर लेने की बात है। छोड़ दें हम अपने को उस परम पिता के पवित्र हाथों में और लिपट जायें उसकी पवित्र गोद में, अपने आपको समा लेने और केवल यही प्रत्युत्तर देने के लिए कि जो तू हमारे लिए करेगा वो अवश्य भद्र होगा। इस व्यापक रूप में 'यदभद्रं' की रूपरेखा मुझे तो बड़ी प्यारी लगी है, बड़ी पाठदायक है, बड़ी संतोषप्रद लगी है और बड़ी सुखमय मिली है।

यद भद्रं का लोक बड़ा प्यारा, बड़ा फैला हुआ, और बड़ा कल्याणकारी है, इसलिये इसी लोक में लौकिक होने के लिए विषयों से दूर हो जाने की प्रार्थना और योजना का हमें क्रम बनाना है। यूं देखा जाये तो विषय भी बड़े फैले फैलाये जैसे कि कीड़े मकोड़े। ये छुआछूत की बीमारी भी है। दूसरे के दोष हमको एक नजर से ललचाने वाले भी हैं। अपनी दूषित आंख के कारण हम इन विषयों को पुकार रहे हैं। परीक्षा के बहाने हम इनका शिकार भी हो रहे

हैं, विवेक रहित होकर हम दोषों की दुनियां में बह जाना अधिकार मानते हैं। विशेषता यह है कि भाऊ ही दोषों और पापों का है हमको जबरदस्ती अपने तूफान के जोर से धकेल दिया जाता है, जिनके परिणाम अभी तक दृष्टि में नहीं आते, भुगतने के समय भी सजा का दाम अकल में मुश्किल से बैठ पाता है। इसलिये भी कि कहीं हम 'यद् भद्रं' के संसार से वंचित न हो जायें, उस परमपिता के आशीर्वाद से परे न कर दिये जायें, इस दिशा की देखभाल अत्यन्त आवश्यक है। इतने विशाल संसार में विशालपति ही अपनी विशालता से इन विशाल दुष्कर्मों के आक्रमणों से हमें बचा सकता है। ये बड़े-बड़े जेलखाने, ये बड़े-बड़े हस्पताल, ये बड़े-बड़े जंजाल, हमारे विषयों से उत्पन्न कल कारखाने हैं। अब तो इस संसार में न्याय एक नाम की चीज रह गई है। वकीलों की मस्तिष्कीय उथल पुथल से निर्दोष दोषी बन जाता है। सिफारिश वाला दाँव पेच से निकल जाता है, उस वक्त दोषी भगवान के राज्य का किसी अन्य दोष में सजावार बनने के लिये समय ले लेता है। पर परम जागरूकता में दोषी निर्दोष होने के फरेब से बचा हुआ किसी और ढंग से ऐसा फंस जाता है कि पिछला सूद भी देना पड़ता है और न्याय लेना भी पड़ता है। न्यायालयों का संसार अपना है। वास्तविक और अवास्तविक का किस्सा अपना अपना बन जाता है। 'यहाँ न्याय मिल सकता है। यह संलग्न नारा रह जाता है। "मैं धर्म से सब सच कहूंगा" एक झूठ का पहलू ले लेता है। इन सारे क्रियाकलापों, अदायगी और खेल-खेल के मैदान में विषयों का पापों का खेल, वातावरण संसार का नरक बनाये जा रहा है। सत्य की आराधना करने वाले अपने आप को संभाल लेने वाले बहुत कम लोग हुआ करते हैं। खासतौर पर इस माहौल में जहाँ बोली कुछ है मिलता कुछ है दिखाया कुछ जाता है दिया कुछ जाता है।

भेंट समाप्त होने को है धर्मपत्नी ने यह प्रश्न खड़ा कर दिया है कि आखिर यदभद्रं किस कार्यक्रम अथवा किस धातु की है जिस

पर मानव छोड़ के बैठ जाये इसके उत्तर में यह तो कह ही डाला है कि हमारे मन का अजब तमाशा लोक भावों का लोक है, न जिसकी आकृति है: न उसकी प्रकृति यह कि ख्याली दुनिया में विचार ही उपचार है, वर्णन है, व रूपरेखा है, न शक्ल परमात्मा की न आत्मा की न आत्मा के वासी विचारों व संस्कारों की। इसलिये यदभद्रं के भी मापतोल का विषय बनता नहीं, हाँ यह अवश्य है कि यदभद्रं, पलड़ों को तोलने व गाँठने वाली हेतु धातु का नाम है। उस परमपिता की दया जो हर सफलता, हर बचाव, हर हालत, हर समय, अत्यन्त आवश्यक है सब कार्य, क्षेमकुशल, सरल सीधे होने के अतिरिक्त भी उसकी दया बहुत प्रधान है कि जिसके सौभाग्य से सारे पुन्य कार्य शोभा लेते हैं। सारे साधन सम्पन्न होते हैं, सारे विधान विधिवत होते हैं, इसलिए भी हर रीति नीति से उसकी दया की याचना, इच्छा, आकार बहुत जरूरी है खास तौर पर इस तरह भी कि क्या मालूम हमारे कोई ऐसे लेने देने पड़े हों जो हमारे दृष्टि से परे के हों, जिनकी हमको कोई स्मृति न हो, जिनकी भुगतान हमारे अनुमान से बाहर की हो, और जो वस्तुतः हमारे यद् भद्रं की निर्माता व जननी हो, दयावान भगवान का दयालु स्वभाव, स्वरूप हमारे सत्कर्मों को सुहाग देगा आशीर्वाद देगा तथा अपना पुण्य आप बनेगा। दुष्कर्म छोड़ते जायें। यह पलड़ा खाली होता जाये। सत्कर्म बढ़ते जाएं। यह पलड़ा भरता जाये। पलड़ों की डंडी प्रभुदया हमारे व्यक्तित्व को सम्भालती जाए यही क्रम हमारा प्राणाधार होता जाए।

——

: १२ :

बारहवीं भेंट

जहाँ सारी बातें मानी गयी वहाँ यह भी बात मान लेते हैं कि कई जिज्ञासु अपने शुभ संकल्प सतत् प्रयास व प्रभु कृपा से अपने मन की मैल धो भी डालते हैं। यहाँ की लीला वाला मित्र संस्कारों के शुभ नाम भी अपने यहाँ बसाता है और शुभ संस्कारों के शुभ नाम का एक नया संसार बनाता है। कहा जाता है कि रतलाम में श्री शक्तिराय जज लग रहे थे। मुलज़िम के कटहरे में उनका बाप खड़ा था, जिस पर धोखा दही का मुकद्दमा था सरकारी वकील ने उन पर धोखा देने का दोष प्रमाणित कर दिया। मगर दोषी के वकील ने यह प्रमाणित किया था कि उनके नाम पर धोखा किया गया है। उससे धोखे में दस्तखत कराये गये हैं। नियत उनकी साफ थी, दोनों पक्षों की बात सुनकर जज साहब ने अभियुक्त को छः माह की कैद और पाँच सौ रुपया जुर्माना की सजा सुना दी। सज़ा सुना कर जज साहब न्याय की कुर्सी से उतर आये उनकी आँखों में आंसू थे और बाप के पाँव छू दिये। इधर बाप की आंखों में भी आँसू थे, इस सौभाग्य के कारण कि अपने बेटे से ही उन्हें न्याय मिला है। इस घटना का अन्य रूप भी है कि बाप होकर बेटे से सजा लेना यह भी कर्मों का परिणाम है। यह बात पुरानी नहीं दो एक साल की है जहाँ आज भी एक भारतीय को न्याय करने का, तोल देने

का सही और उचित कर्त्तव्य पालन का मान मिला है। विषय यदि "य" से मुक्त कर दिया जाय तो विष ही रह जायेगा। अब विषय और विष का भागीकरण हर एक का अपना-अपना कर्त्तव्य बन जाता है। विषयों से विषयों में बिके हुये लोग कचहरियों में चलकर देखें कि प्रत्येक अभियुक्त भी अपना अपना रंग जमाये है अपना जहान बन रहा है। उनके हाल चाल देखते हुये एक निर्मल व्यक्ति दहल जाता है और यही प्रार्थना निकलती है कि भगवान नाहक से बचाना। दुआ अच्छी है पर दुआ की बजाय दवा क्यों नहीं खरीदी जाय। दवाखानों से नहीं इन अभियुक्तों के हालचाल से, उनके साथ सहानुभूति से, उन पर दयालुता से और अपने ऊपर अनुकम्पा से यह विचार करके कि भगवान रक्षा करनी हमारी, इन पापों के कार्यक्रमों से हम कभी लोभ लालच में आकर दुष्कर्म न कर बैठें, जिससे हमें ये जाल नसीब न हों, यह रही अदालतों की बात। अब ज़रा हस्पतालों में चलिये ज्यादा खा लिया था, चटनी मजेदार थी, गिज़ा अपनी थी, खून अपना था, जिगर भी अपना था पर अपने नजायज उपयोग से दोषी करार दे दिये गये और अब आन खड़े हुए हैं डाक्टर साहब की अदालत में. मुलजिम के कटहरे में यह प्रार्थना पत्र लिखे हुये कि हमें स्वास्थ्य दे दो। डाक्टर एक है बिचारे मरीज़ इतने अधिक हैं कि चारों ओर से उसे घेर रखा है, उसे सबको निपटाना है वह शीघ्रता से नुस्खे पे नुस्खा लिख डालता है किसी को कुछ, किसी को कुछ, रोगी दवाईयों वालों से दवाई ले लेता है इस विश्वास पर कि वो स्वास्थ्य हो जायेगा। हर मरीज दवा जरूर ले लेता है पर शफा जहाँ से मिलनी है अर्थात भगवान के बड़े दरबार से वहाँ अपना प्रार्थना-पत्र स्वीकार नहीं कराता। इसलिए दवाईयों का क्रम बढ़ता जा रहा है दुकानदारियां बढ़ती जा रही है परन्तु असल नुसखा असल अकाट्य साधन कि विषयों से दूर हो जायें, अस्वास्थ्य वर्धक वस्तुओं का प्रयोग न करें, परहेज करें वो भगवान की दुकान से प्राप्त नहीं किया जाता, खरीद नहीं किया

जाता । इसी हेतु एक नया जजांल बना लिया जाता है बुन ग्रौर नियुक्त किया जा रहा है । यह उदाहरण तो केवल छोटे छोटे शफाखानों के हैं । जरा मेडिकल इन्सटी ट्यूट, बड़े बड़े क्लीनिक, बड़े बड़े विशेषज्ञों के पास तो जाकर देंखे तो भगवान नाम की पुकार निकलती है । शरीर एक, रोग ग्रनेक, जरा से कद बुत का यह ठांचा मगर डाक्टरों के यहां इसका हिसाब हजारों की शक्ल लेता है हैरानी पे हैरानी, रग रग पृथक ग्रौर हर एक रग के मार्ग पृथक इसलिये बड़ी बड़ी Institute में रोगी की Histroy Seel बनती है । कथा तैयार होती है । कानों को हाथ लगता है ग्रौर जिस पर प्रभु-कृपा की जरा रेखा पड़े तो वह यह भो कह पाता है कि भगवान पाप भी कसे २ भोग दे रहे हैं । हमारे द्वारा ग्रनेकों को कष्ट होता है मगर हम फिर भी भूल जाते हैं कि हमारे द्वारा किये कर्म, हमारे दुष्कर्म, हमारे जानशीन बन रहे हैं, हस्पतालों के रूप में, डाक्टर के रूप में, नुसखों के रूप में, ग्रौषधी बेचने वालों के रूप । सत्य तो यह है कि वो सत्ता हमको पापों से दोषों से बचा सकती है वो सबसे उत्कृष्ट है जिसकी रचना में विषय भी एक सजा है, दोष एक रोग है इन सजाग्रों की List जाकर देखिये तो कचहरियों में ग्रौर इन रोगों को सूची जाकर लीजिये हस्पतालों में । हस्पतालों में लोग जाते है स्वास्थ्य पाने । मगर वहाँ भी तो जाकर मृत्यु का पंजा नसीब होता है यह उसका ग्रजब राज है । हमने जगह-जगह पर ग्रपने जंजाल फैला रखे हैं । कदम-कदम पर घोखा ग्रौर फरेब, प्रत्येक का स्वार्थ दूसरे की मार काट का कारण हो रहा है । परन्तु यह तो रहा संसार का व्यवहार पर इस संसार के ग्रधिपति से यद्भद्रं का वर पाकर मानव ग्रानन्दित ग्रौर सन्तुष्ट हो जाता है । वेद में एक मन्त्र ग्राता है कि भगवान मैं तुझे कभी ग्रपनी इच्छा पूरी करने के लिए नमस्कार न करुं ग्रर्थात् भगवान की इच्छा को ग्रपना भाग्य, ग्रपनी स्वीकृति समझूं । कितनी सुन्दर जिन्दगी का यह एक नमूना है । हम ग्रघमर्षण मन्त्रों में भगवान से दूसरों के प्रति द्वेष रहित होने की प्रार्थना करते हैं ग्रौर ग्रार्य-

भविनय लिखित स्व० दयानन्द जी के अनुसार अज्ञान वश हमसे जो द्वेष व ईर्ष्या करता है और जिससे हम भी ऐसा करते हैं वो और हम दोनों तेरे सन्मुख आकर स्वच्छ और शुद्ध हो जाने की प्रार्थना करते हैं। कितने भाग्यशाली होते होंगे वे लोग जिन्हें ऐसा सद्‌विचार मिलता होगा, आजीवन यह रुख लेने का अवसर नसीब होता होगा। शोक तो यह है कि नदी किनारे खड़े हम अब भी यह सोच रहे हैं कि नदी में स्नान करें या न करें, यह विचार कि इसमें कूद पड़ें कि न पड़ें अब तक हमें सताए जा रहा है। 'यदभद्र' का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है इस क्षेत्र की कोई हद ही नहीं, वहां तो केवल अपना मार्ग लेने की बात है, केवल शुद्ध मन के साथ इस मंत्र का पहला शब्द बढ़िया कि अपने दोषों और मैल से बच निकलने का हमारा परम साथी ही समर्थ है और हमारे अवगुण हर लेने के लिए भी। विशेषता यह है कि मांसिक दुर्गुणों की अथवा आध्यात्मिक अपवित्रता की मंजाई सिवाय उस महान शक्ति के कोई दूसरी शक्ति कर ही नहीं सकती, किसी और में यह सामर्थ्य ही नहीं कि वो हमारे काम आ सके। उर्दू फारसी की अनेक कविताओं में ऐसा लिखा हुआ मिलता है कि कई ऐसे दोष हैं जो सर कट जाने से ही समाप्त होते हैं। परन्तु मालूम यह होता है कि वे आत्मा की हस्ती में विश्वास नहीं रखते। अतः सरकट जाने से दोष का समाप्त होना उन्हें नजर आता है परन्तु हमारे विज्ञान के अनुसार यह दोष आत्माओं के वासी होते हैं जन्मजन्मान्तर मानव जीवन को व्यस्त करते हैं इसलिये भी 'यद्‌भद्र' के महाराजाधिराज से सबसे पहले निश्पाप होने की और दोषरहित होने की मांग की गई है। कई बार ऐसा पाया गया है कि पाप नई से नयी याद लाकर नया से नया रुख लेते हैं, दोष ही तो फांसी पै चढ़वाते हैं, मानव मानव को मार भी डालता है, पाशविक वृत्ति के प्रभाव में, अत्यन्त घृणित ढंग से, कत्ल भी किये जाते हैं, यह पाप बड़ी लानत है कि जो यह पीछा ही नहीं छोड़ते। यह कामवासना मानव का महान

शत्रु है जो आत्मियों में भी अनुचित सम्बन्ध की रूपरेखा लेती है। ये तृष्णा ऐसी विचित्र है कि अच्छा भला सम्मान के योग्य अपनी पाशविक वृत्ति में उलझा हुआ देखा जाता है अपना पराये का विवेक समाप्त कर बैठता है यह कामवासना का रोग यह आत्माओं का कैंसर, केवल भगवद् कृपा से ही दूर हो पाता है। जिसके लिए सतत् प्रयत्न और अभ्यास की आवश्यकता है। इसलिये भी 'जोही' केवल इन रोगों दोषों से मुक्ति दिला सके उसे मानना, उसकी शरण लेना, अत्यन्त श्रेष्ठ कदम है, जो ऐसा भगवान होगा जो ऐसा पिता हो जो हमको इन जलालत भरी बातों से पार कर सके वो कितना बड़ा हितैषी होगा जहाँ कि भद्र ही भद्र, शुभ ही शुभ की फसल बनती है, नेक और नेकी का बीज तैयार होता है, दिव्यता का स्वराज्य, भीनीभीनी जिसकी सुगन्ध है जो हमारे खुशहाल जीवन का राज है, इससे बढ़करके अपने ऊपर दूसरा कोई एहसान हो ही न सकेगा अर्थात् हम निष्पाप हो जाएं।

आज का मानव भगवान के टुकड़े करने में खुश हुआ जाता है, वो उसकी स्तुति करेगा क्या। आज का युग मानव और भगवान की लम्बी लड़ाई करवा देना चाहता है। एक भगवान के साथ दूसरे भगवान को टकरा दिया जाता है। महर्षि दयानन्द की माता विष्णु भगवान को मानती थी पिता शिव को मानते थे, तो पति पत्नी पर भिन्न नाम के भगवान उनमें भेद-भाव बनाये हुए था। मूल शंकर स्वयं हैरान थे मां को नाराज करें कि पिता को राजी करें। हमारे अपने यहां का यही हाल है कि बाल योगेश्वर और बाल भगवान भाई दो, पर अपने अपने को भगवान नाम देकर हजारों आदमियों को धोखा दे रहे हैं। निकृष्ट कर्म कर लेने के अतिरिक्त भी एक अपने को क्राइस्ट Christ एक दुर्गा विष्णु का रूप दे देता है। हम आर्यसमाजियों का सच्चा भगवान ऐसी कृपा करें कि इन लोगों का भगवान हमारे पल्ले ही न पड़े। ताकि उसकी मिट्टी पलीद न कर लेने के लिए हम अपने आप को गिराने को तैयार ही न हो सकें।

सरलता जो भगवान है की सवारी है उसे हम नजर से ओझल कर देने में प्रसन्न हों। यदि प्रत्येक अपने अपने आचरण परखे तो देखा जा सकेगा कि कहाँ तक हमें भगवान के साथ सच्चा प्रेम है भगवान को राजी कर लेना, अपने विचार में, भगवान को रजा मान लेना अपने विचार में, हमारा आये रोज का कला कौशल बन गया है, न हम शान्त चित्त होते हैं और न यह अवसर लेते हैं कि अन्दर की आवाज तो सुनें कि हमारे कर्म के कितने नम्बर लगे। भला भगवान की स्तुति से भगवान को क्या मिल सकेगा। उसे तो कुछ आवश्यकता नहीं, उसे किसी वस्तु की हाजत नही, उसकी स्तुति भी अपने आप को ऊँचा करने का एक साधन है। उसकी वास्तविक स्तुति यही है कि हम उसकी तरह बन जायें इसलिए महात्मा गान्धी कहा करते थे कि भगवान बना जा सकता है यही उसकी प्रशंसा, पूजा और प्रार्थना है। मुझे एक पुस्तक ईश्वर दर्शन जो कि एक संन्यासी ने लिखी है पढ़ने का अवसर मिला जिसमें "एकांकी विचरे नित्यं"। नित्य के साथ विचरणे का अच्छा ढंग, नामक विषय पढने को मिला। जिसमें वो भारत की आध्यात्मिकता का वर्णन करते हुए यह कह देना चाहते थे कि सत्चरित्र हो जाना भगवत प्राप्ति है। तैत्तरीय उपनिषद् में जब ऋषियों की एक गोष्ठी का वर्णन आता है शिक्षा पर विचार करते हुए यह बताया है कि नाक ऋषि ने कहा कि शिक्षा ज्ञान है, तपोवन ऋषि ने कहा शिक्षा कर्म है। परन्तु सतविचार ऋषि ने कहा कि शिक्षा सत्चरित्र है। भगवान की हर बात में कोई न कोई राज है। प्रश्न हुआ कि मानव को आंख दो क्यों दीं। विज्ञान ने अनेक उत्तर दिये। परन्तु हमारा विज्ञान यह कहता है कि दृष्टि बनती त्रिकोण से है प्रकाश वस्तु और दृष्टि द्वारा। बाहर का प्रकाश वस्तु पर पड़ता है। वहाँ से दोनों आंखों के द्वारा कोण बनकर मस्तिष्क के उस हिस्से से सम्बन्ध लेता है जहाँ दर्शन करने की शक्ति विद्यमान हैं। फिर विशेषता यह आंखें दो दे दीं यदि एक खराब हो जाये तो दूसरी काम दे जाये, एक्सी-

डेन्ट Accident को छोड़कर दोनों आंखें एक ही समय में खराब नहीं होतीं। ये तो केवल शारीरिक अंग की बात निकल आयी वास्तविकता थी अपनी अन्तर दृष्टि की जिससे हमारा जीवन अमर होना है।

बहुत कह लिया परन्तु सार की बात यही है कि आत्मिक प्रगति में सबसे बड़ी बाधा कुसंस्कारों की है जिनकी प्रेरणा से मानव कुकर्म कर लेता है, यह विश्व कर्म और कर्म फल के अकाट्य सिद्धांत की धुरी पर परिभ्रमण कर रहा है, कर्म फल पर अविश्वास करना ही विश्व-व्यवस्था पर अथवा ईश्वर पर अविश्वास करना है, इसी को नास्तिकता कहते हैं। तत्काल कर्म-फल नहीं मिलते इसी से लोग पाप कर्मों को करने में निर्भय बनते और सतकर्मों से उपेक्षा लेते हैं यही है वो प्रमुख अवरोध जिस चट्टान से टकरा कर आत्मिक प्रगति चूर चूर होती जा रही है। निकृष्ट चिन्तन और घृणित कर्तृत्व बना रहे तो किसी भी पूजा पाठ से दैवी अनुग्रह प्राप्त नहीं हो सकता। उपासना कपड़े को रंगने के समान है परन्तु उससे पहले धुलाई होनी आवश्यक है। दुर्बुद्धि और दुष्ट प्रकृति अपनाये रहने पर साधना फलवती होती नहीं, उपासना के विधि विधान गायत्री की उच्चस्तरीय साधना जैसे क्यों न हो, भले ही पंचकोषों को ज्योतिर्मय बनाने कुण्डलिनी जागरण की महान साधनाओं का सुअव-सर मिलता रहे पर हर हालत में व्यावहारिक जीवन का परिष्कार परिशोधन अनिवार्य रहेगा ही। मेरे अपने विचार में तो संसार बनाया इसलिए था कि इसकी राख से अपनी आत्मा को माँजा जा सके। प्रत्येक पाप कर्म भी एक श्रृंखला होती है, तालाब में उठने वाली लहर पूरी सतह तक दौड़ती है, पापों की श्रृंखला भी पूरे समाज को परोक्ष रूप से प्रभावित करती है, प्रायश्चित्त का रूप ही नहीं है कि जितने वजन को समाज को हानि पहुंचायी है उतने ही मूल्य का लाभ दिया जाए, पाप के समतुल्य पुण्य कर्म किये जायें। इसमें

तो कोई सन्देह नहीं कि वैद्य व डाक्टर इलाज कर ही तब सकता है जब वो रोग को पहचान जाये। जब तलक हम अपनी आन्तरिक रूप पहचानते नहीं, उसे साफ नहीं करते, हमारे स्वास्थ्य और पवित्र होने का कोई अर्थ ही नहीं बनता। हमारे शास्त्रों में प्रभुभक्ति का प्रसाद बड़ी महत्ता वाला कहा गया है और वो भी यही महत्ता कि मानव जैसे को यह महा शक्ति पवित्र कर सकने में समर्थ है। आत्म उत्कर्ष के लिए आत्मशोधन की अनिवार्य आवश्यकता रहती है। इसके लिए वर्तमान और भावी जीवन को चरित्र निष्ठ, समाज निष्ठ बनाने की पवित्र और परिष्कृत रखने की सुव्यवस्थित योजना बनानी आवश्यक है। लोकमंगल के लिए सत्प्रवृत्तियों का विकास, विस्तार करने के लिए उदार अनुदान प्रस्तुत करने पड़ते हैं, भौतिक महत्वाकाँक्षाओं को जितना घटाया जा सके और अपनी क्षमता का जितना अधिक उपयोग परमार्थ प्रयोजनों में किया जा सके, समझना चाहिये कि साधना के फलित होने का उतना ही सुनिश्चित आधार उपलब्ध हो गया।

प्रार्थना मन्त्रों के इस पहले श्रेष्ठतम प्रार्थना कि हम स्वच्छ हो जायें, पवित्र बन जायें, सत्पात्र बन जायें, बड़ी सारगर्भित है जिस पर उत्कृष्टता की नींव चल सकेगी। सृष्टि के अन्तर गर्भ में छिपे हुए ज्ञात अज्ञात रहस्यों की ओर जब दृष्टिपात करते हैं तो प्रतीत होता है कि सृष्टि का रचयिता सचमुच ही "महतो महीयान" है उसका महत्व इस सृष्टि के रूप में अपनी लीला विलास से मानवीय बुद्धि को चकित व चमत्कृत कर रहा है। स्वर्गीय गान की स्वरें सुनाई दे रही हैं, दिव्य प्रकाश की किरणें दृष्टिगोचर हो रही हैं, वे और कुछ नहीं सत्यनियम (ऋत) ही मिलकर ठीक धुन में ताल स्वर के साथ वज रहे हैं।

सच्चा सुख और शान्ति चाहता हर कोई है परन्तु उसका मार्ग कठिन है शुद्ध दृष्टि बनती नहीं इसलिए सुख शान्ति आती नहीं,

व्याकुलता की तो हद है ही नहीं। व्याकुल हुए हम लोग इतना भी नहीं सोच पाये कि व्याकुल होने की चीज है ही क्या ? यदि ध्येय साफ हो जाये साध्य शीघ्र मिल जाये। व्यर्थ की बातचीत सार को प्राप्त करने नहीं देती। कहा जाता है स्वामी रामतीर्थ उन दिनों अमेरिका के दौरे पर थे। अनेक स्थानों पर गोष्ठियों प्रवचनों का आयोजन हो रहा था। भारतीय संस्कृति के अमूल्य सिद्धान्तों की व्यवस्था में अमेरिका निवासी बड़े प्रभावित हो रहे थे। एकदिन स्वामी जी का प्रवचन समाप्त होने पर एक महिला आई और विषाद युक्त वाणी में अपने विचार व्यक्त करने लगी—

"स्वामी जी ! मेरे एक ही पुत्र था। थोड़े दिन पूर्व उसकी मृत्यु हो गई। मैं विधवा हूं किसी भी तरह चित्त को शान्ति नहीं मिलती जीवन में निराशा ही दिखाई देती है आप कोई ऐसा उपाय बतायें जिससे मेरे जीवन में आशा भर जाये।" "आपको शान्ति की पुनः प्राप्ति हो सकती है और अपने जीवन में आप आनन्द का अनुभव कर सकती हैं पर हर वस्तु का मूल्य चुकना पड़ता है। क्या आप सुख शान्ति की पुनः प्राप्ति हेतु कुछ त्याग करने को तैयार हैं ?" "बस आपके आदेश देने की देर है मैं अपना सर्वस्व त्यागने को तैयार हूं।" "वस इतना ध्यान रखना कि आपके देशवासी भौतिक वस्तुओं पर अधिक ध्यान देते हैं वहाँ डालर और सेन्ट के त्याग से काम नहीं चलेगा। यदि आप सचमुच तैयार हो तो में कल स्वयं ही आपके निवास स्थान पर उपस्थित हो जाउंगा।" दूसरे ही दिन स्वामी रामतीर्थ एक हब्शी बालक को अपने साथ लेकर उस महिला के घर पहुंचे। विजली का बटन दबाया घंटी बजी। दरवाज़ा खुला और वह महिला सामने आ खड़ी हुई। "स्वामी जी आपने बड़ी कृपा की जो मेरे घर पधारे।" "माता यह रहा तुम्हारा पुत्र अब इसके सुख दुःख का ध्यान रखना और पालन पोषण करना तुम्हारे ऊपर निर्भर करता है।" उस काले लड़के को देखकर वह महिला सिहर उठी। "स्वामी जी यह हब्शी बालक मेरे घर में प्रवेश कैसे

कर सकता है। गोरी मां काले लड़के को अपना पुत्र कैसे बना सकती है।" "मां यदि इस बालक के लालन पालन में आपको इतनी कठिनाई हो रही है तो सच्ची सुख और शान्ति को प्राप्त करने का मार्ग तो और भी कठिन है।" विशाल संसार में विशाल दृष्टि भी एक महानता है, वास्तविकता है और प्राप्ति है, भविष्य की अंधियारी गलियों में झांकने फिरने की अपेक्षा यह अच्छा है कि हम अपने झटपट पर ध्यान दें, वर्तमान को विचारें उसे ही पकड़ने और संभालने लग जायें। किसका भविष्य क्या है उसे कोई नहीं जानता। प्रौढ़ता की निशानी यह है कि वर्तमान को समझें और उसका श्रेष्ठ-तम रीति नीति से सदुपयोग करने में जुट जायें। कमरे के एक कोने में धूपबत्ती जल रही थी और दूसरे पर मोमबत्ती ! मोमबत्ती ने तिरस्कार पूर्वक धूपबत्ती की ओर देखा और कहा देखती नहीं मैं कितनी भाग्यवान हूं चारोओर मेरा प्रकाश फैल रहा है सबको आंखें मेरी ओर हैं धूपबत्ती बोली बहन सो तो ठीक है पर परीक्षा के कठिन समय में धैर्य और साहस के साथ अधिक देर रह सके तभी तुम्हारी चमक की सार्थकता है मोमवत्ती ने बात अनसुनी कर दी हवा का एक तेज झोंका आया मोमबत्ती बुझ गयी पर धूपवत्ती ने अपनी सुगन्ध अधिक तेजी से बखेरनो शुरू कर दी जिस पर कमरे का आकाश बोला वो चमक किस काम को जो एक झोंके का सामना भी न कर सके।" यही है हमारा धर्म यही है हमारा कर्म ओर यही है हमारी इस शुभ प्रयास का शुभ उपहार।

————

: १३ :

तेरहवीं भेंट

भद्र का लोक अलौकिक होगा ही। पर अनन्त रचना के अनन्त प्राणियों के लिए भद्र का परिमाण भी अपना २ होना आवश्यक है। इस सारी परिभाषा के अतिरिक्त परम पिता परमात्मा का अपना नाम अपना लोक निःसंदेह भद्र ही हो सकता है क्योंकि प्रजापति स्वयं सतचित आनन्द स्वरूप हैं वहाँ अकुशलता कृपणता दुख दरिद्र की गुंजाइश ही नहीं बन सकती इसलिए भी उसकी समीपता में जाने से मानव भद्र का वास्तविक ग्राहक व सत्पात्र हो जाता है। उसके चमत्कार उसकी दया उसका परोपकारी स्वभाव हम सबके लिए वर्णन का विषय बनता है। पाप से भी वह हमें बचावे असाधारण दया की अमृतवर्षा करे ऐसे अच्छे पिता को कोई अभागा ही छोड़ने को तैयार हो सकेगा केवल इसलिए भी कि उसको लक्ष में रख कर हमारे जीवन का उद्धार हो सके उसके वर्णनीय कथायें दृष्टि में ले आना अत्यन्त उचित है।

परमात्मा एक अदृश्य तत्व है और अन्तःकरण की श्रद्धा और मन का एकाकार होते ही उस परम पावन सत्ता के प्रभाव पुण्यफल देखते ही बनते हैं। महाभारत रामायण पुराण अनेक घटनाओं से भरे पड़े हैं। जिसमें प्रभु कृपा का प्रसाद देखते योग्य बनता है। पुरानी बातें जीर्ण होकर सम्भवतः हमारे मस्तिष्क में स्थान न लें हम आज के

युग की ही घटनाओं में अपने प्यारे प्रभु के सत्यकार्य समझने का प्रयास करें। टंग्स्टन तार पर धन व ऋण धाराओं के अभिव्यक्त होने की तरह यह ईश्वरीय अनुदान जिन दो धाराओं के समिश्रण से किसी भी काल में प्रकट होते रहते हैं वह है श्रद्धा और विश्वास स्व० लेडीवाटर ने अपनी पुस्तक 'अदृश्य सहायक' में सैकड़ों उदाहरण इस महान अतीन्द्रिय सत्ता के अस्तित्व में देकर बड़ा उपकार किया है। बात १८८४ की है इङ्गलैंड का एक जहाज धर्म प्रचार हेतु न्यूजीलैण्ड के लिए रवाना हुआ। वह खाड़ी विस्के की खाड़ी से बाहर निकला ही था कि जहाज के पेंदे में छेद हो गया। मल्लाहों के पास जितने पम्प व दूसरे साधन थे पानी निकालने में जुटा दिए गए पर पानी घटने के बजाय अकल्पनीय गति से बढ़ता जा रहा था। लाइफ बोटों द्वारा जाने बचाने का रंग ढंग बना डाले गए अचानक पम्पों पर काम करने वालों ने सूचना दी कि जहाज में पानी आना बन्द हो गया था। यात्रियों ने चैन की सांस ली और जहाज चल पड़ा काल्पर्सडाक बन्दरगाह पर मरम्मत कराई गई। जब पता चला कि उस छेद में दैत्याकार मछली की पूंछ फंसकर इतनी कस गई थी कि न केवल छेद ही बन्द हुआ वरन मछली भी घिसटती हुई साथ चली आई। यह है एक दृष्टान्त भद्रों के पतिदेव का इसी तरह अनविजिबल हेल्पर्स के लेखक ने लन्दन की हालवर्न स्ट्रीट में कुछ एक मकानों में आग लग जाने का वर्णन किया है—वहाँ दो मकान तो पूरी तरह जल गये थे। एक बुढ़िया को छोड़कर शेष सभी को बचा लिया गया पर सामान तो सारा अग्नि के समर्पण हुआ उस रात एक मकान के मालिक के मित्र स्वयं तो कहीं और चले गये थे और अपने बच्चे को वहीं छोड़ गए थे। जब भीषण अग्नि काण्ड के पश्चात् बच्चे की खोज की गई उसे जिस अटारो पर सुलाया गया था उसके गोले भाग में आग का रत्ती भर प्रभाव नहीं पड़ा और यह दृश्य अत्यन्त विचित्र था कि बच्चा चारपाई पर जूं का तूं सो रहा था जैसे कि अपनी माता की गोद में लेट रहा हो

भद्र ही जिसका व्यापार क्षेत्र हो वहां का क्या कहना। बंकिघम शायर के निकट एक किसान के छोटे छोटे दो बच्चे खेलते २ दूर जंगल में निकल गए, रात को जब बच्चों की अविद्यमानता का पता चला किसान दम्पत्ति प्यारे बच्चों के वियोग में बहुत तड़पे जब वह बच्चों को ढूंढ़ने बाहर निकले उन्होंने एक अदभुत नील वर्ण प्रकाश देखा प्रकाश की ओर वह बढ़े तो प्रकाश आगे २ बढ़ता चला गया और आखिर जंगल के एक सुनसान भयानक जीव जन्तुओं के स्थान के समीप प्रकाश स्थिर हो गया और वह किसान अत्यन्त विस्मय में अपने बच्चों को वहाँ शान्ति पूर्वक सोते हुए देख पाया अचम्भे में कौतुहल में किसान हैरान पर हैरान कि बच्चे वहाँ पहुंचे कैसे' सुरक्षित क्योंकि सुला दिये गए थे। श्रद्धावान केवल नोट करने वाला बने कि हो क्या रहा है वह परम संरक्षक नाना विधि से अपनी प्रजा की पालन कर रहा है। २६ जून १९५४ को देहली में छपने वाले दैनिक हिन्दुस्तान में बताया गया कि पन्ना जिले के धर्म-पुर नामक स्थान में कच्ची ईंटों को पकाने के लिए एक भट्ठा लगाया गया था किसी को यह ज्ञात नहीं था कि ईंटों के बीच एक चिड़िया ने घोंसला बनाकर उसमें अण्डे सेये रखे थे। एक सप्ताह तक भट्ठा जलता रहा ईंटे आग में पकती रहीं आठवें दिन जब भट्ठा खोला गया तो एक चिड़िया उसमें से निकलकर भागी कौतुहल से सैकड़ों लोग वहाँ इकट्ठे हो गए और यह मानने पर विवश हो गए कि परमात्मा की अदृश्य सत्ता का संरक्षण सर्व समर्थ हैं और विस्मय अधिक यह कि दो अण्डें अभी वहाँ सुरक्षित मौजूद थे। जिस स्थान पर घोंसला बना था उसके एक फीट दायरे में आग पहुंची ही नहीं थी। कमाल की बात यह है कमाल वाले के कमाल भी कमाल के हैं जो मानवी बुद्धि तथा कल्पना से बाहिर के होते हैं नृसिंह पूर्वतापिन्युपनिषद् के एक प्रसंग में देवता ब्रह्मा जी से प्रश्न करते हैं हे! प्रजापति : भगवान को नृसिंह क्यों कहते हैं। ब्रह्मा जी उत्तर देते हैं—सब प्राणियों में मानव का बौद्धिक पराक्रम प्रसिद्ध है सिंह का

शारीरिक पराक्रम दोनों के संयोग का अर्थ है प्रकाश और दृश्य रूप में बुद्धि और बल रूप में अपने भक्तों की रक्षा में तत्पर रहना। नृसिंह कोई साकार स्वरूप हो या नहीं पर प्रकाश और पराक्रम के रूप में उसका अस्तित्व कहीं भी अभिव्यक्त देखा जा सकता है इतिहास तो भगवान की परम अनुकम्पा के नए २ दृष्टान्त देकर चकाचौंध करने में लग रहा है। दुनियां भर में ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं जिनमें मानवीय क्षमताओं के अयाचित उपलब्ध हो जाने के उदाहरण मिलते हैं। यह घटनायें इस बात को प्रमाण हैं कि मनुष्य इतना ही नहीं जितना वह स्थूल आंखों से हांड मांस के पिण्ड के रूप में दिखाई देता है अपितु उसकी सूक्ष्म तथा सनातन सत्ता तो अपने परम पिता की सर्वज्ञ सर्वदर्शी सर्व समर्थ सत्ता से ओत प्रोत है। जहाँ मानव को सौभाग्य मिला उसके सानिध्य का वहां भगवान की अनुग्रह की प्रकाष्ठा का भी प्रतीक बनता है। डा० नेल्सन वाल्ट का मत यह है कि मनुष्य के अन्दर एक शक्तिशाली आत्म चेतना काम कर रही है जिसे जिजीविषा तथा प्राणधात्री शक्ति कहते हैं इस शक्ति में रोग निरोध शक्ति तथा अन्य आत्मरक्षा जैसे अस्तित्व सारक्षता की क्षमताएं भी सन्निहित हैं। जागृत तो जागृत रहा अब तो स्वप्न अपनी माया अपना क्षेत्र समझाने में आगे बढ़ रहे हैं। डा० राईन ने ४००० ऐसी घटनाएं संकलित की हैं जो स्वप्नों में हुए पूर्वाभास की सत्यता प्रतिपादित करती हैं। मनःचेतना की उच्चस्तरीय परत को विज्ञानमय कोष को यदि जाग्रत समर्थ तथा परिष्कृत बनाया जा सके तो निःसन्देह उसके सत्परिणाम इतने महत्वपूर्ण हो सकते हैं जिसकी तुलना बड़ी-बड़ी भौतिक सामर्थ्य को भी तुच्छ सिद्ध कर सके। इन सारी करामातों का श्रेय मिलता है उस भद्रों के परम पिता को जिसके लोक में निवास करने का हम लक्ष विचार रहे हैं। प्रकृति के अनुदान अन्य प्राणियों को भी मिलते हैं यह सारे विवरण पढ़ २ कर अत्यन्त श्रद्धा से उसके भद्र लोक के वासी होने को जी तरसता है, दया उसमें असीम है अकल्पनीय है हर प्राणी को अपने२ स्थान

पर निजी आशीर्वाद देकर अपनी प्रजा होने का सौभाग्य दे रहा है। इन प्राणियों की गणना कोई क्या करे वर्णन क्या करे समझाए क्या बताए क्या। केवल उदाहरणार्थ दक्षिणी अमेरिका में एक रेलगाड़ी नाम का एक दो इंच लम्बा कीड़ा होता है जिसके मुंह में लाल दीपक होता है और दोनों ओर ११-११ ही दीपक होते हैं। कैसा होगा हमारा प्यारा पिता जिसे हम छोड़ देने का साहस कर लेते हैं पर वह हमें कभी नहीं भूलता अमेरीकी कृषक जार्ज स्मिथ को मक्का की फसल सङ्गीत प्रवाह के आधार पर अत्यधिक बढ़ा लेने में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। शीत के सार्थक उपयोग की खोज हेतु एक नई विद्या क्रियाजेनिक्स प्रकाश में आ रही है। इसके आधीन मनुष्य को शीत में दबा दिया जाएगा जमा हुआ प्राणी हजारों वर्ष तक शून्य स्थिति में पड़ा रह जाएगा फिर आवश्यकता पड़ने पर यान में जमे पड़े अन्तरिक्ष यात्री को स्वसंचालित यान अभीष्ट तापमान उत्पन्न कर जीवित कर लिया जा सकेगा। नक्षत्र पिण्ड पर निर्दिष्ट कार्य सम्पन्न कर पृथ्वी की ओर लौटते समय यही प्रक्रिया पुनः अपनाई जाएगी। भद्रपति भद्रों का अपरम्पार पुञ्ज हैं देखते नहीं बनती, पढ़ते हैं तो विस्मय से मूर्छा आना चाहती है। लटविया में ५५ वर्ष पहले पैदा हुए बाल्टर कार्नलियस को दुनियां का सर्वाधिक बलवान व्यक्ति माना जाता है इन दिनों वह ब्रिटेन में पोटरकौरों में लोगों को तैराकी सिखाता है। वह स्प्रिंग की तरह लोहे की मोटी से मोटी राड को मोड़ देता है पर उसका आहार है ताजी घास, उसने आज तक न दूध पिया न घी लिया न मक्खन न मेवा न रोटी न कोई व्यंजन। अब कोई मास आहारियों से औषधियों के गुणगान करने वालों से पूछे ? वह सज्जन जहां जाते हैं पहले तसल्ली कर लेते हैं कि उनके खाने हेतु ताजा घास मिल सकेगा ? ढूढ़ते जाओ घूमते जाओ तथा गुणगान करते जाओ इसलिए ऐसे महान दयालु भगवान के भद्र लोक की सदस्यता लेने की चाह दी थी, विचार दिया था, जहां विशालकाय सामर्थ्य के रूप रूपान्तर के

दर्शन होने की आशा है। सुख और शान्ति का तो कहना ही क्या प्रभुवर के अनुभव से नया ताजा, समृद्ध हो जाने की पूरी आशा है। इधर हम साफ सुथरे हो जाएं उधर भद्रों के अराध्य देव की कृपा के सत्पात्र बनें फिर आह्लाद व आनन्द के सिवा कुछ शेष रह न जाएगा।

वह जगत पिता दया और अनुकम्पा से सराबोर है। इसलिए उसे दयालु स्वभाव ही कहा है इतना बड़ा ब्रह्माण्ड उसके कला कौशल एक जीती जागती तसवीर है सूर्य अपने केन्द्र में एक करोड़ साठ लाख डिग्री स० ग्र० गर्म है। यदि पृथ्वी के ऊपर अयन मण्डल (आइयनेस्फियर) की पट्टियाँ न चढ़ाई होती तो पृथ्वी न जाने कब की जलकर राख हो गई होती। सूर्य अपने स्थान से थोड़ा सा खिसक जाये तो ध्रुव प्रदेशों की वर्फ पिघल कर सारी पृथ्वी को डुबो दे यही नहीं उस गर्मी से कड़ाह में पकने वाली पूड़ियों की तरह सारा प्राणी जगत ही पक कर नष्ट हो जाए थोड़ा ऊपर हट जाने पर समुद्र तो क्या धरती की मिट्टी तक वर्फ बनकर जम सकती है। यह तथ्य बताते हैं कि ग्रहों की स्थिति और व्यवस्था अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक की गई है। यह परमात्मा के अतिरिक्त और कौन चित्र-कार हो तकता है। ग्रह नक्षत्रों की रात छोड़ दे परमाणुओं के जिस तालाब में हम जलचरों की तरह जीते हैं उसके एक परमाणु में ही २७ लाख किलोमीटर कलौरी गर्मी भरी है उसे प्रकृति ने शोषित प्रसुप्त न रखा होता तो जीवन का असतित्व एक दिन भी न ठहर पाता परमाणु के इलकेट्रान प्रति सैकण्ड १३५००० किलोमीटर की प्रचण्ड गति से चलते हैं यदि यह चार्ज क्रियाशील रहा होता तो पृथ्वी के समस्त प्राणी १६ सैकण्ड में सूर्य पर जा पटक दिए गए होते। ऐसी प्रचण्ड आंधी चलती जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को थरथराकर रख देती नियामक विधान किसी मस्तिष्कीय सत्ता का अस्तित्व में होना प्रमाणित करता है। हमारे जीवन का आधार सूर्य है वह १० करोड़ ३० लाख मील की दूरी से अपनी प्रकाश किरणें भेजता है जो ८

मिनट में धरती तक पहुंचती है। सूर्य अनन्त अन्तरिक्ष का एक नन्हा तारा है रीडर्स डाइजेस्ट ने एक इटलस छापा है उसमें सौर मण्डल के लिए एक बिन्दु मात्र रखा है और तीर का निशान लगाकर दूर जाकर लिखा है हमारा सौर मण्डल यहाँ नहीं है यह ऐसा ही हुआ कि कोई कहे मेरी आंख का आंसू समुद्र में गिर गया। जून १६६७ के साइन्स ट्रेड में ग्राहम बेरी ने लिखा है कि पृथ्वी से छोटे ग्रह भी ब्रह्माण्ड में हैं और ५ लाख मील की परिधि वाले भीमकाय नक्षत्र भी किन्तु यह सभी विराट ब्रह्माण्ड में निर्द्वन्द विचरण कर रहे हैं यदि कोई व्यवस्था न होती तो यह तारे आपस में टकरा कर नष्ट भ्रष्ट हो जाते। यह विशालता उस अति भद्र स्वरूप की चिन्हमात्र है जिसकी सुरक्षा पूर्ण गोदी में सारा संसार विचर रहा है। उसकी दयालुता भद्र शुभ व लाभप्रद है। कोई और सत्ता हमारी बचाव ही नहीं करती इसलिए उस भद्रों के लोकों के स्वामी के संरक्षण में हो जाना मानवता का प्रतीक है। अनन्त वैभवों के अधिपति के यहां सत्कृत होने का सौभाग्य लेना है। जहाँ उसकी देख रेख में सुख सामग्री मिलेगी वहाँ निश्चिन्तता का वरदान भी मिलेगा जीवन भी प्राप्त होगा संतोष का आशीर्वाद भी मिलेगा जीनें वाले को भी स्वाद मिलेगा जिलाने वाले को भी प्रसन्नता मिलेगी कैसा वह शुभ अवसर होगा घड़ी होगी तृप्त हो जाने का मुहूर्त होगा तथा कृत्कृत्य हो जानें का समागम होगा।

——

: १४ :

चौदहवीं भेंट

यह सारा संसार कर्मों का चक्कर है। हर कार्य अपना फल साथ उत्पन्न कर छोड़ता है चाहे भुगतान कभी क्यों न हो दुष्कर्मों की परतें आत्मा पर चढ़ती जाती हैं और अविसित अवस्था को प्राप्त होती जाती हैं। मानव स्वभाव से तो दोषी नहीं है पर जन्मजन्मान्तर का मैल उसे इतना गदला कर डालता है कि उसको निरखना मुश्किल से दृष्टिगोचर होता है। पागलों की संख्या तो संसार में बढ़ ही रही है और तेजी के साथ मनोविकार ग्रसित, अर्धविक्षिप्त लोगों की गणना की जाए तो आधी से अधिक जनसंख्या इसी चपेट में आई हुई दिखाई पड़ेगी। शारीरिक रोगों का विस्तार भी खूब बढ़ रहा है। दुर्बलता और रुग्णता के अछूते बहुत कम लोग मिलेंगे। मन की दुराव ग्रन्थियां खोल देने पर मनुष्य अपने आपको बहुत हल्का अनुभव करता है और न केवल मानसिक भार से वरन् रोगों के कष्ट से भी छुटकारा प्राप्त कर लेता है। शिक्षित समाज में 'सॉरी' शब्द का प्रचलन भी अपराध की स्वीकृति तथा शोध के अनुशासन का परिचायक है। अंग्रेजों में इस शब्द का प्रचलन उनके चरित्र की एक सुन्दर व्याख्या है जिसके द्वारा दोषी व जिसके प्रति अपराध हो उन्हें संतोष का पैगाम देता है। रंगाई से पूर्व धुलाई आवश्यक है ही इसी अध्यात्मिक प्रगति के लिए की गई साधना

का समुचित प्रतिफल प्राप्त करने के लिए उन अवरोधों का समाधान किया जाना उचित है जो दुष्कर्मों के फल स्वरूप आत्मोत्कर्ष के मार्ग पर पग पग पर कोई कठिनाई उत्पन्न करते हैं। हमारे शास्त्रों में प्रायश्चित्त का विधान भी इसी सिद्धान्त पर है कि मैल को धोया जाए। प्रायश्चित्त का अर्थ है ही यह कि स्वेच्छा पूर्वक दण्ड भोगा जाए। लक्ष तो केवल कुसंस्कारों को धोने का है। स्वयं दण्ड भुगतने के लिए अपने को तैयार करना एक सत्साहस है जिसमें व्यक्ति की सचाई व साहसिकता टपकती है। यह भी परासुव तन्नासुव की दौड़ धूप है। केवल ईश्वर से क्षमा प्रार्थना नदी सरोवर पर स्नान देव दर्शन इत्यादि हमारे दुष्कर्मों की गांठे नहीं खोल पाती जो हमारे अन्तः क्षेत्र में केन्सर नासूर के फोड़ों की तरह जड़ जमा कर बैठ गई हैं। उन्हें उखाड़ने के लिए कड़े और गहरे आपरेशन की जरूरत रखते हैं। सुयोग्य साधक दुष्कर्मों की सूची बनाकर दूसरों पर की गई हानि को समक्ष रखकर अपना एक मार्ग लेता है हीन कर्मों पर चिंतन आत्म विश्लेषण संकल्पों द्वारा दोहराना तथा उनसे मुक्त होने का दृढ विश्वास इस जंजाल से छुटकारा पाना है। यह अपने में एक क्षेत्र उसकी हद बंधी उसकी सम्भाल अपने स्थान पर एक विशेषता जिसे सतत प्रयास से लक्ष में रखकर जख्मों को साफ करना उनकी प्रगति करना मरहम पट्टी करना दवा दारू करना रोगी की शान में है दुष्कर्मों दुष्प्रवृत्तियों दुर्भावनाओं से दूसरों का अहित और अपना हित होने की बात सोची जाती है पर वस्तुतः स्थिति इसके विपरीत है। कुमार्ग की कटीली राह पर चलने से अपने पैर कांटों से बिंधते हैं ही अपने अंग छिलते और कपड़े फटते हैं यही अपना ही अहित है इसलिए बुद्धिमता इसी में है कि संमार्ग पर चला जाए सत्प्रवृत्तियों को अपनाया जाए और अन्तः करण को सदभावों से हराभरा पूरा रखा जाए। अपने को सम्भालने पाप का पूरा रूप देखने अर्थात् समझने का लेखा जोखा एक अनोखा विवरण है। उपासना का समुचित प्रतिफल प्राप्त करने के लिए आत्मशोधन की

प्रक्रिया पूरी होनी ही चाहिए गुण कर्म को सुधारा जाए। पाप को पाप माना जाए जाना जाए समझा जाए पिछले जमा हुए कूड़े करकट को उठा मार फैंका जाए। शरीर और मन की यह व्यवस्था एक ही सिद्धांत पर निर्भर है। आयुर्वेद में काया को शोधने का विधान वमन विवेचन इत्यादि वर्णन है। आत्म शोधन के लिए भी प्रतिज्ञा आश्वासन पूर्वकृतकर्मों के लिये अफसोस अत्यन्त आवश्यक है जो जीवन को एक लड़ी मानते हैं वह इस जन्म से दूसरे जन्म तथा पूर्व जन्म का ताना बाना विचार में ले आने को शृंखला बनाते हैं। प्रायश्चित विधानों के अगणित उल्लेख कथा पुराणों में भरे पड़े हैं। शङ्ख लिखित दो भाई थे एक ने दूसरे के बागीचे से विना पूछे फल खा लिये। इसे चोरी मान अपने राजा के यहाँ अपने आग्रह पूर्वक दण्ड पाने का अनुरोध किया। विल्व मंगल ने कुदृष्टि रखने वाली आंखों को ही नष्ट कर लिया इस पर वे सूरदास बने। धृतराष्ट्र और गांधारी ने अपनी यह भूल स्वीकार की कि उसने अपने पुत्रों को अनीति से रोकने में आवश्यक कड़ाई नहीं बरती थी जिससे महाभारत का महाविनाश हुआ दोनों ने यह स्वीकारते मरण पर्यन्त बनों में तपस्या करते रहे। पांडवों ने जूआ खेलने इत्यादि दोषों के कारण अन्ततः हिमालय की कठोर शीत में प्राण त्यागने का रास्ता अख्तयार किया भीष्म शर शैय्या पर पड़े थे मृत्यु सामने थी पर उनका यह प्रयत्न कि मृत्यु के सन्मुख अपने कष्टों के उपलक्ष अनीति समर्थन का प्रायश्चित किया। यही शोधन था जब इस अवस्था में वह अमूल्य विचार लोक कल्याण में प्रस्तुत कर सके। बाल्मीकि पहले डाकू थे पीछे ईश्वर भक्ति के मार्ग पर पहुंच गये। इस परिवर्तन वेला में पापों को धो डालने का सिलसिला बड़ा विचित्र निकला। वर्णन तो इतना भी है कि जब वह साधना में अविचल होके बैठ गये उनके शरीर पर दीमक ने जाला बुन डाला ब्रह्माजी ने आखिर आकर दीमक छुड़ाई और पाप मुक्ति का वरदान दिया इसी घटना के नाम पर उनका नाम बाल्मीकि पड़ा संस्कृत में दीमक को बाल्मीकि

कहते हैं। सुकन्या व च्यवनऋषि की कथा, अंगुलिमार बुद्ध भगवान का खेल अम्बपाली व बुद्ध का वृत्तान्त, पिंगला वैश्या का पाप त्याग अशोक जिसे चण्ड अर्थात् क्रोधी कहा जाता था जिसने अपने यौवन काल में अनेक क्रूर कुकर्म किए थे जिस सूची से विमुक्त होने के लिए जीवन मोड़ ले बैठे, समस्त राज्य सम्पदा धर्म प्रचार में लगा दी। क्या सुन्दर व्यवस्था थी उन महान आत्माओं की, अपराध को अपराध मानकर जन सम्मपर्क में भी अपने को दण्ड का पात्र कह डालना सच्ची प्रभु भक्ति के उपहार रूप भी दृष्टान्तों की कमी नहीं। कमी है हमारे गांठ बांधने की जब पाप को पाप मान लिया आत्मोन्नति का प्रतीक बना लिया सफाई की सफाई, ऊंचाई की ऊंचाई चढाई की चढ़ाई कितनी सुन्दर रूप रेखा बना लेना है।

मकानों वाले सर्वदा अपने भवनों में सीढ़ी पिछले भाग से चढ़ाया करते हैं यह क्रम व सिद्धान्त सबको प्रिय रहा। इसी अधार पर हमारे शरीर में भी आत्मोत्सर्ग की सीढ़ी पीछे से चढ़ाई जाती है अर्थात् मेरुदण्ड से Spinal Card से रीढ की हड्डी से हमारे यहां भी सात पौढ़िएं, सीढ़ियां, कदम, लोक पिछले हिस्से में प्रगति का प्रकरण लेती है। योग विद्या में साधनों का हिसाब किताब भी यहां मिलता है जहाँ शरीर को लाभ वहाँ आध्यात्मिक क्षेत्र का सुन्दर अदभुत रंग ढंग समझने को प्राप्त होता है। आत्म हनन और ब्रह्म हनन के अपराधों से छुटकारा पाने के लिए प्रत्येक आत्मिक प्रगति के इच्छुक को अपनी दिशा धारा में आमूल चूल परिवर्तन करना होता है। कुण्डलिनी यहाँ से प्रस्थान लेती है अनेक कोश अन्नमय मनोमय कोष विज्ञानमय कोष सब इधर टकरते हैं। केवल देर है अपने संकल्प की अपने राह लेने की अपने चिन्तन की तथा कूद पड़ने की आत्म बोध तत्वबोध सदज्ञान की यह दो धारायें हिमालय से निकलनें वाली जगत विख्यात पुण्य नदियां हैं हर दिन नया जन्म हर रात नई मौत का सूत्र आत्म बोध तत्व बोध की साधनाओं का आयोजन पूरा करता है।

कितने भाग्यशाली हैं वह जिन्हें अपनी कमजोरियां नजर में आ जाती हैं और जो उन्हें हर हालत में दूर करने पर जुट जाते हैं, स्वर्ग होगा कि नहीं परन्तु मेरी समझ में बुरे से अच्छा बन जाने का प्रयास ही स्वर्ग आरोहण है, अपने ही युग में हमने महात्मा गाँधी के अनुभव देख लिए, एक नहीं अनेक, मानव कहां से कहां पहुंच सकता है यह अन्तरिक्ष यात्रा विचित्र भी है विकट भी है, अकल्पनीय भी है, इन्हीं दिनों महात्मा गांधी के निजी ब्रह्मचर्य परीक्षण प्रयास प्रैस में पढ़ने को मिल रहे हैं जो भूत में प्रकाश से परे थे, मुझे इनके मूल्याँकन में कुछ नहीं कहना, मेरा तो सिर झुकता है किसी व्यक्ति की इस प्रचण्ड संकल्प पर कि अपने को शोध लेना कितना महान कार्य है। मैं तो स्वयं यह मानता हूं कि संसार भगवान ने रचा इसलिए कि प्रत्येक अपने अपने को उन्नत कर ले शोध ले। आत्मा कार्य क्षेत्र में स्वतन्त्र है "जो चाहे जिसका जी चाहे" व्यापक सत्ता लेता है। बात केवल प्रत्येक को अपने स्वरूप भाँपने की है। शोक है तो केवल यही कि अपने को नजर अन्दाज करके हम सारी सृष्टि की सम्भाल कर लेते हैं एक कवि ने बड़ी सुन्दरता से मानवता की इस कमजोरी का वर्णन किया है जो वास्तव में है दरुस्त ही

"इसको जाना उसको जाना अपने को नहीं जाना

फुरसत मिली नहीं अपने को देखने की, जिन्दगी को आदत पड़ गई सपने देखने की

जीने की ख्वाहिश भर गई जिन्दगी, सपने तो सिर्फ बने जीने का बहाना

अपने से आपको छिपायें कहाँ तक आग को राख से दबायें कहां तक

कई बार सोचा इस राख को कुरेद कर, अन्दर की आग को बाहर ले आना

अन्दर की आग से जलते रहे हम ऊपर की बर्फ से गलते रहे हम
किस की आँख से पहचाने अपने को, जब अपनी ही आंख
ने न अपने को जाना"

मन: शास्त्रियों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि व्यक्तित्व के प्राय: सभी क्षेत्र मानसिक स्थिति में प्रभावित होते हैं पर अब यह माना गया है कि बुद्धिमता से अधिक महत्वपूर्ण हैं आदतें—कितने ही दर्द एवं रोग ऐसे हैं जिनकी जड़ शरीर में नहीं वरन मन में होती है। शरीर को मशीन और मन को बिजली कहा जाए तो गलती न होगी, यौवन कोई अवधि नहीं वरन एक मानसिक स्थिति है उसकी परख रक्त के उभार के आधार पर नहीं, इच्छा कल्पना एवं भावना के अधार पर ही की जानी चाहिए–जोवन की प्रौढ़ता अन्त: स्रोतों की ताजगी के साथ जुड़ी हुई रहती है, एक अवधि बीत जाने पर चमड़ी पर झुरिया तो पड़ेंगी हो पर इससे क्या फर्क पड़ सकता है। वास्तव में बुढ़ापा दीखता ही तब है जब मन हार बैठता है थका निढाल और निराश हो लेता है—अन्तत: मन की हार तब होती है जब कुसंस्कार बुरी आदतें बुरे विचार घेरा डाल लेते हैं और यही हमारी भेंटों का सार है–निर्दोष हो जाना बहुत पुण्य कार्य है सोना हो जाना बहुत सुन्दर अवस्था है मन का स्वच्छखरा-निखरा हो जाना भी एक बड़ा सौभाग्य है–यही राज-ए- जिन्दगी है यही सारी सृष्टि का केवल संदेश है, तकलीफ कोई करे तो अपने अध्ययन की। मन में क्षोभ उठते हैं बे मतलब के यूं ही हमें खराब करने आते हैं रुग्ण मन उभार लेता है हमारा वातावरण अस्त-व्यस्त करता है यही उथल पुथल हमारी अशान्ति का कारण बनती है, हमें हीन और दीन बनाती है, आखिर प्रायश्चित करना भी यह समर्थन करता है कि मैल से धुल जाना एक बड़ी करामात है।

——

: १५ :
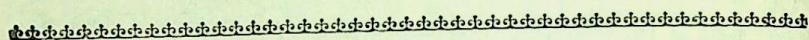
पन्द्रहवीं भेंट

एक बार एक नवयुवक एक सन्त के पास पहुंचा यह शिकायत करने कि वह क्रोधी स्वभाव वाला हो गया है उसे इस रोग से बचाया जाए—सन्त ने पूछा कि नवयुवक में बसा क्रोध दिखाया जाए, नवयुवक ने उस रोग के आक्रमण का वर्णन किया जिस पर सन्त जी बोले 'जो कभी कभी आता है वह स्वभाव नहीं हो सकता अर्थात उसका कभी आना भी सतत प्रयास से रोका भी जा सकता है, जिसका यह भी अर्थ हुआ कि अपनी भूल से हम भय क्रोध लोभ मोह के जाल में फंस जाते हैं और चाहें तो इनसे छुटकारा भी ले सकते हैं, जिसके लिए ध्यान अभ्यास की आवश्यकता है, ध्यान कठिन नहीं पर ध्यान में उतरना कठिन है इसलिए नहीं कि ध्यान कठिन है पर इसलिए कि हम जटिल है। एक आदमी नदी किनारे खड़ा है तैरना कठिन नहीं पर डर के मारे वह नीचे पैर ही नहीं रखता डर के मारे पानी में उतरता ही नहीं वही डर कठिनाई पैदा कर रहा है यदि इस आदमी को पानी में फैंक दिया जाए तो वह हाथ पैर मारेगा अपने को बचा लेने के साधन बरतेगा, अनजान आदमी के हाथ पैर मारने तथा तैरने की शैली में बहुत फर्क नहीं थोड़ी सी व्यवस्था का फर्क है क्योंकि उसके तैरने की संगति में फर्क है, आश्वासन निडरता की कमी है जब कोई सीख जाता है तैरना

उसे यह संतोष हो जाता है कि वह डूबेगा नहीं क्योंकि उसने विधि-वत हाथ पैर मारने सीख लिए हैं और वह अपने अन्दर से भय को दूर कर बैठा है हम दूसरों को देखकर संतोष लेते हैं कि हम भी दूसरों की तरह पार हो सकते हैं अर्थात तैरना सिखाने वाला हमारे भय को मिटाता आश्वासन देता है इसी तरह गुरु व सन्त हमें निज दुर्गुणों को हटाने का आश्वासन देते हैं उनसे अभय का दान व प्रकाश देते हैं अर्थात सफलता को कुंजी देते हैं कि पतित होना दीन होना हमारा धर्म नहीं हमारा ध्येय तो निष्पाप होना स्वच्छ होना तथा उत्साहित होना है हम तैरने से पहले छलांग लगाने का साहस लेते हैं यही पहला कदम हमारी सफलता का सूचक होता है, मुश्किल है तो यही है कि लोग पवित्र होने के लिए पापों के जाल से छलाँग ही नहीं लेते जब तैरना एक बार आ जाए तो कभी भूलता ही नहीं, और चीजें भूल जाती है पर तैरना याद रहता है क्योंकि तैरना हमारा स्वभाव हुआ होता है—कोई तीस साल तक न तैरने पर तैरना भूलेगा नहीं तीस साल तक माँ को न देखो मां भूलेगी नहीं तीस साल तक निज भाषा न बोलो भाषा भूलेगी नहीं, कुशल तैराक नदी पर लेट ही जाता है नदी उसे सम्भालती है क्योंकि वह इस विश्वास से ओत प्रोत होता है कि नदी डुबोने वाली नहीं तैराने वाली है-यह विचारधारा हम अपने जीवन पथ में देख सकते हैं धार्मिक आदमी डिगमगाता नहीं संतुष्ट ईश्वर विश्वासी होकर विचरता है इसका अर्थ यह भी हुआ कि हमने अपने स्वभाव स्वयं बिगाड़ रखे हैं मुर्दे को नदी में डुबाना मुश्किल है क्योंकि मुर्दे को भयभीत नहीं किया जा सकता इसी तरह साधना पथ पर प्रगति ही स्वभाव बन जाती है नदी कितनी गहरी हो मुर्दे को हाथ नहीं लगाती क्योंकि मुर्दा भय रहित होता है हम भी खामखाह भय से त्रसित हो निकम्मे बन रहे हैं, ध्यान से सरल कुछ भी नहीं क्योंकि वह हमारे स्वभाव की चीज

है, सारी साधना हमारी जटलता काटने की है हम जटिल हुए हैं अपने ही कारण कोशिश कर करके जटिलता से विरुद्ध सरलता से चलेंगे ही तो यात्रा आसान हो जाएगी हमारी हालत तो ऐसी है जैसे कोई आदमी कमर झुकाकर चलने का अभ्यास कर ले कमर झुका-चलने से फिर उसका सीधा चल सकना दुष्कर होगा जन्मों के हमारे विचार टेढ़े झुककर चलने के अब हमारी कमर सीधी होने नहीं देते। सुना है एक गाँव में एक नवयुवक था उसके राज्य में युद्ध की तैयारी के हेतु स्वस्थ आदमी पकड़े जा रहे थे, अपने को इस पकड़ धकड़ से बचाने की खातिर उसने झुककर चलना शुरू कर दिया इससे उसकी कमर तिरछी होने लगी पकड़ाव से तो वह बच गया पर अपनी शक्ल बिगाड़ बैठा, ऐसे ही हम लोग झूठे बहाने बनाकर सदा के लिए अपने को मानसिक रोग लगा लेते हैं पद की तलाश में चिन्ता आवश्यक व स्वभाविक है हम पदों के शौकीन यह सौदे लगा लेने के आदी आपनी आदतें बिगाड़ लेते हैं उस समय दुर्गुण हमें मीठे लगते हैं पर अन्त उनका महंगा बनता है लोग तो राक फेलर होना चाहते हैं और भिखमंगे की तरह शान से सोना भी चाहते हैं यह दोनों बातें एक समय नहीं हो सकतीं, भिखमंगे को कुछ तो बचने देना हैं उसे कम अज कम नींद तो सुगमता से मिल जाती है वह शान्ति से सो तो लेता है क्योंकि उसके पास खाने को कुछ नहीं रहता, मनुष्य यही भूल करना चाहता है कि चिन्ता भी न रहे पद भी मिले धन भी मिले प्रतिष्ठा भी हो, यह सौदे असम्भव वाले हैं चिन्ता जाएगी तो महत्वाकांक्षा जाएगी तब ध्यान उत्पन्न होगा। प्राय: बहुत लोग ध्यान के लिए उत्सुक होते हैं पर गलत कारणों से, लोगों का विचार ऐसा है कि इस जगत की सम्भाल में भी उनका लाभ हो परलोक में भी लाभ हो इसी तरह धर्म भी मिलेगा धन भी मिलेगा यह सौदा गलत तौर से समझा जा रहा है।

अमेरिका में किसी से कहें कि सिर्फ धर्म मिलेगा तो वह उत्सुक नहीं होता क्योंकि न ही उन्हें धर्म के दाम मालूम हैं और न ही जांच-धर्म के साथ शान्ति सम्बन्धित है धन के साथ नहीं। चिन्ता का भी कुछ लाभ है इसलिए लोग चिंतित हैं। हम चिंता छोड़ना चाहते हैं लाभ बचा लेना चाहते हैं यही जटिलता है ध्यान सरल है यदि हममें सरलता का समावेश हो। सरलता का अर्थ है विपरीत दिशाओं को यात्रा का त्याग। विपरीत दिशा जटिलता लाएगी। एक बैल-गाड़ी के दोनों ओर बैल लग रहे हों दोनों अपनी-अपनी ओर खींचगे अवस्था बिगड़ेगी। एक तरफ धन है एक तरफ़ ध्यान, मानव दोनों चाहता है जब नहीं मिलते दोनों, तो गुरु लोगों के, संतों का आशी-र्वाद मांगता है फिर सौदाबाजी बिगड़ती है। एक नई समस्या बन जाती है विपरीत लक्ष्य एक साथ नहीं हो सकते यह समझ लेने की बात है सरलता का अर्थ है लयबद्ध हो जाना, जब ऐसी अवस्था प्राप्त हो जाए तो शायद ध्यान की आवश्यकता ही न रहे क्योंकि सरल व्यक्ति के जीवन में ध्यान के फूल लगना शुरू हो जाते हैं। सरलता में संगति होती है आंतरिक संगीत होता है अर्थात् एक तरफ का झुकाव व बहाव तब जीवन ऊर्जा एक तीर की तरह चलती है, सत्य को जानना सरल है, जीना सरल है और जीकर ही बताना आसान है अन्यथा सत्य बताया नहीं जा सकता। यह सब अवस्थाएं प्राप्त होती हैं निर्दोष होने से दोष रहित व्यवहार से। सच तो यह है कि कोई दूसरा हमारी हानि करता, हमसे धोखा करता हम उस पर केस चला सकते पर गजब यह है कि हम धोखा करते हैं अपने से, अपने नकाब आप नहीं बदलते अपने नक्शे आप टेढ़े करते हैं फिर कोई केस करे तो किस पर। माजरा ही सारा अपने जंजाल डालने का है। स्वभाव से सत और चित ने आनन्द को धक्का दे रखा है। कोई दोष हो गया हो गया उसे स्वीकार न करके हालात और दलीलों से उसे सही कह डालने का साहस ही हमारा पहलू बिगाड़ता है। कौन ऐसा वीर है जो भगवान को अपना हितैषी जानकर उसकी सहायता से अपने दुर्गुण दूर करता है यही हमारे

अभीष्ट मन्त्र देवता का सार है। यदि जिज्ञासु अपने दोषों की सूची बना ले। एक-एक करके प्रभु साक्षी हो प्रभु प्रसाद से अनुकम्पा से एक-एक को सतत प्रयत्न मार भगाने में जुट जाए चाहे एक-एक दोष के लिए एक-एक साल भी लग जाए तो इस तरह अपनी सूची को समाप्त कर सकता है तथा अपने लक्ष्य की समीपता ले सकता है। यह प्रकाशपूर्ण अपना अंतरिक्ष सबसे सौन्दर्यपूर्ण हो सकता है तथा जीवन पथ का एक पड़ाव ले सकता है। ऐसे व्यक्ति को ध्यान भी आ सम्भालेगा एकाग्रता भी आ घेरेगी सहजता भी चूमेगी तथा प्रगति भी प्रतिष्ठा देवेगी। यह विचित्र सौदागरी अपनी सम्भाल का माल है जिसे हम अवश्य लेने वाले बनें। पाप एक घाव है। घाव शरीर पर होता है। पाप भी आत्मा की हत्या करता है। जैसे घाव को स्वस्थ करने के लिए नियमित उपचार होता है ऐसे ही पाप के प्रतीकार से सुचिंतित व्यवस्था का होना अत्यन्त आवश्यक है। घाव भरने में समय लेता है पाप के प्रभाव को दूर करने के लिए समय ऐन जरूरी है वरन् शीघ्रता से हाथ लगाया पाप फिर अपने फल से दृष्टि में आएगा और सताएगा। यह सिलसिया बड़े सोच-विचार का है, सूझ-बूझ का है। वेद में एक मंत्र आता है कि पाप से बचा जा सकता है। नया जीवन भी लिया जा सकता है। मंत्र यूं है—

उत देवा, अवहितं देवा उन्नयथा पुनः
उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः। ऋ०

हे देवो, तुम्हारे इस संसार में कोई भी मनुष्य सदा के लिए पतित नहीं हो जाता, कोई भी मनुष्य सदा के लिए मर भी नहीं जाता। पतित से पतित मनुष्य इस संसार में फिर जब चाहे तब उन्नत हो सकता है। मरे हुए मनुष्य को भी हे देवो तुम फिर जिला देते हो। पापी से पापी पुरुष भी तुम्हारा सहारा पा कर फिर पूरा पुण्यात्मा हो जाता है। प्रायः पतित हो कर हम लोग निराश हो जाया करते हैं समझने लगते हैं कि अब तो हमारा उद्धार किसी तरह नहीं हो सकता। परन्तु हे देवो तुम तो देव

हो। तुम बड़े भारी ज्ञान प्रकाश और शक्ति से युक्त हो। तुम्हारे रहते हुए हम कैसे फिर उन्नत न हो सकेंगे। हे करुणा प्रायण मेरे गुरुजनो! तुम देव हो तुम्हारी कृपा में बड़ी अद्भुत शक्ति है। तुमने न जाने कितने पतितों को उबारा है, न जाने कितने डूबतों को बचाया है। प्राण निकलते-निकलते आ बचाया है। जघन्य पापियों को अन्तिम क्षण में पुण्य जीवन की तरफ फेर लिया है। मर कर तो सभी जीव पुनर्जन्म पाते हैं किन्तु असल में मरना तो पापी होना ही है यदि अमर आत्मा किसी तरह मरता है तो वह पाप अपराध करने से ही मरता है परन्तु हे देवो तुम इस अत्यन्त विकट आत्मिक मौत से भी उबार लेने वाले हो फिर पुण्य जीवन का संचार कर लेने वाले हो। तो हम तुम्हारे होते क्यों निराश होवें। हतोत्साह हो कर क्यों हाथ-पैर मारना छोड़ देवें। क्यों न तुम्हारी जीवनदायी शरण का आश्रय लेवें। हे देवो हमें पूरा-पूरा विश्वास है कि तुम शरण पड़े हम पतितों को अवश्य ही ऊपर उठा लोगे। हम मरे हुओं को अवश्य ही फिर जीवित कर दोगे (साभार वैदिक विनय) अनादि और अनन्त दिव्य पिता ने अपनी शुभ वाणी द्वारा क्या ही सुन्दर आश्वासन, संदेश, उत्साहवर्द्धक सूत्र बताया है। गलतियां हुआ करती हैं पर उबार भी हुआ करते हैं। इसलिए भी दोषों को दूर करते जाना, नया व्रत लेते जाना मानव के योग्य है, प्रगति की ओर एक नया कदम है। भगवान की कृपा से हम इस आदरणीय मन्त्र के शुभ संकल्प में घुल जाने का निर्णय ले कर अपना भाग्य आप सम्भालने में अग्रसर होवें। इसी शुभ कामना के साथ अपने विचारों को यहां विराम देता हूं।

—: ० :—